मास्टर ऑफ आर्ट्स (संस्कृत)

Master of Arts (Sanskrit)

चतुर्थ सेमेस्टर - एम0ए0एस0एल – 609

नाटक एवं नाटिका : भाग-02

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139

Toll Free : 1800 180 4025
Operator : 05946-286000
Admissions : 05946-286002
Book Distribution Unit : 05946-286001
Exam Section : 05946-286022
Fax : 05946-264232
Website : http://uou.ac.in

पाठ्यक्रम समिति

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
प्रोफे0 ब्रजेश कुमार पाण्डेय,
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन संस्थान,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
प्रोफे0 रमाकान्त पाण्डेय,
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान जयपुर परिसर,
राजस्थान
प्रोफे0 कौस्तुभानन्द पाण्डेय,
संस्कृत विभाग, अल्मोड़ा परिसर,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल-(संयोजक)
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 देवेश कुमार मिश्र,
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 नीरज कुमार जोशी,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम समन्वयक एवं सम्पादन

डॉ0 नीरज कुमार जोशी,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	**खण्ड एवं इकाई संख्या**
प्रो० रविनाथ मिश्र,	
पूर्व आचार्य एवम् अध्यक्ष संस्कृत विभाग	**खण्ड 1 (इकाई** 1 **से 4)**
दीनदयाल उपाध्याय , गोरखपुर विश्वविद्यालय	**खण्ड 2 (इकाई** 1 **से 5)**
57, **मिश्र भवन दाउदपुर, गोरखपुर**	

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय **प्रकाशन वर्ष :** 2022
पुस्तक का शीर्षक - नाटक एवं नाटिका MASL-609
प्रकाशक: (उ 0 मु 0 वि 0 वि 0) -263139 **ISBN NO: 978-93-84632-28-1**
मुद्रक:

नोट:- यह पुस्तक छात्र हित में शीघ्रता के कारण प्रकाशित की गयी है। संशोधित व परिवर्द्धित संस्करण का प्रकाशन पाठ्यक्रम के पूर्ण लेखन के पश्चात् किया जायेगा । इसका उपयोग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना अन्यत्र किसी भी रूप में नहीं किया जा सकता।

अनुक्रम

खण्ड -01 मृच्छकटिकम् व्याख्या पृष्ठ संख्या 01-03

इकाई. 1 मृच्छकटिकम् पंचम अंक श्लोक संख्या 1 से 25 मूल पाठ व्याख्या **04-21**

इकाई. 2 मृच्छकटिकम् पंचम अंक श्लोक संख्या 26 से 52 मूल पाठ, एवं व्याख्या **22-36**

इकाई. 3 मृच्छकटिकम् षष्ठ अंक श्लोक संख्या 1 से 14 मूल पाठ, एवं व्याख्या **37-50**

इकाई. 4 मृच्छकटिकम् षष्ठ अंक श्लोक संख्या 15 से 27 मूल पाठ, एवं व्याख्या **51-61**

खण्ड -02 मृच्छकटिकम् व्याख्या एवं रत्नावली पृष्ठ संख्या 62

इकाई. 1 मृच्छकटिकम् सप्तम अंक मूल पाठ एवं व्याख्या **63-73**

इकाई. 2 मृच्छकटिकम् सप्तम अंक श्लोक संख्या 1 से 24 तक मूल पाठ, एवं व्याख्या **74-96**

इकाई. 3 मृच्छकटिकम् सप्तम अंक श्लोक संख्या 25 से 47 तक मूल पाठ, एवं व्याख्या **97-114**

इकाई. 4 रत्नावली प्रथम अंक संवाद एवं व्याख्या **115-134**

इकाई. 5 रत्नावली द्वितीय अंक संवाद एवं व्याख्या **135-159**

चतुर्थ सेमेस्टर/ SEMESTER-IV

खण्ड - प्रथम

मृच्छकटिकम्

इकाई -1

मृच्छकटिकम् पंचम अंक श्लोक संख्या 1 से 25 तक मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 श्लोक संख्या 1 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.3.1 श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.3.2 श्लोक संख्या 11 से 18 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.3.3 श्लोल संख्या 19 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.4 सारांश

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भग्रन्थ

1.8 निबन्धात्माक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

चतुर्थ अंक के अन्त में वसन्तसेना के द्वारा चेटी से हार माँगने के कथन की समाप्ति के पश्चात् आसन पर बैठे हुए चारूदत्त का पंचम् अंक के प्रारम्भ में प्रवेश होता है। उसी के विभिन्न स्वरूप के वर्णन से इस इकाई का प्रारम्भ होता है। मृच्छकटिकम् के अध्ययन की पंचम् अंक से संबन्धित यह प्रथम इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप चारूदत्त और विदूषक के, चेट एवं विदूषक प्रमुख सम्वादों का अध्ययन करेगें।

चारूदत्त के आरम्भिक कथन में विरह वेदना तथा मेघ के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन किया गया है। विदूषक के कथनों में वसन्तसेना की लालच तथा उदार न होने की बात कही गयी है। चारूदत्त वेश्याओं की निन्दा नही करना चाहता किन्तु इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार की बातें भी पात्रों के सम्वादो में परिलक्षित हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पंचम अंक के श्लोक संख्या 1से 25 तक के वैशिष्ट्य को बता सकेंगे।

1. 2 उद्देश्य

पंचम् अंक के प्रारम्भिक अंश के वर्णन से संबन्धित इस इकाई के अध्ययन के बाद आप—

- ❖ चारूदत्त विरह वेदना का वर्णन कितनी गहराई से कर रहा है यह जान सकेंगे।
- ❖ मेघ की छटा का वर्णन नितान्त साहित्यक कथनों को समझ सकेंगे।
- ❖ दुर्योधन का वर्णन किस प्रकार किया गया यह जान सकेंगे।
- ❖ वर्षा काल के मनोहर वर्णन से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ वेश्याओं की निन्दा क्यों नहीं करनी चाहिए इस विषय से अवगत हो सकेंगे।

1. 3 श्लोक संख्या 1 से 25तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1 .3. 1श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

तत :प्रविशति आसनस्थ :सोत्कण्ठश्चयदत्त:।

चारूदत्त ऊद्ध्मवलोक्य (उन्नमत्यकालंदुर्दिनम्। यदेतत -

आलोकितं गृहशिखण्डिभिरूत्लापै-

हैसैयियासुभिरपाकृतमुन्मनस्कै :।

आकालिकं सपदि दुर्दिनमन्तरीक्ष-

मुत्कण्ठितस्य हृदयञ्च समं रूणद्धि ।।1।।

अपि च -

मेघो जलार्द्रमहिषोदरभृङ्गनीलो

विद्युत्प्रभा-रचित-पीत-पटोत्तरीय :।

आभाति संहतबलाक-गृहीतशङ्ख:

खं केशवोऽपर इवाक्रमितं प्रवृत्त:

अन्वय- :उत्कलापै:, गृहशिखण्डिभि :,आलोकितम्, यियासुभि:, उन्मनस्कै:, हंसै:, अपाकृतम् आकालिकम्, दुर्दिनम्, सपदि, अन्तरिक्षम् उत्कण्ठितस्य, हृदयम्, च समम् रूणद्धि। ।।1।।

अन्वय -:जलार्द्रमहिषोदरभृङ्गनील:, विद्युत्प्रभारचितपीतपटोत्तरीय:, संहतबलाकगृहीतशङ्ख:, अपर:, केशव:, इव, खम् आक्रमितुम्, प्रवृत्त:, मेघ:, आभाति ।।।2।।

हिन्दी अनुवाद - इसके बाद आसन पर बैठे हुए उत्कण्ठितचारूदत्त का प्रवेश

चारूदत्त -ऊपर की ओर देखकर(यह असमय में ही काली घटाऍं उमड़ रही हैं। ऊपर की ओर पॉखें फैलायें जिसे पालतु मयूरों ने देखा, गमनोन्मुख खिन्न मन हंसों ने जिसे उपेक्षा की दृष्टि से देखा, वह अकालदुर्दिन आकाश और विरही के हृदय को एक साथ ढँक रहा है ।।1।।

और भी -पानी से भीगे पेट वाले भैसे और काले भौरों की तरह नीले मेघ, विद्युत्कान्ति से निर्मित पीताम्बर धारण कर साथ में बकपंक्तिरूपी शंख धारण कर भगवान् विष्णु की तरह सम्पूर्ण आकाश को घेर रहा है ।2।

अपि च -

केशवगात्रश्याम:, कुटिल –बबलाकाबली-रचित-शङ्ख:।

विद्युद्गुणकौशेयश्चक्रधर इवोन्नतो मेघ :।।3।।

एता निषिक्तरजतद्रवसन्निकाशा धारा जवेन पतिता जलदोदरेभ्य :।

विद्युत्प्रदीपशिखया क्षणनष्टदृष्टाश्छिन्ना इवाम्बरपटस्य दशा :पतन्ति ।।4।।

अन्वय :केशवगात्रश्याम:, कुटिलंबलाकावलीरचितशङ्,ख , विद्युद्गुणकौशेय :मेघ :चक्रधर:, इव,उन्नत :।।3।।

अन्वय :निषिक्तरजद्रवसन्निकाशा:, जलदोदरेभ्य :, पतिता :एता, धारा:, विद्युत्प्रदीपशिखया, क्षणनष्टदृष्टा, अम्बरपटस्य छिन्ना:, दशा:, इव , जवेन, पतन्ति। **।।4।।**

और भी – भगवान् श्रीकृष्ण की मूर्तिकी तरह श्यामवर्ण, वक्रबकपंकित से निर्मित शंख तथा बिजली के सूत्र से निर्मित पीताम्बर धारण कर यह मेघ सम्पूर्ण आकाश के आयाम को घेर रहा है ।।3।।

चॉंदी के घोल की तरह बादल के पेट से जल की धारा बड़े वेग से गिर रही है, बिजलीरूपी दीपशिखा के द्वारा कभर तो ये दृष्टिगोचर होती है और कभी अदृश्य हो जाती है ये जलधाराऍं ऐसी प्रतीत होती है मनो आकाश रूपी फटे कपड़े से धागें टूट टूटकर गिर रहे हों **।।4।।**

संसक्तैरिव चक्रवाकमिथुनैहैसै :प्रडीनैरिव
व्यविद्धैरिव मीनचक्रमकरैर्हम्यैंरिव प्रोच्छितै:।
तैस्तैराकृतिविस्तरैरनुगतैर्मेघै :समभ्युन्नतै:
पत्रच्छेद्यमिवेह भाति गगनं विश्लेषितैर्वायुना।।5।।
एतत्तद्भुतराष्ट्रचक्रसदृशं मेघान्धकारं नभो
हृष्टो गर्जति चातिदर्पितबलो दुर्योधने वा शिखी।
अक्षद्यूतजितो युधिष्ठिर इवाध्वानं गत :कोकिलो

हंसा :सम्प्रतिपाण्डवा इव वनादज्ञातचर्या गता:।।6।

विचिन्त्य (चिरं खलु कालो मैत्रेयस्य वसन्तसेनाया :सकाशं गतसय, नाद्यापि आगच्छति।

अन्वय :वायुना, विश्लेषितै:, संसक्तै:, चक्रवाकमिथुनै :इव, प्रडीनै:, हंसै:, इव, व्याविद्धै:, मीनचक्रमकरै:, इव, प्रोच्छ्रितै :हर्म्यै:, इव, तै:, तै:, आकृतिविसतरै :अनुगतै:, समभ्युन्नतै:, मेघै:, गगनम्, इह, पत्रच्छेद्यम् इव, भाति ।।5।।

अन्वय :सम्प्रति ,मेघान्धकारम् एतत् नभ:, तद्धृतराश्ट्रचक्रसदृशम्, हृष्ट:, अतिदर्पितबल:, दुर्योधन:, वा, शिख, गर्जन्ति, कोकिल:, अक्षद्यूतजित:, इव युधिष्ठिर:, अध्वानम्, गता :पाण्डवा:, इव, हंसा:, वनात, अज्ञातचर्याम् गता: ।।6।।

हिन्दी अनुवाद -परम्पर एक– दूसरे से मिले चकवा-चकई के जोड़े की तरह आकाश में उड़ते हंसो की तरह , समुद्र –मंथन की समय इधर-उधर फेंके गये मत्सयों एवं मगरोंकी तरह, ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओं की तरह, वायु-संचालित अनेक आकार वाले बादलों से चित्रपट की तरह आकाश सुशोभित हो रहा है ।।5।।

आगे के इस श्लोक में दुर्योधन के राज्य तथा वर्षाकाल का वर्णन एक साथ किया गया है असंयमित दुर्योधन के राज्य की तरह इस अकाल जलद से सम्पूर्ण आकाश अन्धकाराच्छन्न हो गया है। अतिदर्प के साथ दुर्योधन मेघपक्ष में मयूर (संतोष के साथ गरज रहे हैं। जुए में हारे युधिष्ठिर की तरह कोयल वनपथ की ओर बढ गई है। हंस भी पाण्डवों की तरह मानसरोवर की ओर अज्ञातवास में चले गये है ।।6।

कुछ सोचते हुए वसन्तसेना के पास मैत्रेय को गये बहुत देर हो रही है , अब तक लौटे नहीं।

विदूषक -:अहो गणिकाया लोभ :अदक्षिणता च, यतो न कथाऽपि कृता अन्या। अनादरेणैव अभणित्वा किमपि एवमेव गृहीता रत्नावली । एतावत्या ऋद्धया न तया अहं भणित:, आर्यमैत्रेय ! विश्वम्यवाम् मल्लकेन पानीयमपि पीत्वा गम्यतामिर्ति।तत् मा तावत् दास्या : पुत्र्यागणिकाया मुखमपि प्रेक्षिष्ये । सुष्ठु खलु उच्यते – 'अकन्दसमुत्थिता पद्मिनी, अवञ्चको बणिक् अचौर :सुवर्णकार:, अकलहो ग्रामसमागम:, अलुब्धा गणिका' इति ,दुष्करमेते सम्भाव्यते। तत् प्रियवयस्यं गत्वा अस्मात् गणिकाप्रसङ्गात् निवर्त्तयामि। कथं प्रियवयस्यो वृक्षवाटिकायामुपविष्टस्तिष्ठति; तद्यावदुपसर्पामि। स्वस्ति भवेत, वर्द्धतां भवान्।

विदूषक -आकर अरे, वेश्या वसन्तसेना का लालच और उसकी अनुदारता तो देखो, जेवरके सिवा उसने कोई दूसरी बात नहीं की । बिना कुछ बोले अनादरपूर्वक उसने रत्नहार ले लिया । इतने अपार वैभव के रहते हुए भी उसने एक बार भी नहीं कहा -आर्य मैत्रेय ,थोड़ा विश्राम कर लो या एक गिलास पानी ही पीकर जाओ । अत: ऐसी नीच वेश्या का तो मुँह भी नहीं देखना चाहिए। दु:खी होकर (ठीक ही कहा है -बिना झगड़े की ग्रामपंचायत, लोभरिहत वेश्या –इनका मिलना मुश्किल है, तो चलकर अपने प्रियमित्र चारूदत्त को सर्वप्रथम इस वेश्या के संसर्ग से अलग हटाता हूँ। घूमकर और देखकर (क्या मित्रवरउद्यान में बैठे हैं, तो क्यों न उनके पास ही चलूँ। समीप जाकर(आपका कल्याण हो, आपकी उन्नति हो।

चारूदत्त - :विलोक्य (अये! सुहृन्मे मैत्रेय :प्राप्त :। वयस्य! स्वागतम्, आस्यताम्।

चारूदत्त- देखकर (अरे, मेरे मित्र मैत्रेय तो आ गए। मित्र स्वागत है। आओ, बैठो।

विदूषक -:उपविष्टोऽस्मि।

विदूषक -मित्र बैठ गया हूँ ।

चारूदत्त -:वयस्य! कथय तत् कार्यम्।

चारूदत्त - मित्र, जिस काम के लिए तुम गये थे, उसके बारे में बतलाओ।

विदूषक -:तत् खलु कार्य विनष्टम्।

विदूषक -भाई ,वह काम तो बिगड़ गया।

चारूदत्त -:किं तया न गृहीता रत्नावली ?

चारूदत्त -क्या उसने रत्नहार स्वीकार नहीं किया?

विदूषक -:कुत :अस्माकमेतावद् भागधेयम्? नव नलिनकोमलमञ्जलिं मस्तके कृता प्रतीष्टा।

विदूषक -नहीं भाई , हम लोगों का इतना बड़ा भाग्य कहॉ ? नये कमल की तरह कोमल हथेलियों को माथे से लगाकर रत्नहार स्वीकार कर लिया।

चारूदत्त -:तत् किं ब्रवीषि विनष्टमिति ?

चारूदत्त -तो फिर ऐसा क्यों कहते हो कि काम बिगड़ गया ?

विदूषक -:भो कधं न विनष्टम् ? यत् अभुक्तस्य अपीतस्य चोरैरपहृतसय अल्पमूल्यस्य सुवर्णभाण्डकसय कारणात् चतु:समुद्रसारभूता रत्नमाला हारिता ।

विदूषक -अजी, बिगड़ा क्यों नहीं? जो बिना खाये-पीये गये, चोरों द्वारा चुराये गये, कम कीमत वाले सोने के आभूषणों के बदले चारों समुद्र के सारभूत कीमती रत्नाहार खो दिया।

चारूदत्त - :वयस्य! मैवम्।

चारूदत्त -मित्र, ऐसी बात मत कहो?

यं समालम्ब्य विश्वासं न्यासोऽस्मातसु तया कृत :।

तसयैतन्महतो मूल्यं प्रत्ययस्यैव दीयते ।। 7।।

अन्वय :तया, यम्, विश्वासम्, समालम्ब्य , अस्मासु, न्यास:, कृत:, तस्य, महत:, प्रत्ययस्य , एव, एतत्, मूल्यम् प्रदीयते।

हिन्दी अनुवाद-उसने जिस विश्वास के साथ हमारे पास धरोहर रक्खा था, उस विश्वास की यह कीमत चुकायी गई है, न कि स्वर्णाभूषणों की ।।7।

विदूषक :भो वयस्य! एतदपि में द्वितीयं सन्तापकारणम्, यत् सखीजनदत्त-संज्ञयापटान्तापवारितं मुखं कृत्वा अहमुपहसित:। तदहं ब्राह्मणो भूत्वा इदानी भवन्तं शीर्षेण पतित्वा विज्ञापयामि निवर्त्यतामात्मा अस्मात् बहुप्रत्यवायाद् गणिकाप्रसङ्गत्। गणिका, हस्ती कायस्थ:, भिक्षु:, चाट:, रासभश्च यत्रैते निवसन्त, तत्र दुष्टा अपि न जायन्ते।

विदूषक -:हे मेरे मित्र , हमारे दु:ख का दूसरा कारण यह भी है कि अपनी सखियों को इशारे से कुछ कहकर ताथा अपने ऑंचल से मुख ढँक कर उसने हमारी खिल्ली भी उड़ाई है।

इसलिए ब्राह्मण होने के बावजूद मैं तुम्हारे चरणों में माथा टेककर विनती करता हूँ -अति संकटमयी इस वेश्या की संगति से विमुख हो जाओं। वेश्या तो जूते में घूसे उस कंकरकी तरह है जो घूसने के बाद बडी मुश्किल से निकाले जा सकते हैं। हे मित्र, याद रक्खों – वेश्या, हाथी, कायस्थ, भिखारी, शठ और गधे जहॉ रहते हैं, वहॉ भले लोगों की बात क्या ,दुष्ट भी नहीं फटकते।

चारूदत्त -: वयस्य! अलमिदानीं सर्व परिवादमुक्त्वा:, अवस्थयैवास्मि निवारित:। पश्य -

चारूदत्त - वेश्याओं की निन्दा से भला क्या लाभ ? इस समय तो मैं अपनी गरीबी के कारण स्वत :उनसे दूर हूँ। देखो-

वेगं करोति तुरगस्त्वरितं प्रयातुं
प्राणव्ययान्न चरणास्तु तथा वहन्ति।
सर्वत्र यान्ति पुरूषस्य चला :स्वभावा:
खिन्नास्ततो हृदयमेव पुनर्विशन्ति।।8।।
अपि च, वयस्य!
यस्यार्थास्तस्य सा कान्न्ता, धनहार्यो ह्यसौ जन:।
स्वागतम् न, गुणहार्यो ह्यसौ जन :प्रकाशम्
वयमर्थै :परित्यक्ता:, ननु त्यक्तैव सा मया।।9।।

अन्वय - :तुरग:, त्वरितम्, प्रयातुम्, वेगम्, करोति, तु, प्राणव्ययात्, चरणा :तथा, न, वहन्ति, पुरूषस्य , चला:, स्वभावा:, सर्वत्र , यान्ति, तत:, खिन्ना:, पुन :हृदयम्, एव, विशन्ति ।।8।।

अन्वय -:यस्य अर्था: सन्ति तस्य, सा, कान्ता अस् हि, असौ, जन:, धनहार्य) :अस्ति वयम्, अर्थै: परित्यक्ता: अत: ननु, सा, मया, त्यक्ता एव ।।9।।

हिन्दी में अनुवाद -घोड़े तेज भागने के लिए अकुलाते हैं किन्तु, थके रहने पर वे वेग से दौड़ नहीं पाते, मनुष्य के चंचल मन चारों ओर दौड़ते हैं किन्तु साधनहीन होने पर भीतर ही भीतरविलीन हो जाते हैं ।।8।।

और भी हे मित्र जिसके पास धन है, उसी की वसन्तसेना हैं। क्योंकि, वेश्या तो धन से ही वश में आती है। मन ही मन नहीं वह तो गुण से भी वश में आ सकती है। प्रकट हम दरिद्र हैं, इसलिए वह स्वत :मुझसे परित्यक्ता है ।।9।।

विदूषक -:यंथा एष ऊद्र्ध्व प्रेक्ष्य दीर्घ नि:श्वसिति, तथा तर्कयामि -मया विनिवार्यमाणस्य वयस्य। भणितञ्च तया 'भण चारूदत्तम् -अद्यप्रदोषे मया अत्र आगन्तव्यम्' इति। तत् तर्कयामि रत्नावल्या अपरितुष्टा अपरं मार्गयितुमागमिष्यतोति।

विदूषक -:नीचे देखकर, मन ही मन (यह ऊपर की ओर देखते हैं, लम्बी सॉस खीचते हैं। लगता है -मेरे मना करने पर इनकी उत्कण्ठा और बढ गई है। यह ठीक ही कहा गया है -आर्य चारूदत्त से निवेदन कर देना, आज सूर्यास्त के बाद मैं उनसे मिल रही हूँ । मैं सोचता हूँ रत्नाहार से उसे सन्तोष नहीं हुआ, वह कुछ और लेने आयेगी।

चारूदत्त -वयस्य! आगच्छतु, परितुष्टा यासयति।

चारूदत्त -आने तो दो प्यारे, खुश होकर लौटेंगी।

चेट -:प्रविश्य (अवेध माणहे।) अवेत मानवा :

चेट -मंच पर आकर (अरे मानवों, मेरी बातें सुनो।

यथा यथा वर्षति अभ्रखण्डम्, तथा तथा तिम्यति पृष्ठचर्म।

यथा यथा लगति शीतवातस्तथा तथा वेपते मे हृदयम्।।10

अन्वय -:यथा, यथा अभ्रखण्डम्, वर्षति, तथा, तथा, पृष्टचर्म, तिम्यति, यथा यथा शीतवात:, लगति, तथा तथा, में, हृदयं वेपते।।10।।

हिन्दी अनुवाद -जैसे– जैसे मेघ बरसता है, मेरी पीठ की खाल भीगती है और जैसे –जैसे ठंढी हवा बहती है, वैसे-वैसे मेरा दिल कॉपता है।।10।।

1.3. 2 श्लोक संख्या 11से 18 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

प्रहस्य

वंश वादयामि सप्तच्छिद्रं सुशब्दम्, वीणां वादयामि सप्ततन्त्रीं नदन्तीम्।

गीतं गायामि गर्दभसयानुरूपं को मे गाने तुम्बुरूर्नारदो वा।। 11

अन्वय -:सप्तच्छिद्रम्, सुशब्दम्, वंशं वादयामि, सप्ततन्त्रीम्, नदन्तीम्, वीणाम्, वादयामि, गर्दभस्य, अनुरूपम्, गीतम्, गायामि, मे, गाने, तुम्बुरू:, वा, नारद :क :?।।11।।

आज्ञप्तोऽस्मि आर्यया वसन्तसेनया -'कुम्भीलक ! गच्छ त्वम्, मम, आगमनम् आर्यचारूदस्य निवेदय' इति । तद् यावत् आर्यचायदत्तस्य गेहं गच्छामि। एष चारूदत्तो वृक्षवाटिकायां तिष्ठति एषोऽपि स दुश्टवटुक:। तद्यावदुपसर्पामि। कथमाच्छादितं द्वारं वृक्षवाटिकाया:। भवतु,एतस्य दुष्टवटुकस्य संज्ञांददामि।

हँसकर (सात छेदवाली बॉसुरी से मीठी धुन बजाता हूँ सात तारों से बजने वाला सितार भी बजाता हूँ गदहे की तरह गीत भी गाता हूँ, मेरे गाने के सामने प्रसिद्ध गन्धर्व गायक तुम्बुरू तथा देवर्षि गायक नारद भी तुच्छ है।।11।।

आर्या वसन्तसेना ने कहा है -कुम्भीकल जाकर आर्य चारूदत्त को मेरे आगमन की सूचना दे दो। अत :मान्य चारूदत्त के घर चलता हूँ घूमकर तथा किवाड़ के छेद से झॉंककर (यह आर्य चारूदत्त उद्यान में बैठे हैं और साथ में दुष्ट ब्राह्मण विदूषक भी है। तो फिर उनके पास ही चलता हूँ। कंकर फेंकताहै।

विदूषक -:अये! क इदानीमेष प्राकारवेष्टितमिव कपित्थं मां लोष्टकैस्ताडयति ?

विदूषक -अरे चहारदिवारी से घिरे रहने के बावजूद मेरे माथे पर कैथ की तरह कंकर से कौन मारता है ?

चारूदत्त -:आराम-प्रासाद-वेदिकायां क्रीडद्भ् :पारावतै :पातितं भवेत्।

चारूदत्त -उपवन के महल की छत पर बनी कपोतपालिका पर खेल रहे कबूतरों ने यह गिराया होगा ?

विदूषक -:दास्या :पुत्र! दुश्टपारावत ! तिष्ठ तिष्ठं, यावदेतेन दण्उकाष्ठेन सुपक्वमिव चूतफलम् अस्मात् प्रासादाद् भूमौ पातयिष्यामि।

विदूषक -अरे , नीचे दुष्ट कबूतर, ठहर, डंडा मारकर तुम्हें पके आम की तरह कपोतपालिका से नीचे गिराता हूँ डंडा उठाता है और बढता है।

चारूदत्त -:यज्ञोपतीतेन आकृष्ठ वयस्य! उपविश। किमनेन। तिष्ठतु दयितासहितस्तपस्वी पारावत:।

चारूदत्त जनेऊ पकड़ कर खीचता है मित्र, बैठो, इससे भला क्या लाभ होगा ?अपनी प्रिया के साथ इस गरीब कबूतर को बैठने तो दो।

चेट -:कथं पारवतं प्रेक्षते, मां न प्रेक्षते। भवतु , अपरया लोश्टगुटिकयापुनरपि ताडयिष्यामि।

चेट -ये कबूतर को देखते हैं पर, मुझे नहीं देखते। अच्छा तो फिर इन्हें कंकर मारता हूँ। कंकर फेंकता है।

विदूषक -:कथं कुम्भोलक! तद् यावदुपसर्पामि। अरे कुम्भीलक! प्रविश! स्वागतं ते ?

विदूषक -चारो ओर देखकर अरे, कुम्भीमलक, अच्छा तो इसके पास जाता आगे बढकर और दरवाजा खोलकर आओ जी कुम्भीलक आओ, तुम्हारा स्वागत है।

चेट -:प्रविश्य अज्ज! वन्दामि। आर्य! वन्दे।

चेट -भीतर आकर आर्य, प्रणाम करता हूँ।

विदूषक -:अरे! कस्मिन् त्वमीद्दशे दुर्दिने अन्धकारे आगत:।

विदूषक-अरे , अन्धकाराच्छन्न इस दुर्दिन में तुम्हारा आना कैसे हुआ?

चेट -:अरे एषा सा।

चेट -अरे, वह यह है।

विदूषक -:का एषा का ?

विदूषक -कौन यह कौन है ?

चेट -:एषा सा।

चेट -अरे, वह यह है।

विदूषक -:किमिदानीं दास्या :पुत्र!: दुर्भिक्षकाले वृद्धरंक इव ऊद्र्ध्वकं श्वसायसे 'एषा सा सा' इति।

विदूषक-दासी के बच्चे, अकाल के समय भिखारी बूढे की तरह ऊपर की ओर लम्बी सॉस 'सा सा' क्यों कर रहे हो ?

चेट -:अरे! त्वमपीदानीमिन्द्रमखकामुक इव सुष्ठु किं काफायसे 'का का' इति ?

चेट – अरे, तुम भी तो इस समय इन्द्रबलि के लोभी कौए की तरह 'का का' कर रहे हो।

विदूषक -: तत कथम।

विदूषक -तो फिर कहो।

चेट -:भवतु, एवं भणिष्यामि। अरे ! प्रश्नं ते दास्यामि।

चेट -मन ही मन (तो फिर इस तरह कहूँगा।) प्रकट(अरे तुमसे एक सवाल पूछता हूँ।

विदूषक -:अहं! ते मुण्डे पादं दास्यामि।

विदूषक -मैं तुम्हारे माथे पर पैर रक्खूँगा।

चेट -:अरे। जानीहि तावत् तेन हि कस्मिन्काले चूता मुकुलयन्ति ?

चेट -अच्छा तो बतलाओ तो आम कब बौराते हैं ?

विदूषक -:अरे! दास्या :पुत्र! ग्रीष्मे।

विदूषक -रे नीच, गर्मी में।

चेट -:अरे! नहि नहि।

चेट -उपहास करते हुए (ऐसा नही हो सकता?

विदूषक -:किमिदानीमत्र कथयिष्यामि ? भवतु चारूदत्तं गत्वा प्रक्ष्यामि । अरे ! मुहूर्तकं तिष्ठ। भो वयस्य ! पक्ष्यामि तावत् कस्मिन् काले चूता मुकुलयन्ति ?

विदूषक -मन ही मन (तो क्या उत्तर होगा) सोचकर (अच्छा तो चल कर चारूदत्त से ही पूछता हूँ । प्रकट (क्षणभर रूको) चारूदत्त के पास जाकर (मित्र, आम कब बौराते हैं ?

चारूदत्त -:मूर्ख! वसन्ते।

चारूदत्त -मूर्ख, वसन्त में।

विदूषक -:मूर्ख! वसन्ते।

विदूषक -चेट के पास जाकर (मूर्ख! वसन्त में।

चेट -:द्वितीयं ते प्रश्नं दास्यामि। सुममृद्धानां ग्रामाणां का रक्षां करोति ?

चेट- अब रहा मेरा यह दूसरा प्रश्न -सम्पन्न नगरों की रक्षा कौन करता है ?

विदूषक-:अरे! रथ्या।

विदूषक -अरे गली।

चेट -:अरे! नहि नहि।

चेट –हँस कर नहीं नहीं।

विदूषक -:भवतु संशये पतितोऽस्मि। भवतु, चारूदत्तं पुनरपि प्रक्ष्यामि।

विदूषक -मैं तो संशय में पड़ गया हूँ) कुछ सोचकर(अच्छा तो फिर चारूदत्त से ही पूछता हूँ। पुन :चारूदत्त के पास आकर पूछता है।

चारूदत्त -:वयस्य! सेना।

चारूदत्त -मित्र, सेना।

विदूषक -:अरे! दास्या :पुत्र! सेना।

विदूषक -चेट के पास पहूँचकर (अरे दासी पुत्र, सेना।

चेट -:अरे द्वे अपि एकस्मिन् कृत्वा शीघ्रं भण।

चेट -तो दोनों उत्तरों को मिलाकर जल्दी से एक साथ उच्चारण करों।

विदूषक -:सेनावसन्ते।

विदूषक -सेनावसन्त।

चेट -:ननू परिवर्त्य भण।

चेट -अरे, उलट कर कहो।

विदूषक-:सेनावसन्ते।

विदूषक -देह घुमाकर सेनावसन्त।

चेट -:अरे मूर्खा बटुक! पदे परिवर्त्तय।

चेट -रे मूर्ख ब्राह्मण, पदपरिवर्तन कर बोलो।

विदूषक -:सेनावसन्ते।

विदूषक -कुछ सोचकर 'वसन्तसेना'।

चेट -:अरे मूर्ख! अक्षरपदे परिवर्त्तय।

चेट -रे मूर्ख, ब्राह्मण, पदपरिवर्त्तन कर बोले।

विदूषक -:वसन्तसेना।

विदूषक-कुछ सोचकर 'सेनावसन्त।'

चेट -:एषा सा आगता।

चेट -हॉं वही वसन्तसेना आई है।

विदूषक -:तद् यावत् चारूदत्तस्य निवेदयामि। भो चारूदत्त! धनिकस्ते ! आगत:।

विदूषक -तो फिर , मित्र चारूदत्त से कहता हूँ। पास जाकर मित्र, आपके महाजन आये है।

चारूदत्त -:कुतोऽस्मत्कुले धनिक:?

चारूदत्त -हमारे खानदान में महाजन कहॉं से आया ?

विदूषक -:यदि कुले नास्ति, तद्द्वारे अस्ति। एषा वसन्तसेना आगता।

विदूषक – अरे, खानदान में नहीं है तो मत रहें , दरवाजे पर तो हैं ही। वसन्तसेना आई है।

चारूदत्त -:वयस्य! किं मां प्रतारयसि ?

चारूदत्त -मित्र, क्यों मुझे ठगते हो?

विदूषक -:यदि मे वचने न प्रत्ययसे, तदिमं कुम्भीलकं पृच्छ। अरे दास्या :पुत्र! कुम्भीलक ! उपसर्प।

विदूषक -यदि मेरी बात का विश्वास नहीं है तो इस कुम्भीलक से ही पूछ लो न। अरे ओ, दासी का बेटा, जरा इधर तो आओ।

चेट -:आर्य! वन्दे।

चेट :पास जाकर आर्य, प्रणाम करता हूँ।

चारूदत्त -:भद्र! स्वागतम्। कथय, सत्यं प्राप्ता वसन्तसेना ?

चारूदत्त -भ्रद, स्वागत है, कहो क्या सचमुच वसन्तसेना आई है?

चेट -:एषा सा आगता वसन्तसेना।

चेट -हॉं जी, वसन्तसेना ही तो आई है।

चारूदत्त -:सहर्षम् भद्र! न कदाचित् प्रियवचनं निष्फलीक़तं मया। तद्गृह्यातां पारितोषिकम्। इत्युत्तरीयं प्रयच्छति।

चारूदत्त -खुशी के साथ मैंने किसी तरह की खुशखबरी सुनने के बाद किसी को भी यों ही लौटने नहीं दिया है। इसलिए इनाम लेकर ही जाओ चादर देता है।

चेट -:यावदार्यायै निवेदयामि।

चेट -लेकर प्रणाम कर, सन्तोष के साथ (तब तक चलकर आर्या वसन्तसेना से कहता हूँ। चला जाता है।

विदूषक -:भो! : अपि जानासि :किं निमित्तमीदृशे दुर्दिने आगतेति ?

विदूषक -मित्र, जानते हो ऐसे दुर्दिन में यह क्यों आई है।

चारूदत्त -:वयस्य! न सम्यगवधारयामि।

चारूदत्त-नहीं तो मेरी समझ में बात ठीक से जम नहीं पाती।

विदूषक -:मया ज्ञातम्। अल्पमूल्या रत्नावली , बहुमूल्यं सुवर्णभाण्डकम् इति न परितुष्टा, अपरं मार्गयितुमागता।

विदूषक -मैं जानता हूँ। रत्नावली कुछ कम कीमत की है और इसका स्वर्णभूषणम का डिब्बा अधिक कीमती है, ऐसा सोचकर, असन्तोष की स्थिति में कुछ और मॉगने आई है।

चारूदत्त -: स्वगतम् परितुष्टा यास्यति।

तत : प्रविशति उज्ज्वलाभिसारिकावेशेन वसन्तसेना, सोत्कण्ठा छत्रधारिणी विटश्च । **विट :** वसन्तसेनामुद्दिश्य

अपद्मा श्रीरेषा प्रहरणमनङ्गःस्य ललितं
कुलस्त्रीध्ससं शोको मदनवरवृक्षस्य कुसुमम्।
सलीलं गच्छन्ती रतिसमयलज्जाप्रणयिनी
रतिक्षेत्रे रङ्गे प्रियपथिकसार्थैरनुगता ।।12।।

अन्वय :रतिसमयलज्जाप्रणयिनी, प्रियपथिकसार्थै :अनुगता :रङ्गे) इव (रतिक्षेत्रे, सलीलम् गच्छन्ती, एषा, अपद्मा, श्री :, अनङ्गस्य ललितम्, प्रहरणम्, कुलस्त्रीणाम् , शोक : ,मदनवरवृक्षस्य, कुसुमम्, अस्ति ।।12।।

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त - मन ही मन (अब यहॉ से सन्तुष्ट होकर जायेगी।

इसके बाद शुभ्र अभिसारिका के रूप में उत्कण्ठित वसन्तसेना, छत्रधारिणी दासी एवं विट का प्रवेश

विट -वसन्तसेना को उद्देश्य करके सुरत के समय सलज्जा, पथिकों के समूह से पीछा की गई, राग रंग बढाने वाली , संकेतित स्थान के लिए सर्विलास आगे बढने वाली, यह वसन्तसेना, बिना कमल के ही लक्ष्मी है, कामदेव का सुकुमार आयुध है, कुलीन ललनाओ का शोक है, कामरूपी सुन्दर वृक्ष का मनोरम फूल **है** ।।12।।

वसन्तसेने ! पश्य , पश्य -

गर्जन्ति शैलशिखरेषु विलम्बिबिम्बा
मेघा वियुक्तवनिताहृदयानुकारा:।
येषां रवेण सहसोत्पतितै र्मयूरै:
खं वीज्यते मणिमयैरिव तालवृन्तै :।।13।।
अपि च-
पङ्कक्लिन्नमुखा :पिबन्ति सलिलं धाराहृता दर्दुरा:
कण्ठं मुञ्चति बर्हिण :समदनो नीप :प्रदीपायते।
संन्यास :कुलदूषणैरिव जनैर्मेघैर्वृतश्चन्द्रमा
विद्युन्नीचकुलोद्गतेव युवतिर्नैकत्र सन्तिष्टते ।।14।।

अन्वय -:वियुक्तवनिताहृदयानुकारा:, शैलशिखरेषु, विलम्बिविम्बा:, मेघा:, गर्जन्ति येषाम्, रवेण, सहसा, उत्पतितै:, मयूरै:, मणिमयै:, तालवृन्तै:, खम्, वीज्यते , इव।।13।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेने देखो-देखो- वियोगिनी कामिनियों के हृदय की तरह मलिन, पहाड़ की चोटियों पर लटके हुए मेघमण्डल गरज रहे हैं, जिसकी आवाज से घबड़ा कर उड़ते हुए मयूर अपने मणिमय पंखो से लगता है जैसे आकाश को हवा कर रहें हैं ।।13।।

और भी -वर्षा की जलधारा से ताड़ित एवं कीचड़ से लतपथ मुँहवाले मेढक पानी पी रहे हैं। कामातुर मयूर अपनी मीठी आवाज में बोल रहे हैं। अपने सफेद फूँलो के कारण खिले कदम्ब के पेड़ जलते दीप की तरह लग रहे हैं। नीच खानदान में जन्म लेने वाली औरत की तरह बिजली कहीं एक जगह स्थिर नहीं रह पाती है। कुल को कलंकित करने वाले संन्यासी की तरह तरह चन्द्रमा मेघों से घिरे रहा है ।।14।।

वसन्तसेना – भाव ! सुट्ठु दे भणिदं। भाव! सुष्ठु ते भणितम्।

मूढे ! निरन्तरपयोधरया मयैव
कान्त :सहाभिरमते यदि किं तवात्र।
मां गर्जितैरपि मुहूर्विनिवारयन्ती ।।15।।

अन्वय -कुपिता, सपत्नी , इव, निशा हे मूढे, निरन्तरपयोधरया, मया, सह, एव, कान्त:, यदि, अभिरमते , तदा (अत्र, तव किम्,) इदृशै: गर्जितै :अपि, मुहु:, विनिवारयन्ती , मम मार्गम्, रूणद्धि ।।15।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -विद्वन्, आपने ठीक ही कहा है। यह तो- सौतिन की तरह ये कालीरात बार-बार गरज कर हमारी राह रोकती है। यह कहती है -री मूर्खे , निविड़ मेघोसे घिरी हुई या सघन कुचों वाली मेरी तरह प्रियतम चारूदत्त से रमण करती हो तो इसमें तुम्हें लाभ होगा ?।।15।।

विट -:भवतु एवं तावत्, उपालभ्यतां तावदियम्।

हिन्दी अनुवाद -विट- तो ठीक है, तुम इस रात
को बैठकर कोसो।

वसन्तसेना -भाव! किमनया स्त्री-स्वभाव-दुर्विदग्धया उपालब्धया। पश्यतु भाव -:

मेघा वर्षन्तु गर्जन्तु मुचन्त्वशनिमेव वा ।

गणयन्ति न शीतोष्णं रमणाभिमुखा :स्त्रिय :।।16।।

अन्वय -:मेघा:, गर्जन्तु, वर्षन्तु, वा, अनिशम्, एव, मुञ्चन्तु, रमणाभिमुखा:, स्त्रिय:, शीतोष्णम्, न, गणयन्ति।।16।।

वसन्तसेना -महाशय, नारी स्वभाव से ईर्ष्यालु होती है, तो फिर इस रात को कोसने से भला क्या लाभ ? देखिए- मेघ चाहे बरसे या वज्र गिराये, रमणोत्सुक रमणी प्रियतम के पास जाने में शीत या ताप की चिन्ता नहीं करती **।।16।।**

विट -:वसन्तसेने! पश्य ! अयमपर-:

पवन-चपल-वेग :सथूलधारा-शरौघ:

स्तनित-पटह-नाद :स्पष्टविद्युत्पताक:।

हरति करसमूहं खे शशाङ्कस्य मेघो

नृप इव पुरमध्ये मन्दवीर्यस्य शत्रो:।।17।।

अन्वय -:पवनचपलवेग:, स्थूलधाराशरौघ:, स्तनितपटहनाद:, स्पष्टविद्युत्पताक:, मेघ:, पुरमध्ये, मन्दवीर्यस्य, शत्रो:, नृप इव खे शशाङ्कस्य, करसमूहं, **हरति ।।17।।**

विट-देखो, वसन्तसेने, यह दूसरा देखो -यहाँ मेघ का वर्णन एक विजेता राजा की तरह किया गया है (पानी की प्रबल धारायें ही जिनके बाण समूह हैं, जिनका गरजना ही नगाड़े की आवाज है, चंचल चपलाही जिनकी पताकाहै, ऐसा मेघ आकाश में चन्द्रकिरणों को उसी प्रकार छीन रहा है जैसे एक विजेता राजा हवा की भाँति वेग वाला, सशक्त बाणसमूह वाला, गड़गडाते नगाडे वाला, बिजली की तरह चमकती पताका वाला अपने पराजित शत्रुओं की राजधानी में घुसकर उनसे कर वसूल करता है **।।17।।**

वसन्तसेना -एवमेतत् । तत् कथमेष :अपर-:

एतैरेव यदा गजेन्द्रमलिनैराध्मातलम्बोदरै-

र्गर्जद्भ :सतडिद्बलाकशबलैर्मेघै :सशल्यं मन :।

तत् किं प्रोषित-भर्तृ-वध्य-पटहो हा हा हतोशो बक:

प्रावृट् प्रावृडिति ब्रवीति शठधी: क्षारं क्षते प्रक्षिपन् ।।18।।

अन्वय -:गजेन्द्रमलिनै:, आध्मातलम्बोदरै:, गर्जद्भि:, सतडिद्बलै:, एतै:, एव, मेघै :मन:, शल्यम्, तत् प्रोषितभर्तृवध्यपटह:, हताश:, शठधी:, बक:, क्षते क्षारम्, प्रक्षिपन्, इव, हा-हा किम् प्रावृट् प्रावृडिति ब्रवीति**?।।18।।**

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -यह तो ठीक है, तब दूसरे -मत्त गजराज की तरह नीले वर्ण वाले, जल से भरे रहने के कारण विराट पेट वाले, बिजली और बकपंक्तियों के संयोग से चित्रित एवं

गरजते हुए मेघों से अब विरहियों के हृदय में कॉटे चुभ रहे हैं। हाय, परदेश में रहने वाले विरही पतियों के बधकालीन नगाड़े की आवाज की तरह ये मूर्ख बगुले घाव पर नमक छिड़कने की तरह 'वर्षा वर्षा' क्यों रट रहे है?॥18॥

1.3.3 श्लोक संख्या 19 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

विट -:वसन्तसेने! एवमेतत्। इदमपरं पश्य -

बलाका-पाण्डुरोष्णीषं विद्युदुत्क्षिप्तचामरम्।

मत्त-वारण-सारूप्यं कर्त्तुकाममिवाम्बरम् ॥19॥

अन्वय :बलाकापाण्डुरोष्णीषम्,विद्युदुत्क्षिप्तचामरम्,अम्बरम्,मत्तवारणसारूप्यम्,कर्त्तुकमम्, इव,प्रतिभाति ॥19॥

हिन्दी अनुवाद -विट -यह तो ठी है। तब यह दूसरा -वकपंक्ति रूपी श्वेत पगड़ी, पहनकर, बिजली रूपी चंचल चामकर लेकर यह आकाश मंडल मतवाले गजराज की समानता करने को उत्सुक हो रहा है ॥19॥

वसन्तसेना -भाव! प्रेक्षस्व प्रेक्षस्य।

एतैरार्द्र-तमालपत्र-मलिनैरापीतसूर्य नभो

वल्मीका :शरताडिता इव गजा :सीदन्ति धाराहता :।

विद्युत्काञ्च नदीपिकेव रचिता प्रासादसञ्चारिणी

ज्योत्स्ना दुर्बलभत्तुकेव बनिता प्रोत्सार्य मेघैर्हृता ॥20॥

अन्वय :आर्द्रतमालपत्रमलिनै:, एतै:, मेघै:, आपीतसूर्यम्, नभ :धाराहता वल्मीका:, शरताडिता, गजा, एव, सीदन्ति विद्युत, प्रासादसञ्चारिणी, काञ्चनदीपिका, इव, रचिता, ज्योत्स्ना, दुर्बलभर्तृका, इव, प्रोत्सायं , हृता **॥20॥**

वसन्तसेना -मान्यवर देखिए - भीगे आबनूस के पत्तो की तरह काले बादलो से सूर्यहीन आकाश ढंक रहा है, वर्षा की धारा से बाण से बिंधे हाथियों की तरह ये दीमक विनष्ट हो रहे है। सोने के दीप की तरह गगनचुम्बी अट्टालिकाओं में ये बिजलियॉ चमक रही है। बलहीन व्यक्ति की सुन्दर पत्नी को जैसे लम्पट छीन लेते है वैसे ही इन बादलों ने चॉद की चाँदनी को छीन लिया है **॥20॥**

विट -: वसन्तसेने! पश्य पश्य –

एते हि विद्युद्गुण –बद्ध-कक्षा गजा इवान्योन्यमभिद्रवन्त :।

शक्राज्ञयावारिधरा :सधारा गां रूप्यरज्ज्वेव समुदद्वधरन्ति ॥21॥

अपि च। पश्य -महावाताध्मातैर्महिश-कुल-नीलैर्जलधरै-

श्चलैर्विद्युत्पक्षैर्जलधिभिरिवान्त :प्रचलितै :।

इयं गन्धोद्दामा नव-हरित-शष्पाङ्कुरवती धरा धारापातैर्मणिमयशरैर्भिद्यत इव॥22॥

अन्वय -:विद्युद्गुणबद्धकक्षा:, अन्योऽन्यम्, अभिद्रवन्त:, गजा:, इव सधारा:, एते, वारिधरा:,

शक्रज्ञया, गाम्, रूप्यरज्ज्वा, इव, समुद्धरन्ति॥21॥

अन्वय-: महावाताध्मातै:, महिषकुलनीलै:, विद्युत्पक्षै :अन्त :प्रचलितै:, जलधिभि:, इव, चलै:, जलधरै:, नवहरितशष्पाङ्कुरवती, गन्धोद्दामा, इयम्, धरा, धारापतै:, मणिमयशरै:, भिद्यते, इव॥22॥

विट -देखो, वसन्तसेने, देखो -विललीरूपी रस्सी से कमी वाले, आपस में एक दूसरे को ध्क्का देते हुए हाथियों की तरह ये बादल मानों देवराज इन्द्र की आज्ञा से श्वेत जलधारा रूपी चॉंदी की रस्सियों से बॉंध कर धरती को ऊपर की ओर खीच रहे हैं **॥21॥**

और भी देखो -विसफूर्जित सागर की तरह, झंझावात के आघात के आघात से चंचल, भौसों के झूंड के समान काले, चंचल बिजली वाले, जल से भरे ये बादल नई नई हरी घासों के अड़कुरवाली तथा सोंधी महक वाली इस धरती को धारापात रूपी मणिमय बाणों से वेध रहा है **॥22॥**

वसन्तसेना -भाव! एष अपर:।

एह्येहीति शिखण्डिनां पटुतरं केकाभिराक्रन्दित :
प्रोड्डीयेव बलाकया सरभसं सोत्कण्ठमालिङ्गित:।
हंसैरूज्झितपङ्कजैरतितरां सोद्वेगमुद्वीक्षित :
कुर्वन्नञ्जनमेचका इव दिशो मेघ :समुत्तिष्ठति ॥23॥

अन्वय -:शिखण्डिनाम्, केकाभि:, एहि एहि, इति पटुतरम्, आक्रन्दित:, बलाकया, सरभसं, प्रोड्डीय, सोत्कण्ठम्, आलिङ्गित:, इव, उज्झितपङ्कजै :हंसै:, अतितराम्, सोद्वेगम्, उद्वीक्षित:, मेघ:, दिश:, अञ्जनमेचका:, कुर्बन्,इव, समुत्तिष्ठति **॥23॥**

वसन्तसेना - महाशय, यह भी देखिए -

मयूर स्पष्ट शब्दों में 'आओ-आओ' कहकर इन बादलों को बुला रहा है साभिलाप बगुलों की पातियॉं मानो दौडकर इन्हें गले लगा रहीं हैं। कमलवनों को छोडते हुए उद्विग्न से ये हंस इन्हें घृणा की दृष्टि से देख रहे है और ये मेघ दिशाओं को काजल पोतता हुआ मौज से आकाश में घूम रहा है **॥23॥**

विट -:एवमेतत्। तथाहि पश्य –

निष्पन्दीकृत-पद्मषण्ड-नयनं नष्ट– क्षपा-वासरं
विद्युद्धि :क्षण-नष्ट-दृष्ट तिमिरं प्रच्छादिताशामुखम्।
निश्चेष्टं स्वपितीव सम्प्रति पयोधारा-गृहान्तर्गतं
सफीताम्भोधर-धाम-नैक-जलद-च्छत्रापिधानं जगत॥24॥

अन्वय -:निष्पन्दीकृतपद्मपण्डनयनम्, नष्टक्षपावासरम्, विद्युद्भ:, क्षणनष्टदृष्टतिमिरम्, प्रच्छादिताशामुखम्, सफीताम्भोधरधामनैकजलदच्छत्रापिधानम्, पयोधारागृहान्तर्गतम्, जगत् सम्प्रति, निश्चेष्टम्, स्वपिति, इव **॥24॥**

हिन्दी अनुवाद -विट -तुम्हारा कहना ठीक ही है देखो न- कमलरूपी ऑंखें बन्दकर , रात दिन का भेद मिटाकर कभी सघन अन्धकार में छिपकर तो कभी बिजली के प्रकाश में प्रकट होकर

ऑखे मिचौनी करते हुए दिशारूपी मुँह ढँककर जलधारारूपी घर में , बहुरंगे बादल के छाते लगाकर आकाश में यह संसार निश्चिन्त होकर सो रहा है **।।24।।**

गता नाशं तारा उपकृतमसाधाविव जाने
वियुक्ता कान्तेन स्त्रिय इव न राजन्ति ककुभ :।
प्रकामान्तस्तप्तं त्रिदशपति-शस्त्रस्य शिखिना
द्रवीभूतं मन्ये पतति जलरूपेण गगनम् ।।25।।

अन्वय -:असाधौ, जने, उपकृतम्, इव, तारा:, नाशम्, गता:, कान्तेन, वियुक्ता स्त्रिय:, इव, ककुभ:, न, राजन्ति , त्रिदशपतिशस्त्रस्य, शिखिना, प्रकामम्, अन्तस्तप्तम्, द्रवीभूतम्, गगनम्, जलरूपेण, पतति , इति अहं मन्ये ।।25।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना-महाशय, आपका कहना विल्कुल ठी है। और भी देखिए -दुष्टलोगों के लिए किये गये उपकार की तरह ये आकाश के तारे खो गये है। पतिहीन वियोगिनी की तरह दिशाएँ श्रीहत हो गई हैं। इन्द्र के हथियार से निकलने वाली आग से झुलसा आकाश मानो पिघलकर पानी के रूप में गिर रहा **है ।।25।।**

इसके बाद शुभ्र अभिसारिका के रूप में उत्कण्ठित वसन्तसेना, छत्रधारिणी दासी एवं विट का प्रवेश

विट -वसन्तसेना को उद्देश्य करके सुरत के समय सलज्जा, पथिकों के समूह से पीछा की गई, राग रङ्ग (बढाने वाली , संकेतित स्थान के लिए सर्विलास आगे बढने वाली, यह वसन्तसेना, बिना कमल के ही लक्ष्मी है, कामदेव का सुकुमार आयुध है, कुलीन ललनाओ का शोक है, कामरूपी सुन्दर वृक्ष का मनोरम फूल है । महाशय, आपका कहना विल्कुल ठी है। और भी **देखिए** -दुष्टलोगों के लिए किये गये उपकार की तरह ये आकाश के तारे खो गये है। पतिहीन वियोगिनी की तरह दिशाएँ श्रीहत हो गई हैं । इन्द्र के हथियार से निकलने वाली आग से झुलसा आकाश मानो पिघलकर पानी के रूप में गिर रहा है ।

अभ्यास प्रश्न -

निम्नलिखित के एक शब्द में उत्तर दीजिए।

1. पालतू मयूरों ने किसे देखा ?
2. हंसों ने उपेक्षकृत दृष्टि से किसे देखा ?
3. चारूदत्त के कथन में शंख किससे निर्मित है ?
4. लालच और उदारता से हीन हो है?
5. सदा प्रतिकूल कौन है ?
6. वेश्या किसके वश में होती है ?
7. चेट किस तरह गीत गाता है ?
8. सुरत किसे कहते है ?
9. विट के कथन में कामदेवका सुकुमार अयुध कौन है ?

1.4 सारांश

इस इकाई में चारूदत्त के प्रारम्भिक कथनों से आपने जाना कि इसके बाद आसन पर बैठे हुए उत्कण्ठितचारूदत्त का प्रवेश चारूदत्त -ऊपर की ओर देखकर(यह असमय में ही काली घटाएँ उमड़ रही हैं। ऊपर की ओर पॉखें फैलायें जिसे पालतू मयूरों ने देखा, गमनोन्मुख खिन्न मन हंसों ने जिसे उपेक्षा की दृष्टि से देखा, वह अकालदुर्दिन आकाश और विरही के हृदय को एक साथ ढँक रहा है। और भी -पानी से भीगे पेट वाले भैसे और काले भौरों की तरह नीले मेघ, विद्युत्कान्ति से निर्मित पीताम्बर धारण कर साथ में बकपंक्तिरूपी शंख धारण कर भगवान् विष्णु की तरह सम्पूर्ण आकाश को घेर रहा है। चारूदत्त) -मन ही मन (अब यहॉ से सन्तुष्ट होकर जायेगी। अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप चारूदत्त एवं चेट तथा विदूषक के विभिन्न कथनों में विभिन्न प्रकार की शिक्षाओं को ग्रहण कर पंचम् अंक के श्लोक संख्या 1से 25 तक की सम्पूर्ण विशेषताओं को बतायेगें।

1. 5 पारिभाषिक शब्दावली

उत्कलापै -:गृहशिखण्डिभि:, दुर्दिनम् -मेघाच्छन्नदिनम्, निषिक्ता- :तरलीकृता , विश्लेषितै -:भेदं गतै :, विस्तरै -:विस्तृतै :, अनुगतै -:पश्चाच्चलितै:, चक्रतुल्यम्-राज्यतुल्यम् , अतिदर्पितबल -: अतिदर्पितम्, अस्मासु –मादृशधनरहितेषु, यत् सखीजनेषु -आलीसमूहेषु, अपवारितम् -आच्छादितम्, लेष्टका -लघुकठोरमृत्तिकाखण्ड:, रासभश्च-गर्दभश्च,

1. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. मेघ 2. मेघ 3. बक्कपंक्ति 4. वसन्तसेना 5. काम 6. धन 7. गधे की तरह 8. कामदेव 9. वसन्तसेना

1.7 संदर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् –हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ 0रमा शंकर मिश्र– चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2. मृच्छकटिकम -हिन्दी व्याख्या हित , डॉ 0जगदीशचन्द्र मिश्र -चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पंचम् अंक के श्लोक संख्या 2, 3 ,5 का संदर्भ सहित अनुवाद कीजिए।
2. प्रस्तुत इकाई में चारूदत्त के कथनों की समीक्षा कीजिए।
3. श्लोक संख्या 6, 8, का सप्रसंग अनुवाद कीजिए।

इकाई -2

मृच्छकटिकम् पंचम अंक श्लोक संख्या 26 से 52 तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 श्लोक संख्या 26 से 52 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

2.3.1 श्लोक संख्या 26 से 36 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

2.3.2 श्लोक संख्या 37 से 45 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

2.3.3 श्लोक संख्या 46 से 52 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.7 संदर्भग्रन्थ

2.8 निबन्धात्माक प्रश्न

2. 1 प्रस्तावना

पंचम् अंक के25 वें श्लोक में वसन्तसेना का कथन समाप्त हो जाने के पश्चात26 वे श्लोक से प्रारम्भ होने वाली इस इकाई में आप पुन :उन्हीं पात्रों के सम्वादों का अध्ययन करेगें जिनका इसके पूर्व की इकाई में कर चुके है। प्रस्तुत इकाई में भी वसन्तसेना के कथन के द्वितीय भाग से होने वाला वर्णन प्रारम्भ है जिसमें आरम्भ में विट और वसन्तसेना का सम्वाद है उसमें गौतम की पत्नी अहिल्या की चर्चा की गयी है। विद्युत की गर्जना एवं विट के सम्पूर्ण कलाओं के पारंगत होने में तथा छलकपट एवं माया के भण्डार होने की बात कहते हुए शुष्कवृक्षवाटिका आदि कथनों से सम्वादों में जीवन्तता आई है इसके आगे चारूदत्त विदूषक चेटी आदि पात्रों के सम्वादोंकाउल्लेख है जिसमें सुवर्ण भाण्ड आदि की चर्चा करते हुए ब्रह्मणत्व को बताते हुए गरीबों की ओर संकेत करते हुए सम्वाद यात्रा मेघ वर्णन को प्राप्त होती हुई चारूदत्त के कथन में वर्षावर्णन के साथ समाप्त हुई है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप 26से 52 तक श्लोकों एवं सम्वादों से परिचित होकर साहित्यक सामाजिक एवं अन्य विशेषताओं को बता सकेगें।

2.2 उद्देश्य

पंचम् अंक की शेष भाग की इस 14वीं इकाई के अध्ययन के पश्चात आप --

- ❖ चारूदत्त की विरह अवस्था को बता सकेंगें।
- ❖ वसन्तसेना मेघ को क्यों निर्लज्ज कहती है, इस भाव को रेखांकित कर सकेंगे।
- ❖ मयूर किस प्रकार बादलों को बुलाते है।
- ❖ आसमान बिजलीयों से किस प्रकार जल रहा है।
- ❖ मेघ का संगम क्या है इत्यादि।

2.3 श्लोक संख्या 26 से 52 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

14.3.1 श्लोक संख्या 26 से 36 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

अपि च, पश्य -

उन्नमति नमति वर्षति गर्जति मेघ :करोति तिमिरौघरम्।

प्रथमश्रीरिव पुरूष :करोति रूपाण्यनेकानि।।26।।

अन्वय -:मेघः, उन्नमति , नमति, वर्षति, गर्जति, तिमिरौघम्, करोति, प्रथमश्रीः, पुरूषः, इव, अनेकानि, रूपाणि, करोति **।।26।।**

हिन्दी अनुवाद -और भी देखिये -पहले पहल सम्पत्तिपाये पुरूष की तरह ये बादल अनेक रूप धारण कर रहा है। कभी तो ऊपर उठकर सारे आकाश को घेर लेता है और कभी नीचे की ओर झुककर फैल जाताहै। कभी वरसता है तो कभी गरजताहै। कभी घोर अन्धकार से सम्पूर्ण आकाश के आयाम को ढँक लेताहै **।।26।।**

विट -:एवमेतत्

विद्युद्भिर्ज्वलतीव संविहसतीवोच्चैर्बलाकाशतै -
महेन्द्रेण विवल्गतीव धनुषा धाराशरोद्गारिणा।
विसपष्टाशनि-निस्वनेन रसतीवाघूर्णवानिलै-
नीलै :सान्द्रमिवाहिभिर्जलधरैर्धूपायतीवाम्बरम्।।27 ।।

वसन्तसेना -

जलधर ! निर्लज्जस्त्वं यन्मां दयित्स्य वेश्म गच्छन्तीम्।
स्तनितेन भीषयित्वा धाराहसतै :परामृशसि।।28।।

अन्वय -:अम्बरम्, विद्युद्भि:, ज्वलति, इव, बलाकाशतै:, उच्चै:, संविहसति, इव, धाराशरोद्गारिणा, माहेन्द्रेण, धनुषा, विवल्गति, इव, विस्पष्टाशनिनिस्वनेन, रसति, इव, अनिलै:, आघूर्णति, इव, अहिभि:, इव, नीलै:, जलधरै:, सान्द्रम्, धूपायति, इव **।।27।।**

हिन्दी अनुवाद -विट -बात तो ऐसी ही है -

आकाश, मानो विजलियों से जल रहा है; बगुलों की सैकड़ो पॉतों से खिलखिलाकर हंस रहा है, धारारूपी बाणों को वर्षाकर इन्द्रधनुष उठाये पैतरा बदल रहा है, बज्रनिर्घोष से सिंहनाद कर रहा है, वायु के रूप में क्रुद्धहोकर घूम रहा है, करैत सॉप की तरह काले बादलों से कृष्ण धूम सेवन कर रहा है **।।27।।**

वसन्तसेना -रे मेघ, तुम बड़े ही निर्लज्ज हो, मैं अपने प्रियतम के घर जा रही हूँ और तुम मुझे गरज कर डरा रहे हो, इतना ही नही अपने जलधारारूपी हाथों से मेरा स्पर्श भी कर रहे है **।।28।।**

भो :शक्र!

किं ते ह्यहं पूर्वरतिप्रसक्ता यत्त्वं नदस्यम्बुद-सिंहनादै:।
न युक्तमेतत् प्रियकाड्क्षाताया मार्ग निरोद्धुं मम वर्षपातै :।।29।।

अपि च -

यद्वदहल्याहेतोर्मृषा वदसि शक्र ! गौतमोऽस्मीति ।
तद्वन्ममापि दु:खं निरवेक्ष्य निवार्यतां जलद :।।30।।

अन्वय -:अहम्, किम्, ते पूर्वरतिप्रसक्ता)आसम् (यत्, त्वम् आम्बुदसिंहनादै:, नदसि, प्रियकांक्षिताया:, मम, मार्गम्, वर्षपातै:, निरोद्धुम् एतत् न, युक्तम् **।।29।।**

अन्वय - :हे शक्र, यद्वत्, अहल्याहेतो:, गौतम:, असिम्, इति,) त्वम् (मृषा, वदसि, मम्, अपि, दु:खम्, निरवेक्ष्य तद्वत्, जलद:, निवार्यताम् **।।30।।**

हिन्दी अनुवाद -हे इन्द्र! मैने पहले कभी तुमसे प्रेम भी किया था कि तुम्हारा मेघ सिंह की तरह गरज कर मेरी राह रोकना चाहता है और तुम भी मेघ बरसा कर मुझ विरहिणी की राह रोक रहे हो, क्या यह तुम्हारे लिए उचित है ? **।।29।।**

और भी -ओ देवराज, मुनिपत्नी अहिल्या पर एक बार आसक्त होकर तुमने कैसे झूठ कह दिया

था 'मैं गौतम हूँ'। क्या तुम मुझ विरहिणी के दु:ख को समझ कर मेरी राह के बाधक अपने मेघ को रोक नहीं सकते?**।।30।।**

अपि च

गर्ज वा वर्ष वा शक्र मुञ्च वा शतशोऽशनिम्।
न शक्या हि स्त्रियो रोद्धु प्रसिथता दयितं प्रति ।।31।।
यदि गर्जति बारिधरो गर्जतु तन्नाम निश्ठुरा :पुरूषा :।
अयि विद्युत् ! प्रमदानां त्वमपि च दु:खं न जानासि ?।।32।।

विट -:भवति! अलमलमुपालम्भेन। उपकारिणी एवेयम्।

ऐरावतोरसि चलेव सुवर्णज्जु :
शैलस्य मूर्ध्नि निहितेव सिता पाताका।
आखण्डलस्य भवनोदरदीपिकेयम्
आख्याति ते प्रियतमस्य हि सन्निवेशम् ।।33।।

अन्वय :हे शक्र, गर्ज, वा, वर्ष , वा शतश:, अशनिम्, मुञ्च,) किन्तु (दयितम्, प्रतिप्रस्थिता:, स्त्रिय:, रोद्धम्, न, शक्या:, **हि ।।31।।**

अन्वय -यदि, वारिधर :, गर्जति, तद्, गर्जतु, नाम)यत(: पुरूषा:, निष्ठुरा) :भवन्ति, किन्तु (अयि,विद्युत, त्वमपि,च, प्रमदानाम् दुखम्, न जानासि **।।32।।**

अन्वय :ऐरावतोरसि, चला, सुवर्णरज्जु:, इव, शैलसय, मूर्ध्नि, निहिता, सिता, पताका, इव, आखण्डलस्य, भवनोदरदीपका,इव, ते, प्रियतमसय, सन्निवेशम्, आख्याति, हि **।।33।।**

हिन्दी अनुवाद -और भी– अरे ओ देवराज, चाहे तुम वरसो ,या गरजो, अथवा एक ही साथ सैकड़ौ वज्र ही क्यों न गिरा दो, पर प्रियतम से मिलने के लिए जाती हुई कामिनी को तुम नहीं रोक सकते **।।31।।**

यदि मेघ गरजता है तो उसे गरजने दो, क्योंकि पुरूष तो कठोर होते ही हैं। किन्तु अरी ओ बिजलीतुम नारी होकर भी एक नारी की पीड़ा नहीं जान पायी **।।32।।**

विट -अरी ओ श्रीमती, बिजली की निन्दा तो वेकार ही कर रही हो , यह विचारी तो चमक कर तुम्हें राह दिखला रही है।

ऐरावत हाथी की छाती वा झूलती सोने की चंचल सिकड़ी की तरह, अथवा ऊँचे पहाड़ की चोटी पर गाड़ी गई पताका की तरह या देवराज के घर में जलती प्रकाश रेखा की तरह यह बिजली तुम्हारे प्रियतम के घर की राह तुम्हें दिखला रही हैं **।।33।।**

वसन्तसेना- भाव! एव्वं, तं ज्जेव एदं गेहं।)भाव! एवम्, तदेव एतद् गेहम्।

विट -:सकल-कलाभिज्ञाया न किञ्चिदिह तवोपदेष्टव्यमस्ति। तथापि स्नेह :प्रलापयति। अत्र प्रविश्य कोपोऽत्यन्तं न कर्त्तव्य :।

यदि कुप्यसि नास्ति रति :कोपेन विनाऽथवा कुत :काम:।
कुप्य च कोपय च त्वं प्रसीद च त्वं प्रसादय चकान्तम् ।।34।।

अन्वय -:यदि, कुप्यसि, रति :नास्ति, अथवा कोपेन, विना, कुत:, काम:, त्वम्, कुप्य च कोपय च, त्वम् प्रसीद्च, कान्तम्, प्रसादयच ।।34।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -मान्यवर, आप ठीक ही कहते हैं, यह उन्हीं का घर है।

विट -यद्यपि सम्पूर्ण कलाओं में तुम स्वयं पारंगत हो, तुम्हें कुछ भी सीखाना उचित नही हैं, फिर भी तुम्हारा स्नेह मुझे कुछ कहने को विवश कर रहा है। चारूदत्त के घर में घुस कर तुम्हें अधिक क्रोध नहीं करना चाहिए।

यदि ज्यादा गुस्सा करोगी तो अनुराग ही नहीं जगेगा अथवा विना कुछ गुस्साये रति का आनन्द कहॉ मिलेगा? पहले अपने प्रेमी को थोड़ा क्रुद्ध कर दो, पुन :स्वयं मुँह फुलाओ, फिर मान मनौअल कर खुद खुश हो जाओ और बाद में उन्हें भी प्रसन्न कर दो **।।34।।**

भवतु, एवं तावत्! भो भो! : निवेद्यतामार्य्य चारूदत्तय -

एषा फुल्ल -कदम्ब-नीप-सुरभौ काले घनोद्भासिते
कान्तस्यालयमागता समदना हृष्टा जलाद्रलिका।
विद्युद्वारिदगर्जितै :सचकिता त्वद्दर्शनाकांक्षिणी
पादौ नूपुर-लग्न-कर्दम-धरौ प्रखालयन्ती स्थिता ।।35।।

चारूदत्त -:आकर्ण्य (वयस्य! ज्ञायतां किमेतदिति।

अन्वय :समदना, हृष्टा , जलार्द्रालका, विद्युद्वारिदगर्जितै:, सचकिता :त्वद्वर्शना, कांक्षिणी, एषा, फुल्लकदम्बनीपसुरभौ, घनोद्भासिते, काले, कान्तस्य, आलयम्, आगता, नूपुरलग्नकर्दमधरौ, पादौ, प्रक्षालयन्ती , स्थिता **।।35।।**

हिन्दी अनुवाद-अच्छा, यह तो हुआ, अब आर्य चारूदत्त को भी तो सूचित कर दो -

खिले कदम्ब और नीपतरू की सुगन्ध से तर, बादलों से घिरे इस वर्षाकाल में, कामपीड़िता, प्रसन्नवदना वर्षा में भीगें बाल वाली वसन्तसेना अपने प्रियतम के घर आई है। किन्तु बिजली की चमक और बादलों की गर्जन से आक्रान्त प्रिय मिलन के लिए उत्सुक अपने पायलों में लगे कीचड़ को धोती हुई दरवाजे पर खड़ी है **।।35।।**

चारूदत्त –सुनकर (मित्र; पता तो लगाओ, कैसी आवाज आ रही है ?

विदूषक -:यद्भवानाज्ञापयति। त्वस्ति भवत्यै।

वसन्तसेना -आर्य वन्दे। स्वागतमार्यस्य। भाव! एषा छात्रधारिकाभावस्यैव भवतु।

विट -:स्वागतम् अनेनोपायेन निपुणं प्रेषितोऽस्मि।)प्रकाशम् एवं भवतु। भवति! वसन्तसेने।

साटोप-कूट -कपटानृतजन्मभूमे:
शाठयात्मकस्य रति-केलिकृतालयस्य।
वेश्यापणस्य सुरतोत्सवसङ्ग्रहसय
दाक्षिण्यपण्य-सुख-निष्क्रय-सिद्धिरस्तु ।।36।।

अन्वय -:साटापकुटकपटानृतजन्मभूमे:, शाठयात्मकस्य, रतिकेलिकृतालयस्य सुरतोत्सवसड्ग्रहस्य, वेश्यापणस्य, दाक्षिण्यपण्यसुखनिष्क्रियसिद्धि:, अस्तु **।।36।।**

विदूषक -जैसी आप की आज्ञा वसन्तसेना के पास जाकर, सम्मानपूर्वक श्रीमती का कल्याण हो।

वसन्तसेना -आर्य को प्रणाम है। मैं आपका अभिनन्दन करती हूँ विट को महाशय, यह चेटी अब आपकों सौपती हूँ।

विट -मन मे बड़ी चतुराई के साथ इसने घर लौट जाने को कह दिया सुनकर ठीक है, देवि,छल, कपट और माया के सगर्व उत्पन्न होने की भूमि, जिसकी आत्मा ही धूर्त्तता है, काम क्रीड़ा ही जिसका घर है, संभोग सुख ही जिसका संचय है -उस वेश्या रूपी बाजार की विक्रय वस्तु जवानी का उदारता पूर्वक आदान– प्रदान करो और वह मूल्य दान ही तुम्हारी सिद्धि हो **॥36॥**

2.3. 2 श्लोक संख्या 37 से 45 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

इति निष्क्रान्तो विट :

वसन्तसेना -आर्य मैत्रेय! कस्मिन् युष्माकं द्यूतकर :?

वसन्तसेना -आर्य मैत्रेय,आपके जुआड़ी महाराज कहाँ है ?

विदूषक -:ही ही भो! : द्यूतकर इति भणन्त्या अलंकृत :प्रियवयसय :। भवति! एष खलु शुष्कवृक्ष-वाटिकायाम्।

विदूषक -मन ही मन (वाह, जुआड़ी शब्द से इसने मित्र चारूदत्त को अच्छा अलंकृत कर दिया है। सुनाकर (अरी श्रीमती जी, वे शुष्कवृक्षवाटिका में बैंठे है।

वसन्तसेना -आर्य! का युष्माकं शुष्क-वृक्ष-वाटिका उच्यते ?

वसन्तसेना -आर्य, आप शुष्कवृक्षवाटिका किसे कहते है ?

विदूषक -:भवति! यस्मिन् न खाद्यते न पीयते।

हिन्दी अनुवाद -अरी ओ श्रीमती , जहॉ न कुछ खाया जाता है और न पिया ही जाता है।

वसन्तसेना मुस्कराती है

विट का प्रस्थान

विदूषक -:तत्प्रविशतुभवती।

विदुषक -तो फिर, चलिए भीतर।

वसन्तसेना -अत्र प्रविश्य किं मया भणितव्यम् ?

वसन्तसेना -मुँह फेरकर (हाय, तो उनके सामने जाकर क्या कहूँगी ?

चेटी -द्यूतकर! अपि सुखस्ते प्रदोष:? इति।

चेटी -जुआड़ी जी, आप की यह शाम सुखद तो है ?

विदूषक -: प्रविशतु भवती।

विदूषक -पहले आप भीतर आयें।

वसन्तसेना -अयि द्युतकर! अपि सुखस्ते प्रदोष ?

वसन्तसेना -क्या ऐसा कह पाऊँगी ?

चेटी- समय ही आप से कहवा देगा।

चारूदत्त -अवलोक्य (अये वसन्तसेना प्राप्ता।) सहर्षमुत्थाय अयि प्रिये!

सदा प्रदोषो मम याति जाग्रत:
सदा च मे नि:श्वसतो गता निशा।
त्वया समेतस्य विशाललोचने !
ममाद्य शोकान्तकर :प्रदोषक :।।37 ।।

अन्वय -:सदा, जाग्रत:, च, मम, प्रदोष:, याति, यउस, च, निश्वसत:, मे, निशा गता, विशाललोचने, अद्य, त्वया, समेतस्य, मम, प्रदोषक:, शोकान्तकर:, ।।37।।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना -भीतर आकर, चारूदत्त पर फूल फेककर (ओ जुआड़ी जी, आपकी यह शाम तो सुखद है ?

चारूदत्त– देखकर अरे वसन्तसेना आ गई खुश होकर और उठकर आओ प्रिये आओ।

अरी ओ विशाललोचने, मेरी हर शाम आह भरते और हर रात उसॉस काटते ही बीतती है; पर आज की शाम तुम्हारे साथ रहने से जरूर रंगीन रहेगी **।।37।।**

तत्स्वागतं भवत्यै। इदामासनम, अत्रोपविश्यताम्।

विदूषक -:इदमासनम्, उपविशतु भवती।

विदूषक -बैठिए, श्रीमतीजी, इस आसन पर बैठिए।

वसन्तसेना आसीना। तत :सर्वे उपविशन्ति

आओ, स्वागत है। लो विराजो इस आसन पर ।

वसन्तसेना के बैठने के बाद सभी यथास्थान बैठ जाते है।

चारूदत्त -वयस्य! पश्य पश्य -

वर्षोदकमुद्गिरताश्रवणान्तविलम्बिना कदम्बेन।
एक :स्तनोभिषिक्तो नृपसुत इव यौवराज्यस्थ :।।38।।

अन्वय -:वर्षोदकम्, उद्गिरता, श्रवणान्तविलम्बिना, कदम्बेन, एक:, स्तन:, यौवराज्यस्थ:, नृपसुत:, इव, - अभिषिक्त :**।।38।।**

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त -मित्र, देखो तो -कान में लगे कदम्ब के फूल से टपककर ये वर्षा की बूँदे वसन्तसेना के एक स्तन को ठीक उसी तरह अभिषिक्त कर रही हैं, जैसे राजसिंहासन पर बैठने के लिए किसी युवराज को अभिषिक्त किया जा रहा हो **।।38।।**

वद्वयस्य क्लिन्ने वाससी वसन्तसेनाया :। अन्ये प्रधानवाससी मसुपनीय-तामिति।

तो मित्र , देखो न, वसन्तसेना के सारे कपड़े भीग गये हैं। जाओ, कोई इनके लायक अन्य परिधान ले आओ

विदूषक -यद्भवानाज्ञापयति।

विदूषक -जैसी आपकी आज्ञा।

चेटी -आर्य मैत्रेय। तिष्ठ त्वम्, अहमेवार्या शुश्रूषयिष्यामि।

तथा चेटी -आर्य मैत्रेय, आप रहने दें। मैं ही इनकी परिचर्या करती हूँ।

करोति। वैसा ही करती है

विदूषक -:भो वयस्य! पृच्छामि तावत्तत्रभवती किमपि।
हिन्दी अनुवाद - धीरे से (मित्र, मैं इनसे कुछ पूछना चाहता हूँ ।
चारूदत्त -:एवं क्रियताम्।
चारूदत्त -पूछो।
विदूषक -:अथ किंनिमित्तं पुनरीद्दशे प्रनष्टचन्द्रालोके दुर्दिनान्धकारे आगता भवती ?
विदूषक -सुनाकर चॉदनी रहित सघनमेघ से घिरी इस अकाल वेला में आपका आना कैसे हुआ ?
चेटी -आर्ये! ऋजुको ब्राह्मण:।
चेटी -आर्ये, ये बड़े सीधे ब्राह्मण है।
वसन्तसेना -ननु निपुण इति भण।
वसन्तसेना -सीधे नहीं, चालाक कहो।
चेटी – एषा खलु आर्या एवं प्रष्टुमागता-'कियत्तस्य रत्नावल्या मूल्यम्' इति।
चेटी -आपने जो रत्नावली दी है , उसकी कीमत क्या है। यही जानने को आर्या यहॉ आई है।
विदूषक -: भो! : भणितं मया -यथा अल्पमूल्या रत्नावली, बहुमूल्यं सुवर्णभाण्डकम्, न परितुष्टा, अपरं मार्गयितुमागता।
विदूषक) -धीरे से अजी, मैने तो पहले ही कहा था कि रत्नहार की कीमत इसके आभूषण से कम है, वही वसूलने को यह आई है।
चेटी -सा खलु आर्यया आत्मीयेति भणित्वा द्यूते हारिता स च सभिको राजवार्त्ताहारी न ज्ञायते कुत्र गत इति।
चेटी -उस रत्नहार को अपना समझकर वसन्तसेना जुए में उसे हार गई। उस जुए का सभाध्यक्ष पता नहीं कहॉ चला गया।
विदूषक -भवति! मन्त्रितमेव मन्त्र्यते।
विदूषक सोचता है।
चेटी -यावत् सोऽन्विष्यते, तावदिदमेव गृहाण सुवर्णभाण्डकम्।
चेटी -जब तक उस सभाध्यक्ष को खोजा जा रहा है तब तक आप इस सुवर्ण भाण्ड को ही अपने पास रख लें। सुवर्णभाण्ड दिखलाती है।
चेटी -अतिमात्रमार्यो निष्यायति, तत् किं दृष्टपूर्व ते ?
चेटी -आप इसे बहुत दृष्टि गड़ाकर देख रहे है, क्या पहले भी कभी आपने इसे देखा है ?
विदूषक -श्रीमती जी, रत्नहार देते समय मैंने जो कुछ कहा है, आप उसे ही दुहरा रही है।
विदूषक -:भवति! शिल्पकुशलतया अवबध्नाति दृष्टिम्।
हिन्दी अनुवाद -विदूषक -अरी महरानी ,मैं तो इसकी कारीगरी को देख रहा हूँ ।
चेटी -आर्य ! वक ञ्चितोऽसि दृष्टया। तदेवैतत् सुवर्णभाण्डकम्।
चेटी -आर्य, आपकी ऑखे धोखा दे रही है। यह वही सुवर्णभाण्ड है।
विदूषक -:भो वयस्य! तदेवैतत् सुवर्णभाण्डम्, यदस्माकं गेहे चौरैरपहृतम्।

विदूषक - खुशी के साथ (हे मित्र, यह वही सुवर्णभाण्ड है, जिसे हमारे घर से चोरों ने चुरा लिया था।

चारूदत्त -वयस्य!

योऽस्माभिश्चिन्तितो व्याज :कर्त्तुं न्यासप्रतिक्रियाम्।
स एव प्रस्तुतोऽस्माकं किन्तु सत्यं विडम्बना ।।39।।

अन्वय -:न्यासप्रतिक्रियाम्, अस्माभि:, य:, व्याज:, चिन्तित:, असमाकम्, स :एव व्याज:, प्रस्तुत :किन्तु, विडम्बना इति सत्यम् **।।39।।**

चारूदत्त -मित्र!

सुवर्णभाण्ड धरोहर के लिए हमने जो कपट किया था; रत्नहार के सम्ब्न्ध में इसने भी यही उपस्थित किया है। किन्तु यह एक छलावा है सच नहीं **।।39।।**

विदूषक -:भो वयस्य! सत्यं, शपे ब्राह्मण्येन।

विदूषक -हे मित्र , मैं ब्राह्मणत्व की शपथ खाकर कहता हूँ यह वही आभूषण है।

चारूदत्त -:प्रियं न :प्रियम्

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त -यह तो खुश खबरी है।

विदूषक -:भो! : पृच्छामि ननु कुत इदं समासादितमिति ?

विदूषक -कान में (मैं इससे पूछता हूँ– 'इसने इसे कहाँ पाया।'

चारूदत्त -:को दोष :?

चारूदत्त -इसमें भला क्या हर्ज है ?

विदूषक -:एवमिव।

विदूषक - चेटी के कान में (ऐसी बात है) हमारे घर से चुरा कर किसी ने उन्हें दे दिया

चेटी -एवमिव।

चेटी -विदूषक के कान में (हॉ, भई बात कुछ वैसी ही है।

चारूदत्त -: किमिदं कथ्यते ?। किं वयं बाह्या :?

चारूदत्त -आप दोनों कानाफूसी क्यों कर रहे हैं ? क्या हम पराये है ?

विदूषक -: एवमि व।

विदूषक -चारूदत्त के कान में बात ऐसी ही है।

चारूदत्त -: भद्रे! सत्यं तदेवेदं सुवर्णभाण्डम् ?

चारूदत्त -क्यों कल्याणि, यही बात है।

चेटी -आर्य! अथ किम् ?

चेटी -हॉ, महाशय यह वही आभूषण है।

चारूदत्त -:भद्रे! न कदाचित् प्रियनिवेदनं प्रियनिवेदनं निष्फलीकृतं मया। तदृह्यतां पारितोषिकमिदमङ्गुलीयम्।

इत्यनङ्गुलीयकं इस्तमवलोक्य लज्जां नाटयति

चारूदत्त -भद्रे, मैंने कभी किसी के प्रियवचन खाली नहीं जाने दिया, लो यह अँगूठी तुम्हारा पुरस्कार है। हाथ में अँगूठी नहीं देखकर लज्जा का अभिनय करता है।

वसन्तसेना -अत एव काम्यसे।

वसन्तसेना -मन ही मन तुम्हारी इसी अदा पर तो फिदा हूँ।

चारूदत्त -:जनान्तिकम् भो! : कष्टम्।

धनैर्वियुक्तसय नरस्य लोके किं जीवितेनादित एव तावत्।
यस्य प्रतीकारनिरर्थकत्वात् कोपप्रसादा विफलीभवन्ति ।।40।।

अपि च -

पक्षविकलश्च पक्षी, शष्कश्च तरू :सरश्च जलहीनम्।
सर्पश्चोद्धृतदंष्ट्रस्तुल्यं लोके दरिद्रश्च ।।41।।

अन्वय:- लोके, धनै:, वियुक्तस्य , नरस्य ,आदित, एव, जीवितेन, किम् , तावत्, प्रतीकारनिरर्थकत्वात्, यस्य, कोपप्रसादा:, विफलीभवन्ति **।।40।।**

अन्वय -:पक्षविकल:, पक्षी, च, शुष्क:, तरू:, च, जलहीनम्, सर:, च, उद्धृतदंष्ट्र:, सर्प:, दरिद्र :च, लोके, तुल्यम्, **भवति ।।41।।**

चारूदत्त -धीरे से (खेद है-

संसार में गरीबों का जन्म ही बेकार है। क्योंकि , वह किसी पर न तो खुश होकर कुछ दे ही सकता है और न बिगड़ कर कुछ बिगाड़ ही सकता है।।40।।

और भी -संसार में गरीबों की जिन्दगी, पंखहीन पखेरू, सूखे पेड़, सूखे तालाब एवं विषदन्त विहीन सॉप की तरह बेकाम है **।।41।।**

अपि च-

शून्यैर्गृ है :खलु समा :पुरूषा दरिद्रा :
कूपैश्च तोयरहितैस्तयभिश्च शीर्णे :।
यद् कृष्टपूर्व-जन-सङ्गम -विस्मृताना-
मेवं भवन्ति विफला :परितोषकाला :।।42।।

अन्वय : शूनयै:, गृहै:, तोयरहितै:, कूपै:, शीर्णै:, तरूभिश्च, समा :दरिद्रा :पुरूषा :खलु, यद्, दृष्टपूजनसङ्गमविसमृतानाम्, परितोषकाला:, एवं विफला :भवन्ति ।।42।।

हिन्दी अनुवाद -और भी - गरीब आदमी तो सूने घर, सूखे पेड़ , जलहीन कुँए की तरह बेकार हैं जिन्हें पूर्वपरिचित लोग भी पहचान नही पाते। खुश होकर भी वे किसी को कुछ दे नहीं पाते **।।42।।**

विदूषक -:भो! : अलमतिमात्रं सन्तापितेन। भवति ! समर्प्यतां मम स्नानशाटिका।

विदूषक -भाई बककार पछताने से अब क्या फायदा ? सबको सुनाकर, हँसते हुए श्रीमति जी, अब तो हमारी स्नान साड़ी लौटा दीजिए।

वसन्तसेना -आर्य चारूदत्त! युक्तं नेदम् अनया रत्नावल्या इमं जनं तूलयितुम्।

वसन्तसेना -आर्य चारूदत्त, रत्नहार भेजकर अपने जो मुझे तौलने की चेष्टा की, वह उचित नहीं है।

चारूदत्त -सविलक्षस्मितम् वसन्तसेने! पश्य पश्य –

क :श्रद्धास्यति भूतार्थ सर्वो मां तूलयिष्यति।

शड्कनीया हि लोकेऽस्मिन् निष्प्रतापा दरिद्रता ।।43।।

अन्वय - :क:, भूतार्थम्, श्रद्धास्यति , सर्व:, माम्, तूलयिष्यति, हि, अस्मिन्, लोके, निष्प्रतापा, दरिद्रता, शड्कनीया **।।43।।**

हिन्दी अनुवाद-चारूदत्त-लजाते हुए, मुस्कुराकर देखो, वसन्तसेने।

हमारी बात पर भला विश्वास ही कौन करता ? सभी तो मुझे ही बेइमान समझते। क्योंकि, इस संसार में गरीबी सबके सन्देह का घर **है ।।43।।**

विदूषक -:हञ्जे किं भवत्या इहैव स्वप्तव्यम् ?

विदूषक -चेटी जी, आपकी श्रीमती वसन्तसेना रात में यही सोयेगी क्या ?

चेटी-आर्य मैत्रेय! अतिमात्रमिदानीम् ऋजुमात्मानं दर्शयसि।

चेटी -हंसकर आर्यमैत्रेय, इतने भोले-भाले क्यों बन रहे हो ?

विदूषक -:भो वयस्य! एष खलु अपसारयन्निव सुखोपविष्टं जनं पुनरपि विस्तारिवारि-धाराभि : प्रविष्ट :पर्जन्य :।

विदूषक -मित्र, देखते नहीं , सुख से बैठे लोगों को हटाते हुए ये बादल अपनी बढती हुई जलधारा के साथ घिर आये हैं।

चारूदत्त -सम्यगाह भवान्।

चारूदत्त -ठीक कहते हो, मित्र!

अमूर्हि भित्वा जलदान्तराणि पड्कान्तराणीव मृणालसूच्य :।

पतन्ति चन्द्रव्यसनाद्विमुक्ता दिवोऽश्रुधारा इव वारिधारा :।।44।।

अपि च -

धाराभिरार्यजनचित्तसुनिर्म्मलाभि -

श्चण्डाभिरर्जुन-शर-प्रतिकर्कशाभि-:

मेघा :स्रवन्ति बलदेव-पट-प्रकाशा :

शक्रस्य मौक्तिकनिधानमिवोद्गिरन्त :।।45।।

अन्वय -हि, अमू:, वारिधारा:, मृणालसूच्य :पड्कान्तराणि,इव, जलदान्तराणि, भित्वा, चन्द्रव्यसनात्, विमुक्ता:, दिव:, अश्रुधारा :इव पतन्ति **।।44।।**

अन्वय -:बलदेवपटप्रकाशा:, मेघा :आर्यजनचित्तसुनिर्मलाभि:, अर्जुनशरप्रतिकर्कशाभि:, चण्डाभि:, धाराभि:, शक्रस्य, मौक्तिकनिधानम्, उदगिरन्त:, इव, स्रवन्ति **।।45।।**

हिन्दी अनुवाद -निश्चय ही कीचड़ को चीरकर निकली कमललता की जड़ के अंकुर की तरह बादल के पेट को चीरकर निकली ये जलधाराएँ आकाश की ऑखों से चूते मानो ऑसू की

धारा है अपने प्रेमी चन्द्रमा पर आई विपत्ति के कारण ही उसने ऐसा किया है ।।44।।

हिन्दी अनुवाद – और भी बलदेवजी के नीले वस्त्रों की कान्ति की तरह ये मेघ सज्जनों के चित्त की तरह निर्मल तथा अर्जुन के प्रचण्डबाणों की तरह कठोर एवं तीखी धाराओं से मानों इन्द्र के मोतियों के खजाने को लुटा रहा है ।।45।।

2.3. 3श्लोक संख्या 46 से 52 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

प्रिये ! पश्य पश्य -

एतै :पिष्ट-तमाल-वर्णकनिभैरालिप्तमम्भोधरै :
संसक्तैरूपवीजितं सुरभिभि :शीतै :प्रदोषानिलै:।
एषाऽम्भोद-समागम-प्रणयिनी स्वच्छन्दमभ्यागता
रक्ता कान्तमिवाम्बरं प्रियतमा विद्युत् समालिङ्गित ।।46।।
वसन्तसेना श्रृङ्गारभावं नाटयन्ती चारूदत्तमालिङ्गति। (चारूदत्त) -:स्पर्श नाटयन्, प्रत्यलिङ्गय
भो मेघ ! गम्भीरतरं नद त्वं तव प्रसादात् स्मरपीडितं मे ।
संस्पर्शरोमाचितजातरागं कदम्बपुष्पत्वमुपैति गात्रय् ।।47।।

अन्वय– : अम्भोदसमागमप्रणयिनी, स्वच्छन्दम्, अभ्यागता, रक्ता, प्रियतमा, इव, एषा, विद्युत्, पिष्टतमालवर्णकनिभै:, एतै:, अम्भोधरै:, आलिप्तम्, संसक्तै :सुरभिभि:, शीतै:, प्रदोषानिलै:, उपवीजितम्, च, कान्तम्, इव, अम्बराम् समालिङ्गति ।। 46।।

अन्वय-:भो मेघ , त्वम्, गम्भीरतरम्,नद । तव, प्रसादात्, स्मरपीडितम्, में, गात्रम्, संस्पर्शरोमाञ्चितजातरागम्, कदम्बपुष्पत्वम् उपैति ।।47।।

हिन्दी अनुवाद -प्रिये, देखो देखो -मेघ के संगम की प्रबल इच्छावाली, अपनी इच्छा से आई हुई, अनुरक्ता यह विजली रूपी प्रियतमा, पत्थरों पर कूटे तमालपत्र की तरह काले मेघों से अनुलिप्त तथा एकीभूत सुरभित, शीतल सान्ध्यपवन से पंखा झले जाते हुए आकाशरूपी प्रियतम का आलिंगन कर रही है ।।46।।

वसन्तसेना कामुक भावना प्रदर्शित करती हुई चारूदत्त का आलिंगन करती है

चारूदत्त -स्पर्श का अनुभव करते हुए आलिंगन करता है

हे मेघ, तुम और जोर से गरजो। तुम्हारी कृपा से काम पीडित मेरी देह वसन्तसेना के सम्पर्क से रोमांचित एवं पुलकित हो उठी है, लगता है जैसे कदम्बवृक्ष विकसित फूलों से लदा है ।47।।

वर्षशतमस्तु दुर्दिनमविरतधारं शतह्रदा स्फुरतु।
अस्मद्विधदुर्लभया यदहं प्रियया परिष्वक्त :।।48।।

अपि च -वयस्य !

धन्यानि तेषां खलु जीवितानि ये कामिनीनां गृहमागतानाम्।
आर्द्राणि मेधोदकशीलानि गात्राणि गात्रेषु परिष्वजन्ति ।।49।।

अन्वय -:अविरतधारम्, दुर्दिनम्, वर्षशतम् अस्तु, शतह्रदा, स्फुरतु, यत्, अहम्, अस्मद्विधदुर्लभ्या, प्रियया, परिष्वक्ता :**।।48।।**

अन्वय - :तेषाम्, जीवितानि, खलु, धन्यानि, ये गृहम्, आगतानाम्, कामिनीनाम्, मेघोदकशीतलानि, गात्राणि , गात्रेणि, गात्रेषु, परिष्वजन्ति **।।49।।**

हिन्दी में अनुवाद -लगातार मेघ सैकड़ों साल तक बरसते रहें , विजलियॉं चमकती रहें, क्योंकि , मेरे जैसे गरीब के लिए दुर्लभकामिनी वसन्तसेना ने इसी दुर्दिन के कारण मुझे आलिंगित किया है **।।48।।**

और भी मित्र -!उन्हीं लोगों का जीवन धन्य है जिसके दरवाजे पर वर्षा में भीगकर अपनी इच्छा से कोई कामिनी उपस्थित हो तथा भीगी और ठंडी अपनी देह को बाहों में जकड़कर गर्मी पहुँचाने का उन्हें मौका दे ।।49।।

विदूषक -:दास्या :पुत्र! दुर्दिन ! अनार्य इदानीमसि त्वम्, यदत्र भवती विद्युता भाययसि।

विदूषक-अरे दासीपुत्र दुर्दिन, तुम बड़े दुष्ट हो , अपनी बिजली से अकारण श्रीमती वसन्तसेना को डरा रहे हो।

चारूदत्त -:वयस्य! नार्हस्युपालब्धुम्

चारूदत्त – मित्र , इस तरह इस मेघ को नहीं कोसना चाहिए।

प्रिय ! वसन्तसेने !

स्तम्भेषु प्रचलित-वेदि -सञ्चयान्तं
शीर्णत्वात् कथमपि धार्यते वितानम्।
एषा च स्फुटित -सुधा-द्रवानुलेपात्
संक्लिन्ना सलिल-भरेण चित्रभित्ति:।।50।।

ऊद्र्ध्वमवलोक्य अये! इन्द्रधनु :। प्रिये! पश्य पश्य –

विद्युज्जिह्वेनेदं महेन्द्रचापोच्छ्रितायतभजेन।
जलधर-विवृद्ध-हनुना विजृम्भितमिवान्तरीक्षेण ।।51।।

अन्वय -:प्रचलितवेदिसञ्चयान्तम्, वितानम्, शीर्णत्वात्, स्तम्भेषु, कथमपि, धार्यते, एषा, चित्रभित्ति:, च, स्फुटितसुधाद्रवानुलेपात्, सलिलभरेण, सङ्क्लिन्ना ।।50।।

अन्वय- :विद्युज्जिह्वेन, महेन्द्रचापोच्छ्रितायतभुजेन, जलधरविवृद्धहनुना, अन्तरीक्षेण, विजृम्भितम्,**।।51।।**

हिन्दी अनुवाद -प्रिय वसन्तसेने - !वेदिकाओं के भीतरी भागवाला पुराना वितान हवा की झोंकों से कॉंप रहा है। उसके भार को ये पुराने खूँटे अब ढो नहीं रहे हैं और ये भित्ति चित्र भी चूना गलने के कारण भीतर से बलबला उठे है **।।50।।**

ऊपर की ओर देखकर अहा,प्रियतमे देखो तो -

लगता है जैसे मेघ नहीं बरस रहा है बल्कि आकाश ने मुँह खोलकर जंभाई ली है। लाल-लाल विजलियॉं ही इनकी लपलपाती जीभ हैं, इन्द्रधनुष ही इनकी विशाल बाहें हैं, मेघ का

फैलाव ही इनकी दाढी है **।।51।।**

तदेहि, अभ्यन्तरमेव प्रविशाव :। इत्युत्थाय परिक्रमति ।

तालीषु तारं विटपेषु मन्द्रं शिलासु रूक्षं सलिलेषु चण्डम्।

संगीतवीणा इव ताडयमानास्तालानुसारेण पतिन्त धारा :।।52।।

अन्वय-:तालानुसारेण, ताडयामाना:, संगीतवीणा, इव, धारा, तालीषु, तारम्, विटपेषु मन्द्रम्, शिलासु, रूक्षम्, सलिलेषु चण्डम्, पतन्ति **।।52।।**

इसलिए चलो अब हमलोग भीतर ही चलें। उठकर घूमता है।

बरसा की धारा ताल के पत्तों पर ऊँची आवाज से, पेडों की डालियों पर गंभीर, पत्थर की चट्टानों पर कर्कश तथा जल में प्रचण्डध्वनि के साथ बजायी गई संगीत वीणा की तरह तालlय के साथ गिर रही हैं **।।52।।** सब निकल जाते हैं।

अभ्यास प्रश्न –

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर सही उत्तर दीजिए।

1. जलधर का अर्थ होता है।

क . हवा ख. पृथ्वी ग. मेघ घ. वर्षा

2. वर्षति का शब्दार्थ है –

क. बरसाता है ख . बरस गया है ग . बरसता है घ . वर्षा

3. शक्र शब्द प्रयुक्त हुआ है -

क . राजा के लिए ख . इन्द्र के लिए ग . विष्णु के लिए घ . परशुराम के लिए

4. प्रदोष शब्द का तात्पर्य है –

क.संध्या ख . रात्रि का मुख ग . अर्धरात्रि घ . कोई नहीं

निम्नलिखित के एक शब्द मेंउत्तर दीजीए -

1. चारूदत्त ने विशाल लोचना किसे कहा है-
2. ब्रह्मत्व की शपथ कौन खाता है-
3. गरीब लोग किसकी तरह बेकार है -
4. वसन्तसेना ने चारूदत्त का अलिंगन किस कारण किया
5. सलिल का अर्थ है -

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि पहले पहल सम्पत्तिपाये पुरूष की तरह ये बादल अनेक रूप धारण कर रहा है। कभी तो ऊपर उठकर सारे आकाश को घेर लेता है और कभी नीचे की ओर झूककर फैल जाता है। कभी वरसते है तो कभी गरजते है। कभी घोर अन्धकार से सम्पूर्ण आकाश के आयाम को ढँक लेताहै।जिस पर जबाव देते हुए विट कहता है -बात तो ऐसी ही है - आकाश, मानो विजलियों से जल रहा है; बगुलों की सैकड़ो पॉतों से खिलखिलाकर हंस

रहा है, धारारूपी बाणों को वर्षाकर इन्द्रधनुष उठाये पैतरा बदल रहा है, बज्रनिर्घोष से सिंहनाद कर रहा है, वायु के रूप में क्रुद्धहोकर घूम रहा है, करैत सॉप की तरह काले बादलों से कृष्ण धूम सेवन कर रहा है। इन्हीं सब सम्वादों के क्रम में चारूदत्त और वसन्तसेना तथा विदूषक आदि के सम्वादों के साथ इस प्रकार पंचम्अंक की समाप्ति होती है जैसे -चारूदत्त का यह कथन - लगातार मेघ सैकड़ों साल तक बरसते रहें , विजलियॉ चमकती रहें, क्योंकि , मेरे जैसे गरीब के लिए दुर्लभकामिनी वसन्तसेना ने इसी दुर्दिन के कारण मुझे आलिङ्गत किया है।

और भी मित्र -!उन्हीं लोगों का जीवन धन्य है जिसके दरवाजे पर वर्षा में भीगकर अपनी इच्छा से कोई कामिनी उपस्थित हो तथा भीगी और ठंडी अपनी देह को बाहों में जकड़कर गर्मी पहुँचाने का उन्हें मौका दे। बरसा की धारा ताल के पत्तों पर ऊँची आवाज से, पेडों की डालियों पर गंभीर, पत्थत की चट्टानों पर कर्कश तथा जल में प्रचण्डध्वनि के साथ बजायी गई संगीत वीणा की तरह तालल्य के साथ गिर रही हैं। अत :प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप पंचम अंक की विशेषताओं को बताते हुए यह भी समझा सकेगें की चारूदत्त और वसन्तसेना का मिलन किस प्रकारहोता है।

2. 5 पारिभाषिक शब्दावली

तालीषु – ताल के पत्तों पर

रूक्षं - कर्कश

प्रसादात् – कृपा से

प्रदोषनिलै: - सांयकाल की हवाओं से

वर्षोदकम् - वर्षा के जल को

2. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग मेघ 2.ग बरसता है 3.ख इन्द्र के लिए 4. ख रात्रि का मुख

1.वसन्तसेना 2 .विदूषक 3.जलहीन कुआ 4. दुर्दिन 5.जल

2.7 संदर्भग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् –हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ 0रमा शंकर मिश्र– चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी 2. मृच्छकटिकम -हिन्दी व्याख्या हित , डॉ 0जगदीशचन्द्र मिश्र -चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2. 8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. श्लोक संख्या 27,28, एवं 32का संदर्भ सहित अनुवाद कीजिए।
2. इस इकाई के आधार पर मेघ एवं वर्षा वर्णनकी व्याख्या कीजिए।
3. पठितअंश के आधार दुर्दिन का वर्णन कीजिए।

इकाई -3

मृच्छकटिकम् षष्ठ अंक श्लोक 1 से 14 तक मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3. 3 श्लोक संख्या 1 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

3.3.1 श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

3.3.2 श्लोक संख्या 6 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

3.3.3 श्लोक संख्या 11 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

3.4 सारांश

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भग्रन्थ

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3. 1 प्रस्तावना

चेटी के द्वारा वसन्तसेना को जगाये जाने का मंच पर अभिनय करते हुए मृच्छकिटम् के छठे अंक का प्रारम्भ हुआ है उसी वर्णन के संबन्ध में श्लोक संख्या 1से लेकर 14 तक के सम्वादों का अध्ययन इस इकाई के अन्तर्गत आपको करना है। चेटी और वसन्तसेना का सम्वाद रदनिका और बालक के सम्वाद श्लोक संख्या 1 से पूर्व प्राप्त हैं।

चेट का कथन श्लोक संख्या 1से प्रारम्भ होकर आर्यक के साथ युग्मक और वीरक के सम्वादों से होता हुआ आगे चन्दनक के वार्तालाप को प्राप्त करता है इन्ही सब सम्वादों के मध्य श्लोक संख्या के 14 तक के वर्णन सीमित हैं।

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप यह बतायेगें कि छठे अंक के इन पात्रों के कथनों में कितना शिष्टाचार,कितनी सामाजिक विशेषताए और कितने प्रकार के साहित्यिक वैशिष्ट्य बताये गये हैं।

3. 2 उद्देश्य

छठे अंक से सम्बन्धित इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप बता सकेंगे कि—

- ❖ वसन्तसेना बैलगाडी द्वारा कहॉ गयी।
- ❖ रदनिका का क्या सम्बन्ध है।
- ❖ बालक नामक पात्र की क्या भूमिका है।
- ❖ रदनिका और वसन्तसेना के बीच वार्तालाप क्या है।
- ❖ चौदह श्लोक तक सम्पूर्ण सम्वाद का क्या तात्पर्य है।

3. 3 श्लोक संख्या 1 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

इस इकाई के अन्तर्गत मृच्छकटिकम् के छठे अंक में मिट्टी की गाड़ी का तात्पर्य परिलक्षित होगा जिसमें विभिन्न पात्रों के सम्वादों से परिचित होते हुए प्रकरणनाटक की सम्पूर्ण नाटकीयता को समझने का पर्याप्त अवसर प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अन्य सम्वादों में भी बहुत से शिष्टाचार प्राप्त होते है।

3.3.1 श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

संस्कृत भाग – पात्रों का सम्वाद

तत :प्रविशति चेटी।

चेटी- कथमद्यापि आर्या न विवुध्यते। भवतु, प्रविश्य प्रतिबोधयिष्यामि।

तत :प्रविशति आच्छादितशरीरा प्रसुप्ता वसन्तसेना।

चेटी -उत्तिष्ठतु उत्तिष्ठतु आर्या। प्रभातं संवृत्तम्।

वसन्तसेना –कथं रात्रिरेव प्रभातं आर्याया :पुना रात्रिरेव।

वसन्तसेना कस्मिन् पुनर्युष्मार्क द्यूतकर :?

चेटी -आर्ये! वर्द्धमानकं समादिश्य पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं गत आर्य चारूदत्त :।

वसन्तसेना -किं समादिश्य ?

चेटी -योजय रात्रौ प्रवहणम्। वसन्तसेना गच्छतु इति।

वसन्तसेना -कस्मिन् मया गन्तव्यम् ?

चेटी -आर्ये! यस्मिन् चारूदत्त :।

वसन्तसेना -हञ्जे ! सुष्ठु न निध्यातो रात्रौ। तदद्य प्रत्यक्षं प्रेक्षिष्ये। हञ्जे ! किं प्रविष्टा अहमिह अभ्यन्तरचतु:शालकम् ?

चेटी -न के केवलमभ्यन्तरचतु:शालकम्, सर्वजनसयापि हृदयं प्रविष्टा।

वसन्तसेना -अपि सन्तप्यते चारूदत्तस्य परिजन :?

चेटी -सन्तप्स्यति।

वसन्तसेना -कदा?

चेटी –यदा आर्या गमिष्यति।

वसन्तसेना -ततो मया प्रथमं सन्तप्तव्यम्। हञ्जे ! गृहाण एतां रत्नावलीं मम भगिन्ये आर्याधूतायै गत्वा समर्पय, वक्तव्यञ्च 'अहं श्रीचारूदत्तस्य गुणनिर्जिता दासी ,तदा युष्माकमपि। तदेषा तवैवकण्ठाभरणं भवतु रत्नावली।

चेटी -आर्ये! कुपिष्यति चायदत्त आर्यायै तावत्।

वसन्तसेना -गच्छ ,न कुपिष्यति।

चेटी – यदाज्ञापयति। आर्ये ! भणत्यार्या धूता -'आर्यपुत्रेण युष्माकं प्रसादीकृता न युक्तं ममैतां ग्रहीतुम्। आर्यपुत्र एव मम आभरणविशेष इति जानातु भवती।

रदनिका -एहि वत्स! शकटिकया क्रीडाव:।

दारक -:रदनिके! किं मम एतयामृत्तिकाशकटिकया; तामेव सौवर्णशकटिका देहि।

रदनिका -जात! कुतोऽस्माकं सुवर्णव्यवहार :? तातस्य पुनरपि ऋद्धया सुवर्णशकटिकया क्रीडिष्यसि। तद्यावद्विनोदयाम्येनम्। आर्याया वसन्तसेनाया :समीपमुपसर्पिव्यामि। आर्ये! प्रणमामि।

वसन्तसेना -रदनिके! स्वागतं ते। कस्य पुनरयं दारक :? अनलङ्.कृतशरीरोऽपि चन्द्रमुख आनन्दयति मम हृदयम्।

रदनिका -एष खलु आर्यचारूदत्तस्य पुत्रो रोहसेनो नाम।

वसन्तसेना -एहि मे पुत्रक! आलिङ्.ग। अनुकृतमनेन पितु :रूपम्।

रदनिका -न केवलं रूपम्, शीलमपि तर्कयामि। एतेन आर्य चायदत्त आत्मानं विनोदयति।

वसन्तसेना -अथ किंनिमित्तमेष रोदिति।

रदनिका -एतेन प्रतिवेशिकगृहपति-दारकस्य सुवर्णशकटिकया क्रीडितम्। तेन चसा नीता। तत : पुनस्तां मार्गयतो सयेयं मृत्तिकाशकटिका कृत्वा दत्ता। ततो भणति -'रदनिके! किं मम एतयामृत्तिका-शकटिकया, तामेव सौवण-शकटिका देहि' इति।

वसन्तसेना -हा धिक्, हा धिक ! अयमपि नाम परसम्पत्या सन्तप्यते। भगवन् ! कृतान्त ! पुष्करपत्र -पतित- जलबिन्दु - सदृशै:क्रीडसि त्वं पुरूषभागधेयै :। जात! मा रूदिहि, सौवर्णशकटिकया क्रीडिष्यसि।

दारक - :रदनिक! का एषा ?

वसन्तसेना -पितुस्ते गुणनिर्जिता दासी।

रदनिका -जात! आर्या ते जननी भवति।

दारक -:रदनिके! अलीकं त्वं भणसि, यद्यस्माकमार्या जननी , तत् केन अलंकृता ?

वसन्तसेना -जात! मुग्धेन अतिकरूणं मन्त्रयसि। एषां इदानी ते जननी संवृत्ता । तद् गृहाणैतमलङ्.कारकम्, सौवर्णशकटिका घटय।

दारक -:अपेहि, न ग्रहीष्यामि, रोदिषि त्वम्।

वसन्तसेना -जात! न रोदिष्यामि। गच्छ् क्रीड। जात ! कारय सौवर्णशकटिकाम्।

इति दारकमादाय निष्क्रान्ता रदनिका।प्रविश्य प्रवहणाधिरूढ :।

चेट -रदनिके, रदनिके! निवेदय आर्यायै वसन्तसेनायै-'अपवारितं पक्षद्वारके सज्जं प्रवहणं तिष्ठति '।

रदनिका -आर्ये! एष बर्द्धमानको विज्ञापयति -'पक्षद्वारे सज्जं प्रवहणम्' इति।

वसन्तसेना -हञ्जे! तिष्ठतु मुहूर्त्तकम्, यावदहमात्मानं प्रसाधयामि।

रदनिका -वर्द्धमानक! तिष्ठ मुहूत्तर्कम्। यावदार्या आत्मानं प्रसाध्यति।

चेट -:ही ही भो! : मयापि यानास्तरणं विस्मृतम्, तत् यावद् गृहीत्वा आगच्छामि । एते **नस्यरज्जु-कटुका बलीबर्द्दा:। भवतु प्रवहणेनैव गतागति करिष्यामि।**

वसन्तसेना -हञ्जे ! उपनय मे प्रसाधनम्, आत्मानं प्रसाधयिष्यामि। ।

चेट -:आज्ञप्तोऽस्मि राज-श्यालक-संस्थानेन-'स्थावरक! प्रवहणं गृहीत्वा पुष्पकरण्डकं जीणोग्द्यानं त्वरितमागच्छ ' इति । भवतु, तत्रैव गच्छामि। बहतं बलवदौ :। वहतम् कथं ग्रामशकटै :रूद्धो मार्ग:। किमिदानीमत्र करिष्यामि ? इति। एतद् राजश्यालक संसथानस्य प्रवहणमिति ।तत् शीघ्रमपसरत । कथम् एष :अपर :सभिकमिव मां प्रेक्ष्य सहसैव द्युतप इव द्युतकर :अपवार्यात्मानम् अन्यत :अपक्रान्त:। तत् क :पुनरेष:? अथवा किं मम एतेन ? त्वरितं गमिष्यामि । अरे रे राज-श्यालक-संस्थानस्य अहं शूर:, चक्रपरिवृत्ति दास्यामि ? अथवा एष एकाकी तपस्वी ।तदेवं करोमि, एतत् प्रवहणमार्यचारूदत्तस्य वृक्षवाटिकाया :पक्षद्वार के स्थापयामि । एषोऽस्मि आगत:।

चेटी -आर्ये! नेमिशब्द इव श्रुयते, तदागतं प्रवहणम्।

वसन्तसेना -हञ्जे ! गच्छ, त्वरते मे हृदयम्। तदादेशय पक्षद्वारकम्।

चेटी -एतु एतु आर्या।

वसन्तसेना -किंन्विदस्फुरति दक्षिणं लोचनम् ? अथवा चारूदत्तस्यैव दर्शनमनिमित्तं प्रमार्जयिष्यति।

स्थावरकश्चेट - :अपसारिता मया शकटा:। तद् यावद् गच्छामि। भारिकं प्रवहणम्। अथवा चक्र-परिवृत्तिकया परिश्रन्तस्य भारिकं प्रवहणं प्रतिभासते। भवतु , गमिष्यामि । यातं गावौ ! यातम्। अरे रे दौवारिका! : अप्रमत्ता :स्वकेषु स्वकेषु गुल्मस्थानेषु भवत। एषोऽद्य गोपालदारको गुप्तिं भड्.कत्वा, गुप्तिपालकंव्यापाद्य,बन्धनं भित्वा, परिभ्रष्ट :अपक्रामति। तद्गृह्णीत।

संस्कृत से हिन्दी भाग – पात्रों का सम्वाद

हिन्दी अनुवाद – इसके बाद मंच पर चेटी का प्रवेश

चेटी-क्या कभी तक आर्या वसन्तसेना सोयी है ? अच्छा चलकर उन्हें जगाती हूँ। अभिनय पूर्वक मंच पर घूमती है। इसके बाद चादर से देह ढँककर वसन्तसेना सोई हुई दिखलाई पड़ती है।

चेटी- देखकर (आर्ये, उठो , उठो सवेरा हो गया।

वसन्सेना- जगकर (क्या रात ही भोर हो गई है ?

चेटी – हमलोगं के लिए तो सबेरा हो गया , किन्तु श्रीमति के लिए अभी रात है ही।

वसन्तसेना -अच्छा तो तुम्हारे जुआरी जी कहॉं चले गये ?

चेटी -वर्द्धमानक को हुक्म देकर स्वयं आर्य चारूदत्त पुष्पकरण्डक नामक पुरानी वाटिका में गये है। वसन्तसेना -क्या कहकर गये है ?

चेटी -अगली रात के लिए बैलगाड़ी ठीक करो। आर्या वसन्तसेना उस पर सवार होकर जायेगी।

वसन्तसेना-अरी, मुझे कहॉं जाना होगा ?

चेटी -मान्ये, जहॉं आर्य चारूदत्त गये है।

वसन्तसेना -चेटी को गले लगाकर (रात में उन्हें मैने ठीक से नहीं देखा, अत :आज दिन में उन्हें अच्छी तरह देखूंगी। सखी यह तो बतलाओ क्या मैं अभी उनके अन्त:पुर में हूँ ?

चेटी -केवल अन्त:पुर में ही नहीं, बल्कि आप हम सबों के दिल में समा गई हैं।

वसन्तसेना -क्या आर्य चारूदत्त के परिचर हमारे यहॉं आने से दु:खी है ?

चेटी – है नहीं , पर दु:खी होंगे।

वसन्सेना -कब ?

चेटी -जब आप यहॉं से जायेंगी ?

वसन्तसेना -तो सबसे पहले तो मुझे ही दु:खी होना चाहिए। विनम्र भाव से सखि, यह रत्नहार लो और मेरी ओर से मेरी बहन, आर्य चारूदत्त की धर्मपत्नी आर्या धूता को सौप दो। उनसे कहना-आर्य, चारूदत्त के गुणों से खिचकर मैं उनकी दासी बनकर यहॉं आई हूँ। मैं उनकी दासी हूँ, अत :आर्या धूता की भी दासी हूँ। इस लिए यह रत्नहार उनके गले ही शोभेगा।

चेटी -आर्ये, तो फिर आर्य चारूदत्त मान्या धूता पर नाराज होगे।

वसन्तसेना -जाओ न, वे बिल्कुल नाराज नहीं होंगे।

चेटी -हार लेकर (अब आप जैसा कहे) बाहर निकल जाती है और कुछ क्षण के बाद पुन : लौटकर आ जाती है। उनका कहना है कि 'आर्यपुत्र ने प्रसन्न होकर यह हार आपके दिया है, अत :इसे आप से पुन :लौटा लेना उचित नहीं। फिर उन्होने कहा कि आर्यपुत्र ही मेरे लिये

सर्वश्रेष्ठ आभूषण है, ऐसा आपको जानना चाहिए।
इसके बाद रदनिका बालक को लेकर मंच पर आती है।
रदनिका -आओ बेटे, इस गाडी से हम लोग खेले।
बालक –सकरूण भाव से (रदनिके, मुझे इस मिट्टी की गाडी से क्या मतलब? मुझे तो वही सोने वाली गाड़ी चाहिए।
रदनिका - गहरी साँस लेकर , दु:ख के साथ (बेटे , हमारे घर सोने का व्यवहार कहॉ ? तुम्हारे पिताजी पर जब भाग्यलक्ष्मी खुश होगी , तब फिर सोने की गाड़ी से खेलना। तो इस का तब तक जी बहलाऊँ। आर्या वसन्तसेना के पास ही ले चलूँ ? पास जाकर मान्ये , प्रणाम करती हूँ।
वसन्तसेना -आओ रदनिके , स्वागत है। यह बच्चा किसका है ? निराभरण होते हुए भी इसकी आकृति आकर्षक है। यह मेरे हृदय को आनन्दित कर रहा है।
रदनिका -यह आर्य चारूदत्त का पुत्र रोहसेन है।
वसन्तसेना - बॉहे फैलाकर (मेरे बेटे,आओ , गले लग जाओ।)गोद में बैठाकर इसने बिल्कुल पिता की आकृति पाई है।
रदनिका -केवल आकृति ही नहीं, मुझे लगता है इसने स्वभाव भी पिताका ही पाया है। आर्य चारूदत्त तो इसी से अपना मनोविनोद करते है।
वसन्तसेना -अच्छा तो यह रो क्यों रहा है ?
रदनिका -अपने पडोसी सेठ के बेटे की सोने की गाड़ी से यह अभी खेल चुका है। वह उस गाड़ी को ले गया है। फिर भी यह गाड़ी मॉगने लगा तो मिट्टी की गाड़ी बनाकर इसे मैंने दे दी है। तब यह कहता है मुझे मिट्टी की गाडी नहीं सोने वाली गाड़ी ही चाहिए।
वसन्तसेना -हाय,हाय यह भी तो दूसरों की सम्पत्ति से जल रहा है। हाय, विधाता, कमल के पत्ते पर गिरे पानी की बूँ दे की तरह मनुष्यों के भाग्य से खेला करते हो।)रोते हुए (बेटे ,मत रो, तुम भी सोने की गाड़ी से खेलोगे।
बालक-रदनिके, ये कौन है ?
वसन्तसेना -तुम्हारे पिता के गुणों से विजित एक दासी।
बालक -रदनिके , तुम झूठ बोलती हो। ये अगर मेरी मॉ होती तो भला इतने आभूषण क्यों पहनती।
वसन्तसेना -बेटे,इतने भोले-भाले मुख से ऐसी कारूणिक बाते क्यों बोल रहे हो।) शरीर से सारे आभूषण हटाकर रोती हुई,) लो , अब तो तुम्हारी मॉ बन गई। इन जेवरों को ले जाओं और इससेअपनी गाड़ी बनवा लो।
बालक-हटो, मैं नहीं लेता,तुम रो रही हो।
वसन्तसेना -ऑसू पोंछकर (बेटे , अब नही रोऊँगी , जाओ खेलो।)मिट्टी की गाड़ी को जेवरों से भर देती है। (इनसे सोने की गाड़ी बनवा लो।
बालक को लेकर रदनिका बाहर निकल जाती है।

गाड़ी पर बैठे चेट का प्रवेश।

चेट-रदनिके, मान्या वसन्तसेना से निवेदन करो, बगल के दरवाजे पर उनके जाने के लिए पर्दा लगी बैलगाड़ी खडी है।

रदनिका -भीतर जाकर (आर्ये, वर्धमानक निवेदन करता है कि बगल के दरवाजे पर बैलगाड़ी आपको ले जाने के लिए तैयार है।

वसन्तसेना -सखि, क्षणभर रोको, जरा मैं तैयार हो लूँ।

रदनिका -बाहर निकलकर (वर्धमानक, पल भर रूको। आर्या तैयार हो रही है।

चेट -अरे, मैं भी तो गाड़ी का गद्दा भूल आया हूँ, जब तक ये तैयार होती है, उसे मैं ले जाता हूँ। नाथे रहने के बाबजूद ये बैल चलने को छटपटा रहे है तो फिर क्यों न गाड़ी से गद्दा लेकर शीघ्र लौट आऊँ ।)इतना कहकर चेट गाड़ी लेकर चल देता है।

वसन्तसेना -सखि , मेरी प्रसाधन सामग्री तो ला दो, मैं अपने को तैयार कर लूँ। अपने को सजाती है। इसी बीच गाड़ी पर सवार स्थावरक चेट का प्रवेश।

चेट -राजा के साले संस्थानक ने जल्द गाड़ी लेकर पुष्पकरण्डक नामक पुराने बगीचे में पहुँचने को कहा है। तो फिर चलूँ। बढे चलो, बैलो ! बढे चलो। कुछ दूर चलकर और देखकर गॉव की गाडियों से तो राह खचाखच भरी है। तो अब क्या करूँ ?गर्व के साथ (अरे, ओ गाड़ीवानो हटो, रास्ता छोड़ो। सुनकर क्या कहा ? यह किसकी गाड़ी है? राजा से साले संस्थानक की यह गाड़ी है। जल्दी करो, रास्ता दो। देखकर जुए के सभाध्यक्ष को देखकर जुए से भागे जुआरी की तरह मुझे देखकर अपने को छिपाते हुए यह दूसरी ओर क्यों सरक गया ? अच्छा तो फिर यह कौन है ? अथवा इससे मुझे क्या मतलब ? शीघ्रतासे चला जाऊँ। अरे ओ गँवारो, हटो, रास्ते से हटो। क्यो कहा ? पलभर रूको। जरा पहिए में सहारा लगा दो। अरे तुम्हें पता है -मैं राजा के साले संस्थानक का वीर, भला मैं अपनी गाड़ी घूमा कर तुम्हारी गाड़ी के लिए रास्ता दूँ ?हाय, यह गरीब तो अकेला है। मुझे गाड़ी घूमा कर लेनाचाहिए।तो फिर अपनी गाड़ी आर्य चारूदत्त के बगीचे वाले दरवाजे पर घूमा कर रोक देता हूँ। गाड़ी को रोक कर (यह मैं आया।) चला जाता है।

चेटी-आर्ये सखि ,चलो न, मेरा चित्त चंचल हो रहा है। दरवाजे की राह दिखलाओ।

चेटी -इधर से, इधर से मान्या चलें।

वसन्तसेना –घूमकर सखि , अब तुम आराम करो।

चेटी -जैसी आपकी आज्ञा। चली जाती है।

वसन्तसेना –गाडीपर बैठते ही दाहिने ऑख फड़कती है। दाहिनी आँख क्यों फड़क रही है ?

अथवा –चारूदत्त के दर्शन से ही अनिष्ट का निवारण हो जायेगा।

स्थावरकचेट -प्रवेशकर (मैंने गाडियों को हटा दिया है। अब चलूँ।)अभिनयपूर्वकगाड़ी पर चढकर,उसे चलाक,मन ही मन (गाड़ी तो बोझिल मालूम पड़ती है। अथवा राह से गाड़ी हटाने के

कारण थके हुए मुझे गाड़ीभी भारी लगती है। अच्छा तो चलें। चलो, बैलों ! बडे चलो।

नेपथ्य में (अरे ओ सिपाहियों , अपनी चौकियों पर सावधान हो जाओं । यह अहीर का छोकडाआर्यक , जेल का फाटक तोड़कर, दरवाजे पर खडे सन्तरी की हत्या कर, कैद से छूटकर भागा जा रहा है। पकड़ो इसे पकड़ो।

प्रविश्य अपटीक्षेपेण सम्भ्रान्त एकचरणलग्ननिगडोऽवगुण्ठित आर्यक :परिभ्रमति

चेट -:महान् नगर्थां सम्भ्रम उत्पन्न:, तत् त्वरितं त्वरितं गमिष्यामि।

बिना पर्दा गिराये ही आर्यकका प्रवेश, एक पैर में लटकी बेड़ी तथा कपड़े से सारी देह ढँककर घबड़ाया हुआ-सा घूम रहा है।

चेट -मन ही मन अरे, शहर में तो चारों ओर आतंक फैल गया है। अत :यहॉ से जल्दी-जल्दी भाग निकलूँ चला जाता है।

आर्यक -:

हित्वाऽहं नरपतिबन्धनापदेश-
व्यापत्ति-व्यसन-महार्णवं महान्तम्।
पादाग्र-स्थित-निगडैक-पाश-कर्षी
प्रभ्रष्टो गज इव बन्धनाद् भ्रमामि ।।1।।

अन्वय महान्तम्,नरपतिबन्धनापदेशव्यापत्तिव्यसनमहार्णवम्,हित्वा, पादाग्रस्थितनिगडैकपाशकर्षी, अहम्, बन्धनात्, प्रभ्रष्ट:, गज:, इव, भ्रमामि ।।1।।

आर्यक- राजा की कैद के बहाने से होने वाले आपत्तिपूर्ण संकट के विशाल सागर को पारकर , बन्धन को तोड़कर भागे हुए हाथी की तरह एक पैर में सिक्कड़ लटकाये इधर-उधर घूम रहा हूँ **।।1।।**

भो :अहं खलु सिद्धान्देश -जनित-परित्रासेन राज्ञा पालकेन घोषादानीय विशसने गूढागारे बन्धनेन बद्ध:। तस्माच्च प्रियसुहृच्छर्विलकप्रसादेन बन्धनात् परिभ्रष्टोऽस्मि। अश्रूणि विसृज्य।

भाग्यानि मे यदि तदा मम कोऽपराधो
यद्वन्यनाग इव संयमितोऽस्मि तेन।
दैवी च सिद्धिरपि लङ्घयितं न शक्या
गम्यो नृपो बलवता सह को विरोध :?।।2।।

अन्वय -:यदि, मे, भाग्ययानि, तदा, मम, क:, अपराध:, यत्, तेन, वन्यनाग:, इव, संयमित:, अस्मि ।दैवी, सिद्धि:,अपि, च, लङ्घ्यितुम्, नशक्या, नृप:, गम्य:, बलवता, सह क:, विरोध **?।।2।।**

हिन्दी अनुवाद -हाय, किसी त्रिकालदर्शी सिद्ध ने कह दिया -'आर्यक, राजा होगा' ।बस, इस भविष्यवाणी से डर कर राजा पालक ने मुझे घर से घसीटकर इस काल कोठरी में बेड़ी से जकड़ दिया। मेरे मित्र, शर्विलक ने मुझे उस कालकोठरी से आज मुक्त कराया है। बहते हुए ऑसुओं को पोछकर।

यदि मेरे भाग्य में ही लिखा है कि मैं राजा बनूँगा तो इसमें मेरा भला क्या कसूर है ? फिर भी

राजा ने मुझे बनैले हाथी की तरह पकड़ कर इस कारागार में क्यों बन्द कर दिया ? भाग्य में जो लिखा है वह तो होगा ही। फिर , राजा तो सबके लिए सेव्य है भला , बलवान् से विरोध कौन करना चाहेगा ?।।2।।

तत् कुत्र गच्छामि मन्दभाग्य :। विलोक्य इदं कस्यापि साधोरनावृतपक्षद्वारं गेहम्।

इदं गृहं भिन्नमदत्तदण्डो विशीर्णसन्धिश्च महाकपाट:।

ध्रुवं कुटुम्बी व्यसनाभिभूतां दशां प्रपन्नो मम तुल्यभाग्य :।।3।।

अन्वय - :इदम, गृहम्, भिन्नम्, विशीर्णसन्धि:, अदत्तदण्ड:, महाकपाट:, महाकपाट:, मम्, तुल्यभाग्य:, कुटुम्बी, ध्रुवम्, व्यसनाभिभूताम्,दशाम्, प्रपन्न:।

हिन्दी अनुवाद -हाय, मै अभागा हूँ , कहाँ जाऊँ ?) देखकर (यह किसी भले आदमी का घर मालूम पड़ता है, क्योंकि इसकी खिड़की की किवाड़े खुली है।

यह घर बड़ा ही पुराना लगता है, इसकों दीवार के जोड़ टूटे फूटे हैं, दरवाजे के किवाड़ों में किल्ली नहीं है। लगता है इस घर का मालिक भी मेरी तरह निश्चय ही अभागा है जो गरीबी की मार से आक्रान्त हो, इस स्थिति को प्राप्त किया है ।।3।।

तदत्र तावत् प्रविश्य तिष्ठामि।

नेपथ्ये जाध गोणा! जाध। यातं गावौ! यातम्।

इसलिए इसमें घुसकर शरण लेता हूँ।

नेपथ्य में बढे चलो, बैलो ! बढे चलो।

आर्यक -सुनकर (अरे, बैलगाड़ी तो इधर ही आ रही है।

आर्यक -:आकर्ण्य अये। प्रवहणमित एवाभिवर्त्तते।

भवेद् गोष्ठीयानं न च विषमशीलैरधिगतं

वधूसंयानं वा तदभिगमनोपस्थितमिदम्।

बर्हिनेतव्यं वा प्रवर-जन-योग्यं विधिवशाद्

विविक्तत्वाच्छून्यं मम खलु भवेद्देवविहितम् ।।4।।

अन्वय -:इदम्,विषमशीलै,अधिगतम्,गोष्ठीयानम्,न चभवेत्,शून्यम् वधूसंयानम्,तदभिगमनोप स्थितम् ,वा भवेत्विविक्तत्वात्,प्रवरजनयोग्यम्,विधिवशात्, बहिर्नेतव्यम्, दैवविहितम्, मम, भवेत् खलु ।।4।।

हिन्दी अनुवाद -यह गाड़ी किसी सामाजिक उत्सव में भाग लेने के लिए किसी असामाजिक व्यक्ति को नहीं ढो रही है, क्योंकि यह बिल्कुल शान्त लगती है। या, यह किसी नवोढा को ले जाने के लिए आई हो, अथवा किसी बड़े आदमी को कहीं पहुंचाने के लिए जा रही हो, अथवा भाग्य से मुझे ही बाहर निकालने के लिए आई हो ।।4।।

तत :प्रवहणेन सह प्रविश्य। इसके बाद गाड़ी लिये हुए बर्द्धमानक चेट उपस्थित होता है।

वर्द्धमानकश्चेट -:आश्चर्यम्! आनीतं मया यानास्तरणम्। रदनिके ! निवेदय आर्यायै बसन्तसेनाये 'अवस्थितं सज्जं प्रवहणम्, अधिरूह्य पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं गच्छतु आर्या।

बर्द्धमानकचेट – वाह , मैं तो गाड़ी का गद्दा लेकर लौट आया। रदनिके ! आर्या-वसन्तसेना से कह दो -गाड़ी तैयार है, आर्या चढकर पुष्पकरण्डक जीर्णोद्यान चलें।

आर्यक -:कथं नूपुरशब्द:? तदागता खलु आर्या। आर्ये ! इमौ नस्यकटुकौ बली बर्द्दौ; तत् पृष्टत एवारोहतु आर्या।

आर्यक-सुनकर अच्छा तो यह किसी गणिका की गाड़ी है, वह कहीं बाहर जा रही है। तो फिर चढ़ता हूँ। धीरे से जाता है।

चेट :पादोत्फालचालितानां नूपुराणां विश्रन्त :शब्द:। भाराक्रान्तं च प्रवहणम्। तथा तर्कयामि, साम्प्रतमार्यया आरूढया भवितव्यम्, तद्गच्छामि। यातं गावौ ! यातम्।

चेट -पैर उठाकर गाडी पर चढते समय बजते हुए पायल की आवाज बन्द हो गई है। गाडी का बोझ भी भारी हो गयी है। इसलिए मैं अनुमान करता हूँ कि बसन्तसेना अब गाड़ी पर चढ गई होंगी। तो अब चलूँ। चलो , वैलो,! चलो घूमता है।

चेट -सुनकर पायल की आवाज सुनाई पड़ती है ? तो आर्या आ गई। मान्ये, आप गाड़ी पर पीछे से चढें। बैल नाथा है और वह चलने को उतावला हो रहा है।

आर्यक पीछे की ओर से चढ़ जाता है।

वीरक -प्रवेश करके अरे रे, जय, जयमान, चन्दनक, मड्गल, पुष्पभद्र प्रभृति प्रधान पुरूषो !

किं स्थ विश्रब्धा :? य :स गोपालदारको रूद्ध:।

भित्वा समं ब्रजति नरपतिहृदयं वन्धनञ्च ।।।।5।।

अरे ! पुरस्तात् प्रतोलीद्वारे तिष्ठ त्वं, त्वमपि पश्चिमें, त्वमपि दक्षिणे, त्वमपि उत्तरे। योऽपि एष प्राकारखण्ड:, एनमधिरूह्य चन्दनेन समं गत्वा अवलोकयामि। एहि चन्दन ! एहि, इतस्तावत्।

अन्वय - :विश्रब्धा :,किं, स्थ, य:, गोपालदारक:, रूद्ध:, स:, नरपतिहृदयम्, च, बन्धनम्, अपि, समम्, भित्वा, व्रजति।।5।।

हिन्दी -आप सभी विश्वस्त हो कर इस तरह क्यों पड़े हैं ?गोपबालक आर्यक,जो कारागार में बन्द था, जेल की बेड़ी और राजा के दिल दोनों को एक साथ तोड़कर भाग निकला है **।।5।।**

अरे, तुम सामने पूरबवाली गली के छोर पर तैयार रहो; तुम भी पछॉंही मोड़ पर चले जाओ, तुम दक्खिनी राह रोककर खड़े हो जाओ और तुम उत्तर की ओर राह पर सतर्क होकर रहो और मैं चन्दन के साथ इस ऊँचे टीले पर चढकर देखता हूँ। आओ चन्दनक, आओ , इधर तो आओ।

चन्दनक -:अरे रे वीरअ-विसल्ल-भीमड्गअ-दण्डकालअ-दण्डसूर-प्पमुहा) ! अरे रे वीरक-

विशल्य-भीमाड्गद-दण्डकाल-दण्डशूरप्रमुखा! :

आअच्छध वीसत्था तुरिअं जत्तेह लहु करेज्जाह।

लच्छी ण जेण रण्णो पहवइ गोत्तन्तरं गंतुं ।।6 ।।

आगच्छत विश्वस्तासत्वरितं यतध्वं लघु कुरूत ।लक्ष्मीर्येन न राज :प्रभवति गोत्रान्तरं गन्तु म्।।

अपि च -

अन्वय -:विश्वस्ता, आगच्छत, त्वरितम्, यतध्वम्, लघु, कुरूत, येन, राज्ञः, लक्ष्मीः, गोत्रान्तरम्, गन्तुम्, न, प्रभवति ॥6॥

हिन्दी अनुवाद - घबड़ाए हुए चन्दनक का प्रवेश

चन्दनक -अरे, वीरक, विशल्य, भीमांगद, दण्डकाल, दण्डशूर, प्रभृति रक्षको -अरे ओ विश्वासभाजनो, आओ, जल्दी करो, आर्यक को पकड़ने का शीघ्र प्रयत्न करो, जिससे राजा पालक की राज्यलक्ष्मी अन्य कुल में न जा सके **॥6॥**

3.3. 2 श्लोक संख्या 7 से 10 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

उद्यानेषु सभासु च मार्गे नगर्यापणं घोषे ।

तं तमन्विष्यत त्वरितं शड्का वा जायते यत्र ॥7॥

अन्वय - :उद्यानेषु, सभासु, च, मार्गे, नगर्यापणे, घोषे, त्वरितम्, यत्र, शड्का, वा, जायते)तत्र(, तम्, अन्विष्यत ॥7॥

और भी -बगीचों में, सभाओं में, नगरों में, बाजारों में और अहीरों की वस्तियों में अथवा जहॉ कहीं भी सन्देश हो, उस भगोड़े को खोजों **॥7॥**

रे रे वीरक ! किं किं दर्शयसि भणसि तावद्विश्रब्धम्।

भित्वा च बन्धनकं क :स गोपालदारकं हरति ॥8 ॥

युग्मकम्

कस्याष्टमो दिनकर :कस्य चतुर्थश्च बत्तेते चन्द्र :।

षष्टश्च भार्गवग्रहो भूमिसुत :पन्चम :कस्य॥

अन्वय -:रे रे वीरक, किं किं, दर्शयसि, विश्रब्धं, किं, भणसि, तावत्, वन्धनकम्, भित्वा, सः, कः, गोपालदारकम्, हरित ॥8॥

अन्वय -:कस्य, अष्टमः, दिनकर :कस्य, चन्द्रः, चतुर्थः, च, वर्त्तते, कस्य, भार्गवग्रहः, षष्ठः, च, भूमिसुतः, पन्चमः, वर्त्तते **॥9॥**

अन्वय - :भण, जीवः, कस्य, जन्मषष्ठः, तथैव, सूरसुतः, नवम :चन्दन के जीवति, सः, क) :य(गोपदारकम्, हरति **॥10॥**

अरे, वीरक, तुम क्या क्या दिखला रहे हो ? विश्वास पूर्वक क्या क्या बक रहे हो? बन्धन को तोड़कर उस अहीर के छोकड़े को कौन छुड़ाये लिए जा रहे है **॥8॥**

किसके आठवे स्थान पर सूर्य है ? चन्द्रमा किसके चौथे स्थान पर है ? शुक्र किसके छठे स्थान पर है तथा मंगल किसके पॉचवे स्थान पर है **?॥9॥**

भण कस्य जन्मषष्ठो जीवो नवमस्तथैव सूरसुत :।

जीवति चन्दनके क :स गोपालदारकं हरति ॥

बतलाओ; बृहस्पति किसके छठे स्थान पर अवस्थित है ? शनि किसके नवम स्थान पर है ? जो मुझ चन्दनक के जीते जी उस अहीर के बच्चे को छुड़ाकर भाग रहा है ?**॥10॥**

3.3. 3श्लोक संख्या 11 से 14 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वीरक -:भड ? चन्दणआ भट! चन्दनक !

अपहरति कोऽसि त्वरितं चन्दनक ! शपे तव हृदयेन।

यथा अर्द्धादितदिनकरे गोपालक-दारक :खुटित:।। ।।11।।

हिन्दी -अनुवाद -वीरक– हे वीर चन्दनक !

मैं तुम्हारे हृदय की शपथ खाकर कहता हूँ कि उसे किसी ने अभी ही अपहृत किया है। क्योंकि सूर्य के आधा निकलने के समय ही वह अहीरपुत्र भागा है **।।11।।**

चेट-: यातं,गावौ ! यातम्।

हिन्दी अनुवाद -चेट -बैलो, बढे चलो।

चन्दनक -:अरे रे! प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व।

अपवारितं प्रवहणं ब्रजति मध्येन राजमार्गस्य।

एतत्तावद्विचारय कस्य कुत्र प्रेषित प्रवहणमिति ।।12।।

अन्वय-:राजमार्गस्य, मध्येन, अपवारितम् , प्रवहणम्, ब्रजति, एतत्, तावत्, विचारय कस्य, प्रवहणम्, कुत्र, प्रेषितम्, इति **।।12।**

चन्दनक -देखकर (अरे रे देखों तो-सड़क के बीच पर्दा लगी गाड़ी जा रही है। इसकी पूछताछ तो करो यह किसकी गाड़ी है और कहॉ जा रही है ?।।12।।

वीरक -: अरे प्रवहणवाहक ! मा तावदेतत् प्रवहणं वाहय। कस्यैतत् प्रवहणम् ? को वा इहारूढ :? कुत्र वा व्रजति ?

वीरक -देखकर ओ गाड़ीवान्, गाड़ी रोको, यह गाड़ी किसकी है और इस पर कौन जा रहा है ? और कहॉ जायेगी ?

चेट -:एतत् खलु प्रवहणमार्यचारूदत्तस्य। इह आर्या वसन्तसेना आरूढा, पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं क्रीडितुं चारूदत्तस्य नीयते' इति।

हिन्दी अनुवाद -चेट -यह गाड़ी आर्य चारूदत्त की है, इस पर आर्या वसन्तसेना मनोविनोद के लिए पुष्पकरण्डक नामक पुराने उपवन में जा रही है।

वीरक -:एष प्रवहणवाहको भणति -'आर्यचारूदत्तस्यप्रवहणम्, वसन्तसेनाआरूढा, पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानंनीयते इति।

वीरक -चन्दनक के पास जाकर (गाड़ीवान् कहता है -'गाड़ी आर्य चारूदत्त की है, पुष्पकरण्डक नामक बगीचे में मनोविनोद के लिए वसन्तसेना जा रही है।'

चन्दनक - :तत् गच्छतु!

चन्दनक -अच्छा तो जाने दो।

वीरक- :अनवलोकित एव ?

वीरक – अनदेखे ही

चन्दनक -:अथ किम्।

चन्दनक- तो और क्या ?

वीरक -:कस्य प्रत्ययेन ?

वीरक -किसके भरोसे ?

चन्दनक -:आर्यचारूदत्तस्य।

चन्दनक -आर्य चारूदत्त के विश्वास पर।

वीरक -:क आर्यचारूदत्त :? का वा वसन्तसेना ? येनानवलोकितं व्रजति।

हिन्दी अनुवाद -वीरक -कौन हैं ये चारूदत्त और वसन्तसेना ? जिनकी गाड़ी विना जाँचे ही जा रही है ?

चन्दनक -:अरे! आर्यचारूदत्तं न जानासि ? न वा वसन्तसेनिकाम् ? यदि आर्यचारूदत्तं वसन्तसेनिकां वा न जानासि, तद् गगने ज्योत्स्नासहितं चन्द्रमपि त्वं न जानासि।

चन्दनक-अरे,तुम इन्हें नहीं जानते ? अगर चारूदत्त और वसन्तसेना को नही जानते तो आकाश में चन्द्र और चन्द्रिका को भी नहीं जानते।

कस्तं गुणारबिन्दं शीलमृगाङ्कं जनो न जानाति ?
आपन्न-दु:खमोक्षं चतु:सागरसारं रत्नम् ।। ।।13।।
द्वावेव पूजनीयावत्र नगर्यां तिलकभूतौ च।
आर्या वसन्तसेना धर्मनिधिश्चारूदत्तश्च ।।14।।

अन्वय -:गुणारबिन्दम्, शीलमृगाङ्गम्, आपन्नदु:खमोक्षम्, चतु:सागरसारम्, रत्नम्, तम्, क:, जन:, न जानाति ।।13।।

अन्वय-: इह, नगर्याम्, द्वौ, एव, पूजनीयौ, तिलकभूतौ, च, आर्या, वसन्तसेना, धर्मनिधि:, चारूदत्त:, च **।।14।।**

गरीबों को सहारा देने वाला, चारों सागरों के रत्नभूत, गुण में कमल और शील में चन्द्रमा की तरह आर्य चारूदत्त को कौन नहीं जानता है ? ।।13।।

इस नगरी में दो ही श्रेष्ठ व्यक्ति हैं, पूजनीय हैं। एक आर्या वसन्तसेना और दूसरे धर्मात्मा आर्य चारूदत्त **।।14।।**

अभ्यास प्रश्न –निम्नलिखित के अर्थ बतायें।

1. प्रभात ,2. प्रतिवेशिक 3. अलीकम् ,4 . नेपथ्य 5. आर्यक,6 . प्रवहणवाहक,7 . जहति ,8 . युक्तम,9 . अपक्रामति ,10 . मृगांङ्क.क,11 . नियोग,12 . प्रेषित,13 .अपवारित ,14 . व्रजति 15.वर्तते

3. 4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि पंचम् अंक की समाप्ति के पश्चात चेटी के द्वारा वसन्तसेना को जगाया गया और उसने बताया कि हम सभी के लिए तो सबेरा है किन्तु श्रीमति के

लिए अभी रात ही है इसके पश्चात उसने जुवारी के बारे में पूछॉ और उत्तर पाया कि जहॉ चारूदत्त गये है। इस प्रकार के सम्वादों के पश्चात वसन्तसेना का यह कथन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। तो सबसे पहले तो मुझे ही दु:खी होना चाहिए।) विनम्र भाव से (सखि, यह रत्नहार लो और मेरी ओर से मेरी बहन, आर्य चारूदत्त को धर्मपत्नी आर्या धूता को सौप दो। उनसे कहना- आर्य, चारूदत्त के गुणों खिचकर मैं उनकी दासी बनकर यहॉ आई हूँ। मैं उनकी दासी हूँ, अत :आर्या धूता की भी दासी हूँ। इस लिए यह रत्नहार उनके गले ही शोभेगा। पुन:इसी क्रम रदनिका का कथन भी देखने लायक है। अपने पडोसी सेठ के बेटे की सोने की गाड़ी से यह अभी खेल चुका है। वह उस गाड़ी को ले गया है। फिर भी यह गाड़ी मॉगने लगा तो मिट्टी की गाड़ी बनाकर इसे मैंने दे दी है। तब यह कहता है मुझे मिट्टी की गाडी नहीं सोने वाली गाड़ी ही चाहिए ।हाय,हाय यह भी तो दूसरों की सम्पत्ति से जल रहा है। हाय, विधाता, कमल के पत्ते पर गिरे पानी की बूँदे की तरह मनुष्यों के भाग्य से खेला करते हो।)रोते हुए (बेटे ,मत रो, तुम भी सोने की गाड़ी से खेलोगे। बालक- रदनिके, ये कौन है ?

3.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.सबेरा ,2. पडौसी,3 . मिथ्या,4 . रंगशाला,5 . गोप का लड़का,6 . गाड़ी चलाने वाला,7 . त्यागता है,8 . उचित,9 . पलायित होता है,10 . चन्द्रमा,11 . नियोजन,12 . भेजा हुआ,13 . ढका हुआ , 14. जाता है,15 .है

3. 6 पारिभाषिक शब्दावली

महान्तम् - बहुत बड़े
विधिवशात् – भाग्य के कारण
गोत्रान्तरं - दूसरे कुल की
अपवारितं - ढकी हुई
परिभूता - अपमानित हुई

3. 7 संदर्भग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् – हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ 0रमा शंकर मिश्र– चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2. मृच्छकटिकम -हिन्दी व्याख्या हित , डॉ 0जगदीशचन्द्र मिश्र -चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

3. 8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2. किन्ही तीन श्लोकों की व्याख्या कीजिए।

इकाई -4

मृच्छकटिकम् षष्ठअंक श्लोक 15 से 27 तक मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 श्लोक संख्या 15 से 27 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

4.3.1 श्लोक संख्या 15 से 22 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

4.3.2 श्लोक संख्या 23 से 27 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

4.4 सारांश

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4. 1 प्रस्तावना–

मृच्छकटिकम् प्रकरण के छठे अंक में श्लोक सं 01से लेकर 27 तक के सम्वादों एवं श्लोकों के अध्ययन से सम्बन्धित यह चतुर्थ इकाई है। इस इकाई के वर्णन का प्रारम्भ वीरक नामक पात्र के कथन से किया गया है , जो वसन्तसेना और चारूदत्त दोनों को जानने के विषय में कहते हुए राजकार्यकी महत्ता के लिए अपने पिता को भी महत्व न देने की बात करता है। वीरक, आर्यक और चन्दनक तीनों का सम्वाद हो रहा है।

आर्यक, वीरक को अपना पुराना दुश्मन कहता है। दोनों किसी एक ही कार्य में लगे है किन्तु दोनों के स्वभावों में विवाह और चिता की आग जैसा अन्तर है। आर्यक भीम के आचरण का अनुकरण करता है किन्तु साहस दिखाने का उचित भी नहीं समझता है। इन्ही सब अन्य सम्वादों में इस इकाई का वर्णन आपके अध्ययन के लिए प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप षष्ठ अंक के इस वर्णन के आधार पर पात्रों के मध्य हुए सम्वादों की विशेषताओं को बतायेगें।

4. 2 उद्देश्य–

षष्ठ अंक के श्लोक संख्या 15से लेकर 27 वें श्लोक तक के वर्णित सम्वादों एवं श्लोकों का अध्ययन करने के पश्चात आप यह बता सकेंगे कि-

- ❖ वीरक और आर्यक के व्यावहारिक सम्बन्ध किस प्रकार के है।
- ❖ गाड़ी का निरीक्षण कौन करता है।
- ❖ दक्षिण वासी किस प्रकार बोलते है।
- ❖ चन्दनक का स्वभाव किसकी भॉति शीतल है।
- ❖ चन्दनक ने चिह्न रखने के लिए किसको दिया।
- ❖ आर्यक के पास सपरिवार कौन गया।

मृच्छकटिकम् षष्ठअंक श्लोक 15 से 27 तक मूल पाठ व्याख्या

वीरक -:अरे चन्दनक ?

जानामि चारूदत्तं वसन्तसेनाञ्च सुष्ठु जानामि।

प्राप्ते च राजकार्ये पितरमपि अहं न जानामि।।15।।

अन्वय -:चारूदत्तम्, वसन्तसेनाम्, च, सुष्ठु, जानामि, किन्तु, राजकार्ये, प्राप्ते, पितरम्, अपि, अहम्,न जानामि ।।15 ।।

हिन्दी अनुवाद- वीरक -ओ चन्दनक। मैं आर्या वसन्तसेना को भी जानता हूँ और आर्य चारूदत्त को भी। किन्तु राज-काज में मैं अपने बाप को नहीं जानता हूँ**।।15।।**

आर्यक -:स्वगतम् अयं मे पूर्ववैरी, अयं में पूर्वबन्धु:। यत-:

एककार्यनियोगेऽपि नानयोसतुल्यशीलता।

विवाहे च चितायाञ्च यथा हुतभुजोर्द्वयो:।।16।।

अन्वय -:एककार्यनियोगे, अपि, अनयो :तुल्यशीलता, न। यथा, विवाहे, चितायाम्, च, द्वयो:, हुतभुजो **।।16।।**

आर्यक- अपने आप यह वीरक मेरा पुराना दुश्मन है और चन्दनक पुराना मित्र है। क्योंकि-

दोनों एक ही काम में लगे हैं फिर भी दोनों के स्वभाव में बड़ा अन्तर है। ठीक उसी प्रकार जैसे विवाह की आग और चिता की आग में अन्तर है। चन्दनक वैवाहिक अग्नि की तरह यदि सुखद है तो यह वीरक चिताग्नि की तरह दु:खद है **।।16।।**

चन्दनक -:त्वं तन्त्रिल :सेनापति :राज्ञ :प्रत्ययित:। एतौ धारितौ मया बलीवर्दौ,अवलोकय।

वीरक -:त्वमपि राज्ञ :प्रत्ययितो बलपति:, तत् त्वमेव अवलोक्य।

हिन्दी अनुवाद-वीरक - राजा के तुम भी तो विश्वस्त सेनापति हो, तुम्ही देख लो न।

चन्दनक - :मया अवलोकित त्वया अवलोकितं भवति ?

चन्दनक -क्या मेरे देख लेने से तुम्हारा देखना हो जायेगा ?

वीरक -: यत् त्वया अवलोकितं तत् राज्ञा पालकेनावलोकितम्।

वीरक -यदि तुमने देख लिया तो राजा पालक ने ही देख लिया।

चन्दनक -:अरे! उन्नमय धुरम्।

चन्दनक -ओ गाड़ी वाले, पर्दा उठाओ।

आर्यक -: स्वगतम्। अपि रक्षिणो मामवलोकयन्ति ? अशस्त्रश्चास्मिमन्दभाग्य :। अथवा-

भीमस्यानुकरिष्यामि बाहु :शस्त्रं भविष्यति।

वरं व्यायच्छतो मृत्युर्न गृहीतस्य बन्धने।।17।।

अथवा, साहसस्य तावदनवसर:। चन्दनको नाट्येन प्रवहणमारूह्यवलोकयति।

आर्यक -:शरणागतोऽस्मि।

चन्दनक -:संस्कृतमाश्रित्य अभयं शरणागतस्य।

अन्वय : भीमस्य, अनुकरिष्यामि बाहु:, शस्त्रम्, भविष्यति, व्यायच्छत:, मृत्यु:, बरम्, बन्धने, गृहीतस्य, न **।। 17 ।।**

हिन्दी अनुवाद -चेट गाड़ी का पर्दा उठाता है।

आर्यक -मन ही मन (क्या ये रक्षणमुझे देखेगें। अभागा हूँ मै मेरे पास कोई हथियार भी तो नहीं है। अथवा-

तो मैं भीम का ही अनुकरण करूँगा। ये बॉहें ही मेरे हथियार बनेंगे। जेल में बन्द होने को अपेक्षा लड़कर मर जाना ही अच्छा होगा **।।17।।**

अथवा, साहस का यह उचित समय नहीं है।

चन्दनक गाड़ी पर चढकर देखता है।(आर्यक -मैं आप की शरण में हूँ।

चन्दनक -संस्कृत भाषा में (शरणागत को डरने की आवश्यकता नहीं।

आर्यक -:

त्यजति किल तं जयश्रीर्जहति च मित्राणि बन्धुवर्गश्च ।

भवति च सदोपहास्यो य :खलु शारणागतं त्यजति ।।18।।

अन्वय - :य:, खलु, शरणागतम् त्यजति,तम्, जयश्री, त्यजति, मित्राणि, च, जहति,बन्धुवर्ग : जहति सदा, उपहास्य, च, भवति **।।18।।**

हिन्दी अनुवाद -आर्यक -निश्चय ही जिसने शरणागत की रक्षा नहीं की, विजय लक्ष्मी उसे छोड़ देतीहै, मित्र एवं भाई बन्धु भी उसका परित्याग कर देते है और वह समाज के बीच सदा के लिए उपहासास्पद बन जाता है **।। 18।।**

चन्दनक : कथमार्यको गोपालदारक :श्येनवित्रासित इव पत्ररथ :शाकुनिकस्य हस्ते निपातित:। एषोऽनपराध : शरणागत आर्यचारूदत्तस्य प्रवहणमारूढ :प्राणप्रदस्य में आर्यशर्विलकस्य मित्रम् : अन्यतो राजनियोग:। तत् किमिदानीमत्र युक्तमनुष्ठानुष्ठातुम् ?अथवा यद्भ्वतु तद्भवतु प्रथममेवाभ्यं दत्तम् ।

चन्दनक -अहीर का पुत्र आर्यक , बाज से डरे पक्षी की तरह बहेलिए के हाथ में जा फॅसा । सोचकर एक ओर तो यह आर्यक निर्दोष है, हमारी शरण में है, आर्य चारूदत्त की गाड़ी पर सवार है, मेरे प्राणप्रद मित्र शर्विलक का मित्र है; दूसरी ओर राजाज्ञा है । तो अब क्या करना चाहिए? अथवा जो हो, इसे तो पहले से ही अभयदान दे चुका हूँ।

भीताभयप्रदानं ददत :परोपकाररसिकसय ।

यदि भवति भवतु नाशस्तथापि च लोके गुण एव ।।।।19।।

दृष्टआर्य :न, आर्या वसन्तसेना ! तदेषा भणति-'युक्तंनेदम्, सदृशं नेदम्, यदहमार्यचारूदत्तमभिसतु राजमार्गे परिभूता ।'

अन्वय - :भीता भयप्रदानम्, ददत:, परोपकाररसिकस्य, यदि, नाश, भवति,) तदा (भवतु, तथा, अपि, च, लोके गुण**, ।।19।।**

हिन्दी अनुवाद – डरे हुए को अभयदान देनेवाले परोपकारप्रेमी की यदि मौत भी होती हो तो चिन्ता नहीं। क्योंकि मृत्यु के बाद भी संसार में उसकी प्रशंसा ही होती है, निन्दा नहीं **।।19।।**

डरते हुए, उतरकर (भाई मैंने आर्य को देख लिया) इस तरह आधा कह लेने के बाद नहीं आर्या वसन्तसेना को देख लिया। उनका कहना है कि -'यह काम उचित नहीं हुआ । आपके योग्य नहीं हुआ । मैं तो आर्य चारूदत्त से मिलने जा रही थी और आपने बीच सड़क पर रोक कर मुझे इस तरह अपमानित किया है'।

वीरक -:चन्दनक! अत्रमम संशय समुत्पन्न:।

हिन्दी अनुवाद -वीरक -चन्दनक, मुझे तुम्हारी बात में कुछ शक लगता है।

चन्दनक -:कथं ते संशय:?

चन्दनक- तुम्हें शक क्यों हो गया ?

वीरक - सम्भ्रम-घर्घर-कण्ठस्त्वमपि जातोऽसि यत्त्वया भणितम्।
दृष्टो मया खलु आर्य :पुनरप्यार्या वसन्तसेनेति ।। ।।20 ।।

अन्वय -:त्वमपि, सम्भ्रमघर्घरकण्ठ :, जातः, असि। यत् त्वया, मया, खलु, आर्यः, दृष्टः, ततः, आर्या, वसन्तसेना, इति, च, पुन :भणितम् **।।20।।**

वीरक -तुम घबड़ाये से लगते हो, तुम्हारी आवाज थरथरा रही है, तुमने पहले कहा -मैंने आर्य को देख लिया, फिर कहा आर्या वसन्तसेना को देख लिया -यह विसंगति क्यों।।20।।

इसी से मुझे शक हो गया है।

चन्दनक -:अरे!क:अप्रत्ययस्तव?वयंदाक्षिणात्याअव्यक्तभाषिण:।खस-खत्ति-खडा-खडट्टो– विलय-कर्णाट-कर्ण-प्रावरण-द्रविड-चोल-चीन-बर्बर-खेर-खान-मुख-मधुधातप्रभृतीनांम्लेच्छजातीनां अनेकदेशभाषाभिज्ञा यथेष्टं मन्त्रयाम -:'दृष्टो दृरूटा वा, आर्य :आर्या वा'।

चन्दनक -अरे, तुम्हें अविश्वास क्यों हो रहा है? हम दक्षिणवासी तो अशुद्ध बोलते ही है। खस, खत्ति, खड़हो, विलय, कर्णाट कर्ण प्रावरण, द्रविड़, चोल, चीन, वर्वर ,खेर, खन, मुख,मधुघात आदि असभ्य जातिवाले हम देश की विभिन्न भाषाओं से अनजान रहने के कारण मनमाना 'देखागया' 'देखी गई' 'आर्य' 'आर्या' आदि बोलतेही रहते है।

वीरक -:ननु अहमपि प्रलोकयामि। राजाज्ञा एषा। अहं राज्ञ :प्रत्ययित:।

वीरक -अच्छा तो मैं भी राजा का विश्वासभाजन ही हूँ और उनकी आज्ञा है तो जरा मैं भी देख लूँ।

चन्दनक -:तत् किमहमप्रत्ययित :संवृत्त:।

चन्दनक -तो क्या मैं अविश्वासी हो गया ?

वीरक :ननु स्वामिनियोग:।

वीरक – अरे, नहीं राजा का आदेश ही ऐसी है।

चन्दनक -:आर्यगापालदारक :आर्यचारूदत्तस्य प्रवहणमधिरूह्य अपक्रामतीति यदि कथ्यते, तदा आर्यचारूदत्तो राज्ञा शाष्यते, तत् कोऽत्र उपाय:?कर्णाट-कलह– प्रयोगं करोमि। अरे वीरक ! मया चन्दनकेन प्रलोकितं पुनरपि त्वं प्रलोकयसि, कस्त्वम् ?

चन्दनक -मन ही मन यदि यह कहा गया कि गोपबालक आर्यक चायदत्त की गाड़ी से जा रहा है तो निश्चय ही आर्य चारूदत्त भी राजा से दण्डित होंगे। तो फिर क्या उपाय है ? सोचकर कर्णाटकदेशीय कलह शुरू कर देता हूँ। सुनाकर (अरे वीरक जब मैंने देख ही लिया तो फिर तुम देखने वाले कौन होते हो ?

वीरक -:अरे त्वमपि क :?

वीरक- तो फिर, तुम्हीं कौन देखने वाले हो ?

चन्दनक -:पूज्यमानो मन्यमानस्त्वमात्मनो जातिं न स्मरसि ?

चन्दनक –ओ अपने को पूज्य समझने वाले वीरक, अपनी जात का ख्याल करो।

वीरक -:अरे! का मम जाति:?

वीरक -गुस्सा कर अरे, मेरी जाति क्या है ?

चन्दनक -: को भणतु ?

चन्दनक -नीच जाति का नाम कौन ले?

वीरक -: भणतु।

वीरक -नहीं बोलो तो सही।

चन्दनक -:अथवा न भणामि।

चन्दनक -नहीं बतलाऊँगा।

जानन्नपि खलु जातिं तव च न भणामि शीलविभवेन।
तिष्टतु ममैव मनसि किं हि कपित्थेन भग्नेन ।।21।।

अन्वय -:तव, खलु, जातिम्, जानन्, अपि, अहम्, शीलविभवेन, च,न भणामि। मम, मनसि, एव, तिष्ठतु। हि, कपित्थेन, भग्नेन, किम् ? ।।21।।

हिन्दी अनुवाद - तुम्हारी जाति जानता हूँ किन्तु, अपने शील के कारण मैं कहूँगा नहीं। वह मेरे मन से ही रहे। बेकार कैथ फोड़ने से क्या लाभ है ?।।21।।

वीरक -:ननु भणतु भणतु।

वीरक -कहो,कहो।

चन्दनक :संज्ञां ददाति।

चन्दनक- इशारे से बतलाता है।

वीरक -:अरे! किन्नु इदम् ?

वीरक – इशारे क्या कर रहे हो ?

चन्दनक-: शीर्णशिलातलहस्त :पुरूषाणां कूर्च्च -ग्रन्थि-संस्थापन:।
कर्त्तरी-व्यापृत-हस्तस्त्वमपि सेनापतिर्जात:।। ।।22।।

अन्वय -:शीर्णशिलातलहस्त:,पुरूषाणाम्, कूर्चग्रन्थिसंस्थापन:, कर्त्तरिव्याप्तहस्त:, त्वम् सेनापति : अपि जात: **।।22।।**

चन्दनक -एक हाथ में शान चढाने वाले टूटे पत्थर के टुकड़े दूसरे हाथ में दाढ़ी छीलने वाला रखने वाला नाई भी तुम सेनापति बन गये ।।22।।

वीरक-: अरे !चन्दनक ! त्वमपि मन्यमान आत्मनो जाति न स्मरसि।

वीरक -रे चन्दनक,तुम्हें भी अपनी जाति याद नहीं आती।

चन्दनक -:अरे! का मम चन्दनकस्य चन्द्रविशुद्धस्य जाति :?

चन्दनक - चन्द्रमा की तरह स्वच्छ मुझ चन्दनक की कौन जाति है रे ?

वीरक -:को भणतु?

वीरक -नीच जाति का कौन नाम ले ?

चन्दनक -:भणतु भणतु।

चन्दनक -:बोलो, बोलो।

वीरको नाटयेन संज्ञां ददाति।

वीरक- इशारे से कुछ बतलाता है।

चन्दनक -अरे इशारे क्या कर रहे हो ? साफ बतलाओं न।

चन्दनक -:अरे! किन्नु इदम्।

वीरक -:अरे श्रृणु श्रृणु।

जातिस्तव विशुद्ध माता भेरी पितापि ते पटह:।

दुर्मुख! करटकभ्राता त्वमपि सेनापतिर्जात:।। ।।23।।

अन्वय - :दुर्मुख! विशुद्धा, तव, जाति:। ते, माता, भेरी, पिता, पटह :। कर्टक-भ्राता, त्वम्, अपि, सेनापति :जात:।।**23।।**

वीरक -तो सुन ही ले -

रे दुर्मुख ! तो सुन, तुम्हारी मॉं दुन्दुभि है, बाप ढोलक है और भाई तुरही ऐसी जाति के तुम बलाधिपति बन गये हो **।। 23।।**

चन्दनक -:अहं चन्दनकश्चर्मकार :? तत् प्रलोकय प्रवहणम्।

चन्दनक -अतिकुद्ध होकर अच्छा तो चन्दनक चमार है? तो देख लो गाड़ी जरा।

चेटस्तथा करोति।

चेट वैसा ही करता है।

वीरक :प्रवहणमारोढुमिच्छति, चन्दनक :सहसा केशेषु गृहीत्वा पातयति, पादेन ताडयति च।

वीरक गाड़ी पर चढना चाहता है और चन्दनक उसके बाल पकड़ कर धरती पर पटकता है और पैरों से पीटता है

वीरक -:अरे! अहं त्वया विश्वस्तो राजाज्ञप्तिं कुर्वन सहसा केशेषु गृहीत्वा पादेन ताडित:। तच्छृणु रे! अधिकरणमध्ये यदि ते चतुरड्गं न कल्पयामि, तदा न भवामि वीरक:।

वीरक -क्रोधपूर्वक उठते हुए (मुझ विश्वासी सैनिक को राजाज्ञापालन करते समय केश खीच कर लतियाया है तो सुन लो, राजा के सामने या न्यायालय में तुम्हें चतुरंग दण्ड नहीं दिखवाया तो मेरा नाम वीरक नहीं।

चन्दनक -:अरे! राजकुलमधिकरणं वा व्रज। कि त्वया शुनकसदृशेन ?

चन्दनक -अरे जा जा, राजा को फरियाद सुना या कचहरी जा। तुझ जैसे कुत्ते से हमारा कुछ नहीं बिगड़ता।

वीरक -:तथा ।

वीरक -अच्छा तो देख लूँगा। चला जाता है।

चन्दनक -अरे जा जा, राजा को फरियाद सुना या कचहरी जा। तुझ जैसे कुत्ते से हमारा कुछ नहीं बिगड़ता।

चन्दनक -:गच्छ रे प्रवहणवाहकगच्छ। यदि कोऽपि पृच्छति, ततो भणिष्यसि 'चन्दनक-वीरकाभ्याम् अवलोकितमिदं प्रवहणं व्रजति ।' आर्ये ! वसन्तसेने ! इदञ्च अभिज्ञानं ते ददामि ।

चन्दनक -सब ओर देख कर जा रे गाड़ीवान् जा । रास्ते में यदि कोई कुछ पूछे तो कह देना - चन्दनक और वीरक ने गाड़ी देख ली है। आर्ये , वसन्तसेने यह चिह्न अपने साथ रख लो। तलवार देता है ।

आर्यक -:खड्गं गृहीत्वा सहर्षमात्मगतम् ।

अनुवाद -आर्यक -हाथ से तलवार लेकर, मन ही मन खुश होते हुए

वीरक -रोक रे गाड़ीवाले, मैं गाड़ी देखूँगा ।

अये ! शस्त्रं मया प्राप्तं स्पन्दते दक्षिणो भुज :।

अनुकूलञ्च सकलं हन्त संरक्षितो ह्यहम् ।।24

अन्वय -:अये, मया, शस्त्रम्, प्राप्तम्, दक्षिण:, भुज:, स्पन्दते , सकलम्,अनुकूलम, हि, अहम्, संरक्षित:।।24।।

अहा, मुझे हथियार मिल गया। मेरी ढाई भुजा भी फड़क रही है। सब कुछ अनुकूल हो रहा है। मैं अब पूरी तरह सुरक्षित हूँ ।।**24।।**

चन्दनक -: आर्ये //!

अत्र मया विज्ञप्ता प्रत्ययिता चन्दनमपि स्मरसि।

न भणामि एष लुब्ध :स्नेहस्य रसेन वदाम :।।25 ।।

अन्वय -:अत्,मया, विज्ञप्ता, प्रत्ययिता, चन्दनमपि, स्मरसि, एष:, लुब्ध:, न, भणामि, स्नेहस्य, रसेन, ब्रूम:।।**25।।**

चन्दनक -आर्ये, मेरी एक प्रार्थना है, इस संकट से निकलने के बाद इस चन्दनक को भूलेगे तो नहीं । यह मैं किसी लोभ से नहीं, प्रत्युत् स्नेहवश कह रहा हूँ ।।**25।।**

आर्यक -:

चन्दनश्चन्द्रशीलाढ्यो दैवादद्य सुहृन्मम।

चन्दनं भो! : स्मरिष्यामि सिद्धादेशस्तथा यदि ।।26।।

अन्वय -:चन्द्रशीलाढय:, चन्दनक:, दैवात्, अद्य, मम, सुहृद्, यदि सिद्धादेश:, तथा,भो:, चन्दनम्, स्मरिष्यामि ।।**26।।**

आर्यक -सुधाकर की तरह शीतल स्वाभाववाला चन्दनक संयोग से आज मेरा मित्र बन गया है। यदि सिद्ध की वाणी सच निकली तो निश्चय ही तुम्हें याद करूँगा। ।।**26।।**

चन्दनक -अभयं तव ददातु हरो विष्णुर्ब्रह्मा रविश्च चन्द्रश्च ।

हत्वा शत्रुपक्षं शुम्भनिशुम्भौ यथा देवी।।।।27।।

अन्वय -:हर:, विष्णु, ब्रह्मा, रवि:, च, चन्द्र:, च, तव, अभयं, ददातु । शत्रुपक्षम्, हत्वा, यथा, शुम्भनिशुम्भौ, देवी ।।**27।।**

चन्दनक -ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, चन्द्र सभी तुम्हें अभयदान दें । शत्रुओं को पराजित कर तुम

उसी प्रकार विजयी बनो जैसे शुम्भ निशुम्भ को मार कर देवी दुर्गा विजयी बनी थी। **।।27।।**

चेट :प्रवहणेन निष्क्रान्त :।

चेट गाड़ी लेकर बाहर निकल जाता है।

चन्दनक -:अरे! निष्क्रामतो मम प्रियवयस्य :शर्विलक :पृष्ठत एवानुलग्नो गत :। भवतु, प्रधानदण्डधारको वीरको राजप्रययकारी विरोधित :। तद्यावदहमपि पुत्रभ्रातृपरिवृत एतमेवानुगच्छा

चन्दनक - नेपथ्य की ओर देखकर (अरे, गाड़ी के बाहर निकलते ही मेरा मित्र शर्विलक भी गाड़ी का अनुसरण करते हुए बाहर निकल गया। अच्छा तो राजा पालक के विश्वासभाजन बलाधिपति वीरक से मैंने विरोध ठाना है तो अच्छा यही होगा कि मैं भी सपरिवार इसी आर्यक के पास चला जाऊँ।

चला जाता है।

अभ्यास प्रश्न -

क-निम्नलिखित में सही विकल्प चुनिए-

1. आर्यक का पुराना दुश्मन है -

क -चारूदत्त

ख -वसन्तसेना

ग -शर्विलक

घ – वीरक

2. जानामि का अर्थ है -

क -जानूँगा

ख-जान लेना

ग -जानता हूँ

घ – कोई नहीं

3. भीम के आचरण का अनुकरण कौन करता है -

क -चन्दनक

ख -आर्यक

ग-वीरक

घ -चारूदत्त

4. अहीर का पुत्र कौन है –

क -आर्यक

ख -वीरक

ग-चारूदत्त

घ– चन्दनक

ख-निम्नलिखित के उत्तर एक शब्द में दीजिए -

1. परोपकारी की यदि मौत भी होती है तो कोई चिन्ता नहीं। यह कथन किसका है -

2. चारूदत्त से मिलने जाने पर वसन्तसेना को रास्ते में किसने अपमानित किया –

3. उस्तरा रखने वाला सेनापति कौन है -

4. तुम्हारी माता दुन्दुभि है और पिता ढोलक है यह कथन किसका है -

5. शुनक सदृश का अर्थ है -

6- विज्ञप्ता का अर्थ है -

7. प्रत्ययिता का अर्थ है -

8. लुब्ध :का अर्थ है–

9. दैवात् का अर्थ है .10निष्क्रान्त:का अर्थ है -

4. 4 सारांश–

प्रवहण विपर्ययनामक मृच्छकटिकम् के षष्ठ अंक की इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि- वीरक राजकार्य के सम्बन्ध में अपने पिता को भी नहीं जानता अर्थात महत्व नहीं देता। आर्यक का चन्दनक पुराना मित्र है और वीरक उसका शत्रु भी है। आर्यक भीम के आचरण का अनुकरण करता है किन्तु अवसर अनुकूल न समझते हुए साहस नहीं दिखाता है। चन्दनक आर्यक को अहीरका पुत्र कहताहै। वह यह भी कहता है कि डरे हुए को अभयदान देना तथा परोपकार प्रेमी होना एक महत्ता है। ऐसे लोगों की मृत्यु भी हो तो कोई चिन्ता नहीं क्योंकि इनकी प्रशंसा तो मृत्यु के बाद भी संसार में होती ही है। चन्दनक के प्रति वीरक का सम्बोधन है कि- हे दुर्मुख ! तुम्हारी मॉ दुन्दुभि है और पिता ढोलक है तुम बलाधिपति कैसे बन गये चन्दनक उसके बालों को पकड़कर नीचे गिरा देता है और पीतता भी है। इस वीरक उसे राजाके समक्ष न्यायालय में चतुरंग दण्ड दिलवाने के लिए कहता है। इसके पश्चात चन्दनक और वसन्तसेना के स्नेहपूर्ण वार्तालापों के होने के बाद आर्यक ने चन्दनक को शीतल स्वभाव वाला कहा है और मित्र मान लिया है। चन्दनक कहता है कि ब्रह्मा, विष्णु , महेश,सूर्य , चन्द्रादि भी तुम्हें अभयदान दें। शर्विलक भी गाड़ी का अनुसरण करते हुए बाहर गया अब मैं भी राजा के विश्वासपात्र से विरोध के कारण सपरिवार आर्यक के पास ही चला जाऊँ ।

इस प्रकार इस इकाई के अध्ययन से आप यह समझाएंगे कि छठे अंक के पात्रों के सम्वादों में किस प्रकार की मर्यादा एवं नीतिका पालन किया गया है।

4. 5 पारिभाषिक शब्दावली -

हुतभुज -अग्नि , उन्नमय-ऊपर की ओर, व्यायच्छत- :युद्ध करते हुए, बन्धने – कारागार में, दक्षिणात्य -दक्षिण देश के निवासी , अव्यक्तभाषी -अस्पष्टवक्ता

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क- 1. घ 2. ग 3. ख 4.

ख- 1. चन्दन्क 2. चन्दनक 3. वीरक 4. वीरक 5. कुत्ते के समान 6. सूचित 7. विश्वास प्राप्त 8. लोभ के वश में 9. भाग्य से 10 बाहर गया हुआ।

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई का सारांश निज शब्दों में लिखिए।
2. किन्हीं चार श्लोकों की व्याख्या कीजिए।

चतुर्थ सेमेस्टर/ SEMESTER-IV
खण्ड - द्वितीय
मृच्छकटिकम्/रत्नावली

इकाई .1

मृच्छकटिकम् सप्तम अंक मूल पाठ , अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 श्लोक संख्या **1** से **9** तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.3.1 श्लोक संख्या **1** से **3** तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.3.2 श्लोक संख्या **4** से **6** तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.3.3 श्लोक संख्या **7** से **9** तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.4 सारांश

1.5 पारिभाषिक शब्दावली

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.7 संदर्भग्रन्थ

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. 1 प्रस्तावना-

मृच्छकटिकम् -प्रकरण के सप्तम अंक का वर्णन मात्र नौ श्लोकों एवं विभिन्न सम्बादों में ही सीमित है। इस सप्तम अंक से सम्बन्धित यह प्रथम इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत चारूदत्त ,विदूषक, चेत, आर्यक आदि के द्वारा किये गये वार्तालाप आपके अध्ययन हेतु प्रस्तुत हैं।

सप्तम अंक में सर्वप्रथम चारूदत्त के साथ विदूषक का प्रवेश होता है जिसमें दोनों पुष्पकरण्डक जीर्ण उद्यानकी शोभा के विषय में वार्तालाप करते हैं,चारूदत्त बर्द्धमानक की प्रतीक्षा कर हैं। इन सब सम्वादों के चलते हुए अन्त में चारूदत्त के कथन –प्रियतमा वसन्तसेना ऑखों से दूर है और बायी ऑख फड़क रही है, सिर मुड़ाते ओले पड़े,सामने अमांगलिक बौद्ध सन्यासी का दर्शन हो रहा है। आदि के द्वारा सप्तम अंक का वर्णन समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप सप्तम अंक के पात्रों के मध्य हुए सम्वादों के वैशिष्ट्य को भली भॉति समझा सकेंगे।

1. 2 उद्देश्य

सप्तम अंक के वर्णन से सम्बन्धित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- ❖ चारूदत्त और विदूषक के वार्तालाप को समझ सकेंगे।
- ❖ किसके पैरों में बेड़ी लगी है, बता सकेंगे।
- ❖ राजकीय अपराध को परिभाषित कर सकेगें।
- ❖ चारूदत्त की मनोदशा का वर्णन कर सकेंगे ।
- ❖ अपशकुन को परिभाषित कर सकेंगे।
- ❖ सप्तम अंक की साहित्यिक विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।

1.3 श्लोक संख्या 1 से 9 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

1.3.1 श्लोक संख्या 1 से 3 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

सप्तम अंक का प्रारम्भ

तत : प्रविशति चारूदत्तो विदूषकश्च।

हिन्दी अनुवाद - विदूषक के साथ चारूदत्त का प्रवेश।

विदूषक -:भो! : प्रेक्षस्व, प्रेक्षस्य, पुष्पकरण्डक-जीर्णोद्यानस्य सश्रीकाताम्।

विदूषक -आह! पुष्पकरण्डकजीर्णोद्यान की छटा कितनी मनोरम है जरा देखिए तो सही।

चारूदत्त -: वयस्य! एवमेव तत्। तथाहि -

वाणिज इव भान्ति तरव :पण्यानीव स्थिनानि कुसुमानि।

शुल्कमिव साधयन्तो मधुकर-पुरूषा :प्रविचरन्ति ॥1॥

अन्वय - तरव :वाणिज:, इव, भान्ति, कुसुमानि, पण्यानि, इव स्थितानि, मधुकरपुरूषा:, शुल्कम्, साध्यन्त:, इव, प्रविचरन्ति ॥1॥

चारूदत्त -मित्र, यह शोभा तो ठीक उसी तरह है। जैसे -कोई बाजार हो सके पेड़ बनिए है और फूल क्रय-विक्रय की वस्तु हैं, उद्यान के भौंरे राजपुरूष के द्वारा कर वसूलते इधर उधर हिल डोल रहे हैं ॥1॥

विदूषक -:भो! : इदमसस्काररमणीयं शिलातलमुपविशतु भवान्।

विदूषक -: बिना धोये पीछे भी साफ सुथरे इस पत्थर के पटिये पर आप बैठ जॉय।

चारूदत्त : प्रविश्य वयस्य! चिरयति वर्द्धमानक:।

चारूदत्त -बैठकर मित्र पता नहीं बर्द्धमानक, इतनी देर क्यों लगा रहा है?

विदूषक -: भणितो मया-'बर्द्धमानक! वसन्तसेनांगृहीत्वा लघु लघु आगच्छ' इति।

विदूषक -मैंनें तो उससे कह दिया है -जितना जल्द हो सके वसन्तसेना को लेकर आ जाओं।

चारूदत्त -: तत् किं चिरयति ?

चारूदत्त– तो फिर, देर क्यों कर रहा है ?

किं यात्यस्य पुर :शनै :प्रवहणं तस्यान्तरं मार्गते
भग्नेऽक्षेपरिवर्तनं प्रकुरूते? छिन्नोऽथवा प्रग्रह:
वर्त्मान्तोज्झित-दारू-वारित-गतिर्मार्गान्तरं याचते
स्वैरं प्रेरितगोयुग :किमथवा स्वच्छन्दमागच्छति ।2॥

अन्वय-: किम्, अस्य, पुर :,प्रवहणम्, शनै:, याति? तस्य, अन्तरम् मार्गते? अक्षे, भग्ने ,परिवर्त्तनम्, प्रकुयते किम्? अथवा, प्रग्रह:, छिन्न:, वर्त्मान्तो-ज्झितदायवारितगति:, मार्गान्तरम्, याचते, किम्? अथवा, स्वैरं, प्रेतिरतगोयुग:, स्वच्छन्दम्, आगच्छति, किम् ॥2॥

हिन्दी - क्या इसकी गाड़ी के आगे कोई सड़ियल गाड़ी धीरे-धीरे आ रही है और वह राह काट कर आगे बढने की चेष्टा कर रहा है? या इसकी गाड़ी का कोई पहिया तो नहीं टूट गया, जिसे बदलने में इसे देर हो रही हे। अथवा बैलों के पगहे तो कहीं टूट नहीं गये? या बीच सड़क पर लकड़ी काटकर तो किसी ने नहीं गिरा दिया जिससे राह रूकी है? दूसरी राह से आने की बात सोच रहा है ? अथवा-बैलों को धीमे-धीमे हॉंकता हिचकता हिचकोले खाता मस्ती से धीरे-धीरे आ रहा है ॥**2॥**

चेट: यातं गावौ ? यातम्

चेट -बढे चलो, बैलो बढ़े चलो।

आर्यक -:स्वगतम्

नरपतिपुरूषाणां दर्शनाड्भीतभीत:
सनिगडचरणत्वात् सावशेषापसार:।
अविदितमधिरूढो यामि साधोस्तु याने
परभृत इव नीडे रक्षितो वायसीभि:॥3॥

अन्वय : नरपतिपुरूषाणाम् दर्शनात्,भीतीभीत:,सनिगडचरणत्वात्,सावशेषापसार:,नीडे, वायसीभि:, रक्षित:, परभृत, इव साधो :याने, अविदितम्, अधिरूढ:, यामि ।।3।।

हिन्दी अनुवाद -छिपकर गाडी में बैठे हुए आर्यक को लेकर चेट का प्रवेश।

आर्यक -मन ही मन सिपाहियों को देखकर काफी डरे हुए,पैरों में बेड़ी पड़े रहने के कारण भागने में बिल्कुल असमर्थ, सज्जन चारूदत्त की गाड़ी में छिपकर ठीक उसी तरह सुरक्षित में जा रहा हूँ, जैसे कौए के घोंसले में मादा काक द्वारा अज्ञात भाव से पालित कोयल के बच्चे होते हैं ।।3।।

अहो ! नगरात् सुदूरमपक्रान्तोऽस्मि । तत् किमस्मात् प्रवहणादवतीर्य वृक्षवाटिकागहनं प्रविशामि? उताहो प्रवहणस्वामिनां पश्यामि। अथवा कृतं वृक्षवाटिकागहनेन । अभ्युपपननवत्सल :खलु तत्रभवानार्यचारूदत्त :श्रूयते; तत् प्रत्यक्षीकृत्य गच्छामि।

1.3.2 श्लोक संख्या 4 से 6 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

स तावदस्माद्व्यसनार्णवोत्थितं
निरीक्ष्य साधु :समुपैति निर्वृतिम्।
शरीरमेतत् गतमीदृशीं दशां
धृतं मया तस्य महात्मनो गुणै:।।4।।

अन्वय- : साधु:, स: , अस्मात्, वसनार्णवोत्थितम्, निरीक्ष्य, निर्वृत्तिम्, समुपैति। मया, ईदृशीम्, दशाम्, गतम्, एतत्, शरीरम्, तस्य, महात्मन:, गुणै:, धृतम् ।।4।।

हिन्दी अनुवाद -अरे वाह, मैं तो अब शहर से बहुत दूर बाहर निकल आया हूँ , तो क्यों न, गाड़ी से चुपके उतर कर इन सघन पेड़ों की ओट में छिपकर निकल जाऊँ। अथवा -इस गाड़ी के मालिक से ही क्यों न मिल लूँ पेड़ो की ओट से भाग निकलना अच्छा नहीं होगा। हमने सुना है -आर्य चारूदत्त शरणागतवत्सल हैं तो मिलकर ही जाना ठीक होगा।

उस भले आदमी को इस विपत्तिरूपी सागर से उबरा हुआ मुझे देख कर परम सुख का अनुभव होगा। क्योंकि ऐसी संकटमयी स्थिति में पड़ी मेरी देह उसी साधु पुरूष के गुणों से अब तक सुरक्षित है ।। 4 ।।

चेट - **:**इदं तदुद्यानम्, तद् यावदुपसर्पामि। आर्य मैत्रेय?

हिन्दी अनुवाद- चेट -यह वह फुलवारी है तो चलूँ।पहुँच कर आर्य मैत्रेय,

विदूषक - **:**भो! : प्रियं ते निवेदयामि, वर्द्धमानको मन्त्रयति, आगतया वसन्तसेनया भवितव्यम्।

विदूषक -मित्र, तुम्हें मैं खुशखबरी सुनाता हूँ ,वर्द्धमानक बुला रहा है; वसन्तसेना आ गई होगी?

चारूदत्त -: प्रियं न : प्रियम्।

चारूदत्त—निश्चय ही हमारे लिए यह खुशखबरी है।

विदूषक -: दास्या :पुत्र! किं चिरायितोऽसि ?

विदूषक - अरे ओ नीच तुमने इतनी देर क्यों लगा दी।

चेट -:आर्य! मैत्रेय! मा कुप्य। यानास्तरणं विस्मृतमिति कृत्वा गतागतिं कुर्वन् चिरायितोऽस्मि।

चेट -मान्यवर, गुस्सा न करें, गाड़ी का गद्दा भूल गया था अत :उसे लाने के क्रम में आने-जाने के कारण कुछ देर हो गई।

चारूदत्त -:वर्द्धमानक! परिवर्तय प्रवहणम्। सखे ! मैत्रेय! अवतारय वसन्तसेनाम्।

चारूदत्त -वर्द्धमानक, गाड़ी घुमाओ। मैत्रेय, वसन्तसेना को उतारो।

विदूषक -:किं निगडेन बद्धावस्या :पादौ? येन स्वयं नावतरति। भो :न वसन्तसेना, वसन्तसेन : खल्वेष:।

विदूषक -क्या इनके पैर में बेड़ी पड़ी है, जिससे खुद उतर नहीं रही हैं?) उठकर गाड़ी को खोलकर मित्र, यह वसन्तसेना नहीं, वसन्तसेना नहीं, वसन्तसेन है।

चारूदत्त-: वयस्य! अलं परिहासेन, न कालमपेक्षते स्नेह:। अथवा स्वयमेवावतारयामि। इत्युत्तिश्ठति।

चारूदत्त-क्यों मजाक करते हो। प्रेम विलम्ब नहीं चाहता। अथवा-मैं स्वयं ही उतार लेता हूँ। उतारने के लिए उठता है।

आर्यक : दृष्ट्वा (अये! अयमेव प्रवहणस्वामी न केवलं श्रुतिरमणीय:, इृष्टिरमणीयोऽपि। हन्त! रक्षितोऽस्मि।

आर्यक -देखकर तो क्या यही गाड़ी के मालिक है। यह सुनने में ही नहीं देखने में भी रमणीय हैं। वाह, अब मेरी रक्षा निश्चित हो गई।

चारूदत्त -: प्रवहणंमधिरूह्य अये। तत् कोऽयम् ?

करिकर-समबाहु :सिंहपीनोन्नतांस:
पृथुतर-सम-वक्षास्ताम्रलोलायताक्ष:।
कथमिदमसमानं प्राप्त एवंविधो या
वहति निगडमेकं पादलग्नं महात्मा।।5।।

तत :को भवान् ?

अन्वय -:य:, महात्मा, करिकरसमबाहु :सिंहपीनोन्नतांस, पृथुतरसमवक्षा:, ताम्रलोलायताक्ष:, इदम्, असमानम्, प्राप्त:, पादलग्नम्, एकम्, निगडम्, कथम्, वहति। ।।5।।

हिन्दी अनुवाद -चारूदत्त -गाड़ी पर चढकर अरे तब यह कौन है?

तब आप कौन है ? इसकी बॉहें हाथ की सूडँ की तरह हैं, सिंह की तरह मोटे एवं ऊँचे कन्धे हैं , एवं चौडी छाती है, तॉवे के रंग की चंचल काली कजरारी ऑखें हैं। इस तरह में यह कोई महान् व्यक्ति प्रतीत होता है। फिर भी, इसके व्यक्तित्व के प्रतिकूल इसके पैर में बेड़ी क्यों पड़ी है।।5।।

आर्यक -: शरणागतो गोपालप्रकृतिरार्यकोऽस्मि ।

आर्यक -मैं गोपबालक आर्यक एक शरणार्थी हूँ ।

चारूदत्त : किं घोषादानीय योसौ राज्ञा पालकेन बद्ध:?

चारूदत्त - क्या आप वही आर्यक है जिसे राजा पालक ने घर से निकाल कर जेल में बन्द कर दिया था?

आर्यक -:अथ किम् ।

हिन्दी अनुवाद -आर्यक -जी हॉ, मैं वही आर्यक हूँ।

चारूदत्त - :विधिनैवोपनीतस्त्वं चक्षुर्विषयमागत:।

अपि प्राणानहं जह्यां न तु त्वां शरणागतम् ।।6।।

आर्यको हर्षं नाटयति ।

अन्वय - :त्वम्, विधिना, एव, उपनीत:, चक्षुर्विषयम्, आगत:, अहम्, प्राणान्, अपि ,जह्याम्, तु, शरणागतम्, त्वाम्, न ।।6।।

चारूदत्त -हे आर्यक, तुम्हारे भाग्य ने तुम्हें ऑखों के सामने ला पटका है, मैं अपनी जान दे सकता हूँ , पर तुम्हारी रक्षा करूँगा ।।6।।

आर्यक खुश हो जाता है

चारूदत्त -: वर्द्धमानक!: चरणान्निगडमपनय ।

चारूदत्त -गाड़ीवान् इनके पैर की बेड़ी काटो।

चेट -:यदार्य आज्ञापयति । आयं! अपनीतानि निगडानि।

चेट -जैसी आप की आज्ञा वैसा ही करके आर्य, बेड़ी काट दी गई है ।

आर्यक -:स्नेहमयान्यन्यानि दृढतराणि दत्तानि ।

आर्यक -तुमने अपनी प्रेमरूपी दूसरी कठिन बेड़ी डाल दी है ।

विदूषक -:संगच्छ निगडानि, एषोऽनि, मुक्त:, साम्प्रतं वयं व्रजिष्याम:।

विदूषक -बेड़ी कटी , ये भी महाशय मुक्त हुए, अब हमलोग वसन्तसेना की खोज में लगें ।

चारूदत्त -:धिक्, शान्तम् ।

चारूदत्त -रहने दो, ऐसी बातें मुँह से भी नहीं निकालो

आर्यक -: सखे! चारूदत्त!अहमपि प्रणयेनेदं प्रवहणमारूढ :तत्क्षन्तव्यम्।

आर्यक-मित्र,मैं तो उत्सुकतावश इस गाड़ी पर सवार हो गया था । इसके लिए आप मुझे क्षमा कर दें

चारूदत्त- : अलंकृतोऽस्मि स्वयंग्राहप्रणयेन भवता ।

चारूदत्त -आप अपनी इच्छा से इस गाड़ी पर चढ़े हैं, इससे तो कुछ मेरी शोभा ही बढ़ी है ।

आर्यक -:अभ्यनुज्ञातो भवता गन्तुमिच्छामि।

आर्यक -आप का हुक्म लेकर अब मैं जाना चाहता हूँ।

चारूदत्त -: गम्यताम्।

चारूदत्त - आप जॉय।

आर्यक -:भवतु, अवतरामि।

आर्यक – अच्छ, उतरता हूँ।

चारूदत्त -:सखे! नावतरितव्यम्। प्रत्यग्रापनीतसंयमनस्य भवतोलघुसंवारा गति :। प्रदेशे प्रवहणं विश्वासमुत्पादयति, तत् प्रवहणेनैव गम्यताम्।

चारूदत्त -मित्र गाड़ी से मत उतरो। सिपाही घूम रहे हैं। तुम्हारे पैर से बेड़ी अभी ही कटी है। तुम ठीक से अभी चल नहीं सकते। गाड़ी तुम्हारे लिए निरापद है। अत :इसी से जाओ।

आर्यक -:यथाह भवान्।

आर्यक -आपकी जैसी आज्ञा हो।

चारूदत्त -:क्षेमेण व्रज बान्धवान्,

आर्यक -:ननु मया लब्धो भवान् बान्धव:,

चारूदत्त -:स्मर्त्तव्योऽस्मि कथान्तरेषु भवता,

आर्यक -:स्वात्मापि विस्मर्यते ?।

चारूदत्त -:त्वां रक्षान्तु पक्षि प्रयान्तममरा:,

आर्यक -:संरक्षितोऽहं त्वया,

1.3.3 श्लोक संख्या 7 से 9 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

चारूदत्त -:स्वैर्भाग्यै: परिरक्षितोसि,

आर्यक - ननु हे! तत्रापि हेतुर्भवान्।।7।।

अन्वय -:चारूदत्त:, बान्धवान् , क्षेमेण, व्रज । आर्यक-:ननु मया, भवान्, बान्धव:, लब्ध:। चारूदत्त -:भवता, कथान्तरेषु, स्मर्त्तव्य :, अस्मि । आर्यक -:स्वात्मा, अपि, विस्मर्यते ? चारूदत्त-:अमरा:, पथि, प्रयान्तम्, त्वाम्, रक्षन्तु, । आर्यक -:त्वया, अहम्, संरक्षित:। चारूदत्त- : स्वै:, भाग्यै:, परिरिक्षत:, असि। आर्यक-:हे, तत्रापि, ननु, भवान्, हेतु:।।7।।

चारूदत्त -सकुशल आप अपने बन्धुजनों से मिलें।

आर्यक -मैं तो आपको ही अपना बन्धु मानता हूँ।

चारूदत्त -फुरसत के समय मुझे भी याद कर लेना

आर्यक -क्या अपनी आत्मा को भी कोई भूलता है ?

चारूदत्त -जाते हुए रास्ते में तुम्हारी रक्षा देवता करें।

आर्यक -मेरी रक्षा तो आपने ही कर दी।

चारूदत्त -नहीं , तुम्हारी रक्षा तो तुम्हारे भग्य ने की है।

आर्यक -हॉ मित्र, उस भाग्य में भी तुम्ही करण हो **।।7।।**

चारूदत्त -:यत्, उद्यते पालके महती रक्षा न वर्त्तते, तत् शीघ्रमपक्रामतु भवान्।

चारूदत्त - राजा पालक तुम्हीं पकड़ने की हर सम्भव कोशिश कर रहा है। अत :तुम्हारी रक्षा अभी खतरे में है। तुम यहॉ से शीघ्र भाग जाओ ।

आर्यक -:एवं पुनर्दर्शनाय। इति निष्क्रान्त

आर्यक – पुन : देव दर्शन के लिए चला जाता है

चारूदत्त -:

कृत्वैवं मनुजपतेर्महद्व्यलीकं,

स्थातुं हि निगडं प्रशस्तमस्मिन्।

मैत्रेय ! क्षिप निगडं पुराणकूपे

पश्येयु :क्षितिपतयो हि चारदृष्टया ।।8।।

अन्वय -:हे मैत्रेय, एवम्, मनुजपते:, महद्, व्यलीकम्, कृत्वा, अस्मिन,क्षणम् अपि, स्थातुम्, न, प्रशस्तम्।निगडम्, पुराणकूप, क्षिप्तं हि, क्षितिपतय:, चार -दृष्टया पश्येयु:।।8।।

चारूदत्त -इस तरह राजकीय अपराध करके इस बगीचे में अब एक क्षण भी रूकना भी उचित नहीं है। मैत्रेय, इस बेड़ी को जल्द किसी पुराने कुँए में फेंककर यहॉ से भागो। क्योंकि राजा दूत की ऑखों से देखता है **।।8।।**

वामाक्षिस्पन्दनं सूचयित्वा सखे! मैत्रेय ! वसन्तसेनादर्शनोत्सुकोऽयं जन:। पश्य -

अपश्यतोद्य तां कान्तां वामं स्फुरति लोचनम्।

अकारणपरित्रस्तं हृदयं व्यथते मम ।।9।।

अन्वय -:अद्य, ताम्, कान्ताम्, अपश्यत:, मम, वामम्, लोचनम्, सफुरति, अकारणपरित्रस्तम्, हृदयम्, व्यथते ।।9 ।।

हिन्दी अनुवाद -वाई ऑख फड़कती है। मैत्रेय, अब मैं वसन्तसेना को शीघ्र देखने के लिए अति आकुल हो उठा हूँ। देखो -

प्रियतमा वसन्तसेना ऑखों से दूर है और मेरी वाई ऑख फड़क रही है। बिना कोई कारण मेरा मन अकुला रहा है **।।9 ।।**

तदेहि,गच्छाव:। परिक्रम्य कथमभिमुखमनाभ्युदयिकं श्रमणकदर्शनम्। विचार्य प्रविशत्वयमनेन पथा। वयमप्यनेनैव पथा गच्छाम:। इति निष्क्रान्त:। इत्यार्यकापहरणं नाम सप्तमोऽङ्क:।
तो फिर आओ हम चले ही। घूमकर हाय! सिर मुड़ाते ही ओले पड़े सामने ही ये अमागलिक बौद्ध संन्यासी के दर्शन हुए कुछ सोच कर अच्छा तो फिर ये इस रास्ते से जॉय, हम भी इसी रास्ते से चलें। च छोड़कर सभी चले जाते है। इसी के साथ सातवॉ अंक समाप्त हो जाता है।

अभ्यास प्रश्न -

1. निम्नलिखित प्रश्नों के एक शब्द में उत्तर दीजिए -

1. चारूदत्त को पेड .किसकी भॉति लग रहे हैं-

2. क्रय विक्रय की वस्तु क्या है -

3. भौरे किसके द्वारा कर वसूलते हैं -

4. राजा के सैनिकों को क्या कहा गया है-

5. किसका आना शुभ समाचार है -

2. निम्नलिखित में सही विकल्पचुन कर उत्तर दीजिए-

1. परभृत का अर्थ है -

क -कोकिल ख -कौवा ग -काजल घ -कोई नहीं

2. गतागतिम् का अर्थ है -

क -यातायात ख-जाना ग-गति-अगति घ -गमन

3. शाकटिकया वर्द्धमानक कौन है -

क -गाड़ीवान ख-कोषाध्यक्ष ग-मन्त्री घ -सैनिक

4. क्षेमण में विभक्ति है -

क -द्वितीया ख -चतुर्थी ग-तृतीया घ -कोई नहीं

5. कान्ता का किस अर्थ में प्रयोग है -

क -पत्नी ख -प्रिया ग-प्रेमी घ-पति

1. 4 सारांश -

सप्तम अंक के वर्णन से सम्बन्धित इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि सर्वप्रथम चारूदत्त और विदूषक के बीच क्या वार्तालाप हुए। इसके पश्चात् चारूदत्त के सम्बन्ध में आर्यक के कथन विस्तृत हैं जिसमें उसके गुणों का प्रख्यापन किया गया है। आर्यक एक गोप बालक शरणार्थी है जिसे राजा पालक के द्वारा घर से निकालकर जेल में बन्द कर दिया गया था। चारूदत्त उसकी रक्षा का भरोसा देते हुए उसके पैरों की बेड़ी गाड़ीवान के द्वारा कटवा देता है, किन्तु इस पर अभिभूत लेकर आर्यक चारूदत्त से कहता है कि आपने मुझे ऐसा करके प्रेम की बेड़ी में फसा दियाहै। इसके पश्चात् सभी वसन्तसेना की खोज में लग जाते है। आर्यक जाना चाहता है किन्तु चारूदत्त उसे अपनी गाड़ी को सुरक्षित स्थान बताते हुए जाने से मना कर देता है। किन्तु अब क्षणभर भी वहॉ रूकना नही चाहता। पुन:वसन्तसेना से मिलने की इच्छा प्रकट करते हुए अपशकुन का वर्णन प्राप्त है। चारूदत्त कहता है कि सिर मुड़ाते ही ओले पड़े अब तो किसी अमांगलिक बौद्ध सन्यासी के दर्शन हो गये। इस प्रकार प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि सप्तम अंक में चारूदत्त ने किसप्रकार की उदारता का प्रदर्शन कर आर्यक को बन्धन मुक्त किया एवं सप्तम अंक का साहित्यिक तथा सामाजिक वैशिष्ट्य क्या है।

1.5 शब्दावली –

1.वयस्य -यह नाटक की भाषा में मित्र के लिए सम्बोधन स्वरूप प्रयुक्त किया जाता है।

2. पण्यानि – विक्रय की जाने वाली वस्तु को पण्य कहते है, उसी का बहुवचन है पण्यानि।

3. लघु लघु आगच्छ -त्वरित या जल्दी आने के लिए शब्द का प्रयोग किया गया है।

4 . अहो -नाटकों में इस शब्द का प्रयोग विस्मय सूचक अव्यय के रूप में किया जाता है।

5. अभ्युपन्नवत्सल – शरण में आने वाले पर कृपा करके उसकी रक्षा करने वाला अर्थात् शरणागतवत्सल।

1. 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.प्रश्नों के एक शब्द में उत्तर -

1.बनिया 2. फूल 3.राजपुरूष 4.नरपतिपुरूष 5. वसन्तसेना

2. सही उत्तर-

1. क 2. क 3. क 4.ख 5.ख

1. 7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

1. 8 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. सप्तम अंक के श्लोक संख्या 1, 2 व तीन के सन्दर्भ सहित अनुवाद कीजिए।

2. सप्तम अंक की साहित्यिक विशेषता लिखिए।

3. सप्तम अंक का सारांश अपने शब्दो में लिखिए।

इकाई-2

मृच्छकटिक श्लोक संख्या1 से 24 तक मूलपाठ, अर्थ एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 श्लोक संख्यां 1 से 24 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
2.3.1 श्लोक संख्या 1 से 9 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
2.3.2 श्लोक संख्या 10 से 15 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
2.3.3 श्लोक संख्या 16 से 24 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
2.4 सारांश
2.5 पारिभाषिक शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 संदर्भग्रन्थ
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2 . 1प्रस्तावना -

मृच्छकटिकम् प्रकरण के अध्ययन से सम्बन्धित यह द्वितीय इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप अष्टम अंक के प्रथम श्लोक से लेकर चौबीसवें श्लोक तक किये गये वार्तालापों एवं श्लोकों में वर्णित साहित्यिक एवं व्याकरणात्मक विषयों का अध्ययन करेंगे।

आठवें अंक का प्रारम्भ भीगा हुआ भगवा हाथ में लिए हुए बौद्ध सन्यासी के प्रवेश से होता है जिसकी सूचना पूर्व की इकाई में अन्त में चारूदत्त के द्वारा दी गयी है। वह धर्म का उपार्जन करने की बात करता है, ध्यान करने का उपदेश और जितेन्द्रिय होकर आचरण करने की बात करता है। संसार नश्वर है अत :धर्म की शरण में रहो। उसके इन कथनों पर नेपथ्य से उसे नीच बौद्ध सन्यासी कहा जाता है जिसे वह पहचान कर राजा के साले संस्थान के रूप में परिचय देकर अगली बात कहता है। इसके बाद शकार विट और भिक्षु आदि के बीच अनेक सम्वाद हुए हैं। जिनका अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप अष्टम अंक के श्लोक सं 1 से चौबीस तक के विभिन्न वैशिष्ट्यों को बता सकेंगे।

2. 2 उद्देश्य–

मृच्छकटिकम-प्रकरण के आठवें अंक के अध्ययन हेतु प्रस्तुत इस इकाई के अध्ययन के बाद आप बता सकेंगे कि-

- ❖ प्रवेश के पश्चात बौद्ध सन्यासी ने क्या कहा।
- ❖ राजा का साला सन्यासी से किस प्रकार की वार्ता करता है।
- ❖ नेपथ्य से सन्यासी का अपमान कौन करता है।
- ❖ गुणगान और स्तुति में क्या अन्तर है।
- ❖ कामनाएं किस कारण और तीव्र होती हैं।
- ❖ पाप और पुण्य का साक्षी कौन है।
- ❖ इस इकाई के वर्ण्य विषय की विशेषता क्या है।

2.3 श्लोक संख्यां 1 से 24 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

2.3.1 श्लोक संख्या 1 से 9 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

आठवें अंक का प्रारम्भ तत: प्रविशति आर्द्रचीवरहस्तो भिक्षु

भिक्षु -:अज्ञा! कुरूत धर्मसञ्चयम्।

संयच्छत निजोदरं नित्यं जागृत ध्यानपटहेन।

विषमा इन्द्रिय चौरा हरन्ति चिरसञ्चितं धर्मम् ।।1।।

अपि च, अनित्यतया प्रेक्ष्य केवलं तावद्धर्माणां शरणमस्मि।

अन्वय -:निजोदरम्, संयच्छत, ध्यानपटहेन, नित्यम्, जाग्रत, विषमा:, इन्द्रियचौरा:,चिरसञ्चितम्, धर्मम्, हरन्ति ॥1॥

हिन्दी अनुवाद -इसके बाद भीगा भगवा हाथ में लिये संन्यासी का प्रवेश

संन्यासी -हे पुरूषों, धर्म का उपार्जन करो। अपने पेट को नियंत्रण में रक्खों, ध्यानरूपी नगाड़े से हमेशा जगते रहो, क्योंकि ये इन्द्रियॉ अतिशक्तिशालिनी है, चिरकालोपार्जित धर्म भी ये सहसा अपहृत कर लेती है ॥1॥

और धर्म के अतिरिक्त सम्पूर्ण संसार को नश्वर समझ कर ही मैं धर्म की शरण में आया हूँ।

पन्चजना येन मारिता :स्त्रियं मारयित्वा ग्रामो रक्षित:।

अवलश्च चाण्डालो मारित :अवश्यमपि स नर :स्वर्ग गाहते ॥2॥

शिरो मुण्डितं तुण्डं मुण्डितं चित्तं न मुण्डितं किमर्थं मुण्डितम् ?।

यस्य पुनश्र्व चित्तं मुण्डितं साधु शिरस्तस्य मुण्डितम् ॥3॥

अन्वय -:येन, पञ्चजना:, मारिता:, स्त्रियम्, मारयित्वा, ग्राम:, रक्षित:, अबल :चाण्डाल:, च मारित:, स, नर:, अवश्यम्, स्वर्गम् अपि गाहते ॥2॥

अन्वय -:यस्य, शिर:, मुण्डितम्, तुण्डम्, मुण्डितम्,चित्तम्, न, मुण्डितम् तदा किमर्थम्, मुण्डितम्, यस्य च, चित्तम्, साधु, मुण्डितम्, तस्य, शिर:, सुष्ठु, मुण्डितमम्, ॥3॥

हिन्दी अनुवाद -जिसने पञ्चज्ञानेन्द्रियों को नियंत्रित कर लिया, अविद्यारूपी स्त्री को मारकर शरीर रूपी ग्राम की रक्षा कर ली है तथा घमण्ड या कामरूपी निर्बल चाण्डाल का जिसने बध कर डाला है, निश्चय ही वह स्वर्ग जाता है ॥2॥

जिसने सिर मुंडा लिया , दाढी मुँडा ली, किन्तु मन नहीं मुड़ाया, उसने कुछ भी नहीं मुँडाया और जिसने अपने मन से विषय वासना को हटा दिया, निश्चय ही उसी का सिर मुँडाना सार्थक है ॥3॥

गृहीत-काषायोदकमेतत् चीवरम्, यावदेतत् राष्ट्रियश्यालकस्य उद्याने प्रविश्य पुश्करिण्यां प्रक्षाल्य लघुलघु अपक्रमिष्यामि।

यह भगवॉ अब काफी गेरूआ रंग सोख चुका है, जल्दी-जल्दी , राजा के साले के बगीचे में घुसकर उसी सरोवर में इसे धोकर निकल जाऊँ। जाकर वैसा ही करता है।

नेपथ्ये - तिष्ठ, रे दुष्टश्रमणक ! तिष्ठ।

हिन्दी अनुवाद -नेपथ्य में ठहर, रे नीच, बौद्ध संन्यासी तू ठहर।

भिक्षु -:आश्चर्यम्! एष स राज-श्याल-संस्थानक आगत:। एकेन भिक्षुणा अपराधे कृते, अन्यमपि यस्मिन् यस्मिन् भिक्षुं प्रेक्षते, तस्मिन् गामिव नासिकां विद्ध्वा अपवाहयति। तत् कस्मिन् अशरण :शरणं गमिष्यामि ? अथवा भट्टारक एव बुद्धो मे शरणम्।

प्रविश्य सखड्गेन विटेन सह शकार:।

भिक्षु -देखकर, डरते हुए (हाय, हाय यह तो राजा का साला संस्थान आ गया, यह दुष्ट तो किसी एक सन्यासी को देखता है -बैल की तरह उसकी नाक में नथ डाल कर, पीट-पीट कर बाहर खदेड़ देता है। मैं तो बिल्कुल असहाय हूँ किसकी शरण जाऊँ ? अथवा – भगवान् बुद्ध ही मेरे संरक्षक हैं। तलवार लिए हुए विट के साथ शकार का प्रवेश

शकार -:तिष्ठ,रे दुष्टश्रमणक !तिष्ठ ।आपानक-मध्य–प्रविष्टस्येव रक्तमूलकस्य शीर्ष ते भड़्क्ष्यामि।

शकार – ठहर रे नीचे संन्यासी, ठहर, मदिरा पीने वालों के बीच आई हुई लाल मूली की तरह तुम्हारा माथा फोड़ता हूँ। मारता है।

विट -:काणेलीमात! : न युक्तं निर्वेद-धृत-कषायं भिक्षुं ताडयितुम्। तत् किमनेन। इदं तावत् सुखोपगम्यमुद्यानं पश्यतु भवान्।

अशरण-शरण-प्रमोदभूतैर्वनतरूभि : क्रियमाण-चारू कर्म।
हृदयमिव दुरात्मनामगुप्तं नवमिव राजयमनिर्जितोपभोग्यम् ।।4।।

अन्वय -:शरणशरणप्रमोदभूतै:, वनतरूभि:, क्रियमाणचारूकर्म, दुरात्मनाम्, हृदयमिव , अगुप्तम्, नवम् राज्यमिव, अनिर्जितोपभोग्यम् उद्यानं पश्य।

विट -अरे ओ कुँआरी मॉं के बेटे,गैरिकवस्त्रधारी विरागी संन्यासी को भी कोई मारता है ? इससे झगड़ने से भला कया लाभ ?सुख प्राप्य इस वाटिका की निराली छटा तो देखो।
घरहीनों के लिए आश्रयभूत, आनन्ददायक इन पेड़ो के परोपकारी काम को तो देखो। यह दुष्टों के दिल की तरह सामान्य सर्वगम्य तथा नवीन राज्य की तरह अनियंत्रित उपभोग्य फल को देने वाला है **।।4।।**

भिक्षु -:स्वागतम्, प्रसीदतु उपासक:।

शकार -:भाव! प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व। आक्रोशति माम्।

विट -:किं ब्रवीति?

शकार -:उपासक इति मां भणति। किमहं नापित :?

विट -:बुद्धोपासक इति भवन्तं स्तौति।

शकार -:स्तुनु श्रमणक! स्तुनु।

भिक्षु -:त्वं धन्य:, त्वं पुण्य :।

शकार :भाव! धन्य :पुण्य इति मां भणति, किमहं श्रावक:, कोष्ठक:, कुम्भकारो वा ?

विट -:भाव! तत् केन एष इहागत :?

भिक्षु -:इदं चीवरं प्रक्षालयितुम्।

शकार -:अरे दुष्टश्रमणक! एतन्मम भगिनीपतिना सर्वोद्यानानां प्रवरं पुष्पकरण्डकोद्यानं दत्तम्, यस्मिन् तावत् शुनका :श्नका :श्नगाला :पानीयं पिबन्ति , अहमपि प्रवरपुरूषो नस्नामि। तस्यां त्वं पुष्करिण्यां पुराणकुलुत्थ-यूथ-शबलानि दूष्यगन्धीनि चीवराणि प्रक्षालयसि । तत् त्वामेकप्रहारिकं करोमि।

विट -:काणेलीमात! : तथा तर्कयामि, यथा अनेन अचिरप्रव्रजितेन भवितव्यम्।

शकार -:कथं भावो जानाति ?

हिन्दी अनुवाद -भिक्षु -मैं आप का स्वागत करता हूँ। उपासक प्रसन्न हों।

शकार -आत्मन्, देखो तो यह गाली बक रहा है।

विट -क्या कहता है ?

शकार-मुझे उपासक कहता है। क्या मैं हज्जाम हूँ ?

विट -बुद्ध का उपासक कहकर यह आप की प्रशंसा करता है।

शकार-प्रशंसा करो, सन्यासी प्रशंसा।

भिक्षु -आप प्रशंसनीय, आप पवित्र हैं।

शकार हे विद्वान्,यह मुझे – 'धन्य पुण्य' कह रहा है। क्या मैं चारण, जुआरी या कुम्हार हूँ।

विट -रे पुंश्चलीपुत्र, यह तुम्हें धन्य कहता है, तुम्हें पुण्यात्मा कहकर तुम्हारी प्रशंसा करता है।

शकार -महाशय, तो फिर यह इस बगीचे में क्या लेने आया है ?

भिक्षु -इस भगवे को धोने के लिए।

शकार-रे दुष्ट संन्यासी, मेरे जीजा राजा पालक ने य श्रेष्ठतम पुष्पकरण्डक उद्यान मुझे दिया है। इसमें कुत्ते और सियार पानी पीते हैं। यहॉ तक की प्रधान पुरूष मैं मनुष्य होकर भी इसमें स्नान नहीं करता हूँ । उस स्वच्छ जलाशय में तुमने पुरानी कुलथी के चूर्ण से रंगे बदबू फैलाते भगवे को धोया है। अत :मैं तुम्हें एक वेंत की मार खाने की सजा देता हूँ।

विट -पुंश्वली पुत्र, मेरा अनुमान है कि यह हाल में ही बौद्ध सन्यासी बना है।

शकार -आप यह कैसे जानते हैं ?

विट -:किमत्र ज्ञेयम्। ज्ञेयम्। पश्य –

अद्याप्यस्य तथैव केशविरहाद्गौरी ललाटच्छवि:
कालस्याल्पतया च चीवरकृत :स्कन्धे न जात किण:।
नाभ्यस्ता च कषाय-वस्त्र- रचना दूरं निगूढान्तरो
वस्त्रान्तश्च पटोच्छयात् प्रशिथिलं स्कन्धे न सन्तिष्ठते ।।5।।

अन्वय -:अद्य, अपि, केशविरहात्, अस्य, ललाटच्छवि:, तथैव, गौरी, कालस्य, अल्पतया, स्कन्धे, चीवरकृत:, किण:, च, न, जात:, कषायवस्त्ररचना, च, न, अभ्यस्ता, दूरम्, निगूढान्तरम्, पटोच्छयात्, प्रशिथिलम्, वस्त्रान्तम्, च, स्कन्धे, न, सन्तिष्ठते ।।5।।

विट -इसमें जानने की बात ही क्या है। देखो -

आज भी, बालों के मुंडवा देने से इसके लिलार का रंग वैसा ही गोरा है, बहुत कम समय होने के कारण इसके कंधे पर झोले लटकाने का घट्टा नहीं पड़ा है। अभी तक इसने गेरूआ वस्त्र तक भी पहनना नहीं सीखा है। इसे भगवा रंगना भी नहीं आता है। इसके लम्बे और ढीले काले उत्तरीय वस्त्र के छोर कन्धे पर टिक नहीं पा रहे हैं **।।5।।**

भिक्षु -:उपासक! एवम् अचिरप्रव्रजितोऽहम्

भिक्षु - हॉं उपासक, तुम्हारा कथन बिल्कुल सत्य है। मैंने हाल में ही सन्यास ग्रहण किया है।
शकार -:तत् केन त्वं जातमात्र एव न प्रव्रजित :?
शकार -तो, जन्म लेते ही तुमने सन्यास क्यों नहीं ग्रहण किया? पीटता है
भिक्षु -:नमो बुद्धाय।
हिन्दी अनुवाद -भिक्षु -भगवान बुद्ध को नमस्कार है।
विट -:किमनेन ताडितेन तपस्विना? मुच्यतां, गच्छतु।
विट -इस गरीब को भला पीटने से क्या फायदा ? छोड़ो, इसे जाने दो।
शकार -:अरे! तिष्ठ तावत्, यावत् सम्प्रधारयामि।
शकार -अरे रूको तो, इसके जाने के बारे में थोड़ा विचार तो कर ही लूँ।
विट -:केन सार्द्धम् ?
विट -किसके साथ
शकार -:आत्मनो हृदयेन।
शकार -:अपने मन के साथ।
विट : हन्त! न गत :।
विट : क्या सन्यासी भागा नही।
शकार -:पुत्रक! हृदय !भट्टारक ! एष श्रमणक :अपि नाम किं गच्छतु, किं तिष्ठतु ? नापि गच्छतु, नापि तिष्ठतु। भाव ! सम्प्रधारितं मया हृदयेन सह। एतन्मम हृदयं भणति।
शकार-:, बेटे , मालिक, -क्या यह बौद्ध सन्यासी चला जाय या ठहरे मन ही मन ठहरे, न जाय, प्रकट विद्वान् मैंने मन से पूछ लिया है, मेरा मन कहता है।
विट -:किं ब्रबीति?
विट –क्या कहता है ?
शकार -:मापि गच्छतु, मापि तिष्ठतु, मापि उच्छ्वसितु, मापि नि:श्वसितु।इहैव झटिति पतित्वा म्रियताम्।
शकार -यह न जाय, न रूके, न सांस ले, न सांस छोड़े; सीधे गिर कर मर जाय।
भिक्ष -:नमो बुद्धाय। शरणागतोऽस्मि।
भिक्षु – भगवान बुद्ध को प्रणाम है। मैं शरणागत हूँ, मुझे बचाओ।
विट -:गच्छतु।
विट -जाओ।
शकार -:ननु समयेन।
शकार -एक ही शर्त्त पर।
विट -:कीदृश :समय :?
विट -वह क्या ?

शकार -:तथा कर्द्दमं क्षिपतु,यथा पानीयं पङ्काविलं न भवति । अथवा पानीयं पुञ्जीकृत्य कर्द्दमे क्षिपतु ।

शकार -पानी में कीचड़ इस तरह फेंके कि पानी गन्दा न हो अथवा पानी ही इकट्ठा कर कीचड़ में फेंके ।

विट -: अहो मूर्खता!

विपर्यस्तमनश्चेष्टै :शिला-शकल-वर्ष्मभि :।

मांसवृक्षैरियं मूर्खैर्भाराक्रान्ता वसुन्धरा ।।6।।

अन्वय -:विपर्यस्तमनश्चेष्टै:, शिलासकलवर्ष्मभि:, मांसवृक्षै:, मूर्खै:, इयम्, वसुन्धरा, भाराक्रान्ता वर्तते । भिक्षुर्नाट्येन आक्रोशति ।

विट -हाय रे, बेवकूफी –

विपरीत बुद्धिवाले, पत्थरदिल, मांसल देह मूर्खो के द्वारा ही धरती भारतवती है ।।6।।

भिक्षु हावभाव से गलियाता है ।

शकार -:किं भणति ?

शकार-यह क्या करता है ।

विट -:स्तौति भवन्तम् ।

विट -आपका गुणगान करता है ।

शकार -:स्तुनु स्तुनु, पुनरपि स्तुनु ।

तथा कृत्वा निष्क्रान्तो भिक्षु:।

शकार- थोड़ा और गुणगान करो फिर से स्तुति करो ।

वैसा करके भिक्षुक चला जाता है ।

विट -:काणेलीमात :पश्योद्यानस्य शोभाम् ।

विट – अरे ओ व्यभिचारिणी के बेटे, जरा बगीचे की छटा तो निहारो-

अमी हि वृक्षा :फल-पुष्प-शोभिता

कठोर-निष्पन्द-लतोपवेष्टिता:।

नृपाज्ञया रक्षिजनेन पालिता

नरा सदारा इव यान्ति निर्वृतिम् ।।7।।

अन्वय-:फलपुष्पशोभिता:,कठोरनिष्पन्दलतोपवेष्टिता:,अमी,वृक्षा:, नृपाज्ञया, रक्षिजनेन,पालिता:, सदारा:, नरा:, इव, निर्वृत्तिम्, यान्ति ।।7।।

हिन्दी अनुवाद -सिपाहियों से सुरक्षित, फल, फूलों से लदे,मोटी मोटी लताओं से लिपटे ये पेड़ निष्कम्प वातावरण में पत्नी के साथ प्रसन्न पुरूष की तरह सुखी लगते हैं ।।7।।

शकार:- बहुकुसुमविचित्रिता च भूमि :कुसुमभरेण विनामिताश्च वृक्षा:।
द्रुम-शिखर-लता च लम्बमाना:, पनसफलानीव वानरा ललन्ति ।। ।।8।।

अन्वय -:भूमि:, च, बहुकुसुमविचित्रिता, वृक्षा:, च, कुसुमभरेण, विनामिता, द्रुमशिखरलता, च, लम्बमाना, वानरा :पनसफलानि, इव, ललन्ति ।।8।।

शकार -आपने बहुत ठीक कहा।

अनेक रंग के फूलों के चूकर गिरने के कारण बगीचे की धरती रंग बिरंगी हो गई है, पेड़ की ऊँची डालियॉं फल-फूलों के बोझ से झुक गये हैं। ऊपर की टहनियों में लटके बानर, कटहल की तरह लग रहे हैं ।।8।।

विट -:काणेलीमात! : इदं शिलातलमध्यास्यताम्।

विट - ओ काणेलीसुत, इस पत्थर के टुकड़े पर बैठ जाओ।

शकार -:एषोऽस्मि आसित:। भाव! अद्यापि तां वसन्तसेनाम् स्मरामि, दुर्जनवचनमिव हृदयान्नपसरति।

शकार -लो बैठ गया, विट के साथ बैठ जाता है। महाशय, मैं आज भी उस वसन्तसेना को भूल नहीं पाता हूँ, दुष्टों के दुर्वचन की तरह हृदय से उसकी स्मृति हटती ही नहीं है।

विट -:स्वागतम् तथा निरस्तोऽपि स्मरति ताम्। अथवा-

स्त्रीभिर्विमानितानां कापुरूषाणां विवर्द्धते मदन:।
सत्पुरूषस्य स एव तु भवति मृदुर्नैव वा भवति ।।9।।

अन्वय -:स्त्रीभि:, विमानितानाम्, कापुरूषाणाम्,मदन:, विवर्धते, तु, सत्पुरूषस्य, स, एव, मृदु:, भवति, नैव, वा, भवति,।।9।।

विट -मन ही मन (उस तरह अपमानित होने पर भी यह वसन्तसेना को भूल नहीं पाता है अथवा, कामिनियों की फटकार से जहॉं दुष्टकामुकों की कामवासना और तेज होती है, वहीं सत्पुरूषों की वासना कम हो जाती है या बिलकुल ही समाप्त हो जाती है**।। 9।।**

शकार -:भाव! कापि वेला स्थावरकचेटस्य भणितसय 'प्रवहणं गृहित्वा लघु आगच्छेति। अद्यापि नागच्छतीति चिरमस्मि बुभुक्षित:। मध्याह्नेन शक्यते पादाभ्यां गन्तुम्। तत् पश्य पश्य

2.3.2 श्लोक संख्या 10 से 15 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

नभोमध्यगत :सूरो दुष्प्रेक्ष्य :कुपितवानरसद्दश:।
भूमिर्द्दढसन्तप्ता हतपुत्रशतेव गान्धारी।। ।।10 ।।

अन्वय -:नभोमध्यगत:, सूर्य:, कुपितवानरसदृश:, दुष्प्रक्ष्य:, हतपुत्रशता, गान्धारी, इव, भूमि:, दृढसन्तप्ता अस्ति ।।10।।

शकार -मान्यवर, स्थावरक को मैंने जल्द गाड़ी लेकर आने को कहा है, पर, वह अब तक भी नहीं आया। भूख के मारे मेरी हालत खराब है और इस दुपहरिया में मैं पैदल चल नहीं सकता। जरा देखें तो -

आकाश के बीच चमचमाते ये सूरज गुस्साये हुए वानर की तरह यह धरती भी तो संतप्त हो उठी है ।।10।।

विट - :एवमेतत् -

छायासु प्रतिमुक्तशष्पकवलं निद्रायते गोकुलं
तृष्णात्तैश्च निपीयते वनमृगैरूष्णं पय :सारसम्।
सन्तापादतिशड़्कितैर्न नगरीमार्गो नरै :सेव्यते
तप्तां भूमिमपास्य च प्रवहणं मन्ये क्वचित्संस्थितम् ।।11।।

अन्वय -:गोकुलम्, छायासु, प्रतिमुक्तशष्पकवलम्, निद्रायते।तृष्णार्त्तैः, वनमृगैः, उष्णम्, सारसम्, पयः, निपीयते। सन्तापात्, अतिशड़्कितैः, नरैः, नगरीमार्गः, न सेव्यते। प्रवहणम्, च, तप्ताम्, भूमिम्, अपास्य, क्वचित्, संस्थितम्, मन्ये ।।11।।

विट -ठीक ही तो कह रहे हो -

गायें घास चबाना छोड़कर छाया में झपकी ले रही हैं। जंगली जानवर प्यास से व्याकुल होकर जलाशय का गर्म गर्म पानी पी रहे है। मनुष्य धूप से अकुलाकर घर में घुसे हैं; जनपथ शूना पड़ा है। अत :मैं समझता हूँ, धूप में गाड़ी रोककर यह भी किसी छाया में विश्राम कर रहा होगा ।।11।।

शकार -:भाव!

शिरसि मम निलीनो भाव! सूर्यस्य पाद :
शकुनि-खग-विहड़्गा वृक्षाशाखासु लीना :।
नर-पुरूष-मनुष्या उष्णदीर्घं श्वसन्तो
गृह-शरण-निषण्णा आतयं निर्वहन्ति ।। ।।12।।

अन्वय -:हे भाव, सूर्यस्य, पादः, मम, शिरसि, निलीनः, शकुनिखगविहंगाः, आतपम्, निर्वहन्ति ।।12।।

शकार -मान्यवर, सूर्य की किरणें मेरे माथे पर हैं, चिड़िया पेड़ की डालों में चुप्पी लगाये बैठी हैं, आदमी घर में दुबके अपनी गर्म सॉस से देह की गर्मी ठंडा रहे हैं ।।12।।

भाव ! अद्यापि स चेटो नागच्छति। आत्मनो विनोदननिमिप्त किमपि गास्यामि ! भाव, भाव ! श्रुतं त्वया ? यन्मया गीतम्।

हिन्दी अनुवाद -विद्वन्! चेट अभी तक नहीं आ रहा है, तो मनोविनोद के लिए कुछ गीत ही गा लेता हूँ गाता है। आपने सुना, मैंने जो गाया।

विट -:किमुच्यते। गन्धर्वो भवान्।

विट -क्या कहा जाय ? तुम तो गन्धर्व हो।

शकार -:कथं गन्धर्वो न भविष्यामि ?

हिड़्गूज्ज्वला जीरक-भद्रमुस्ता वचाया ग्रन्थि : सगुडा च शुण्ठी।
एषा मया सेविता गन्धयुक्ति :कथं नाहं मधुरस्वर इति ।।13।।

अन्वय -: हिड़्गूज्वला, जीरकभद्रमुस्ता, वचाया :ग्रन्थिः, सगुडा शुण्ठी च, एषा, गन्धयुक्तिः, मया, सेविता, कथम्, नाहम्, मधुरस्वर :इति ।।13।।

शकार-आखिर, मैं गन्धर्व क्यों नहीं हूँ ?

हींग मिलाया सफेद जीरा, नागरमोथा, वच की गॉठ और गुड़ मिली सोंठ का सेवन मैंने किया है ? तो फिर, मेरे स्वर में माधुर्य क्यों नहीं आयेगा ?॥13॥

भाव ! पुनरपि तावत् गास्यामि। भाव ! भाव ! श्रुतं त्वया ? यन्मया गीतम्।

हे विद्वन्, मैं फिर गाता हूँ। गाता है। मान्यवर! मैंने जो गाया, उसे आपने सुना तो ?

विट :किमुच्यते ? गन्धर्वो भवान्।

विट -क्या कहा जाय ? तुम तो गन्धर्व हो।

शकार -: कथं गन्धर्वो न भवामि ?

हिड्गूज्ज्वलं दत्तमरीचचूर्ण व्याधारितं तेलघृतेन मिश्रम्।

भुक्तं मया पारभृतीयमांसं कथं नाहं मधुरस्वर इति ॥14॥

अन्वय -:हिड्गूज्ज्वलम्, दत्तमरीचचूर्णम् तैलघृतेन मिश्रम्, व्याधारितम्, पारभृतीयमांसम्, मया भुक्तम्, हम्, कथम् , न, मधुरस्वर इति **॥14॥**

शकार-आखिर, मैं गन्धर्व क्यों नहीं हूँ ?

हींग डालकर,मरीच की बुकनी मिलाकर घी में वधारा हुआ कोयल का मांस मैंने खाया है। तो फिर मेरी आवाज सुरीली क्यों नहीं हो सकती ? **॥14॥**

भाव ! अद्यापि चेटो नागच्छति

मान्यवर,अभी तक चेट आ नहीं रहा है।

विट -:स्वस्थो भवतु भवान्। सम्प्रत्येव आगमिष्यति।

तत :प्रविशति प्रवहणाधिरूढा वसन्तसेना चेटश्च।

विट -आप होश तो संभालो, चेट तो अब आ ही पहुँचेगा।

इसके बाद गाड़ी पर सवार चेट और वसन्तसेना का प्रवेश।

चेट :भीत :खल्वहम्। माध्याह्निक :सूर्य:। मा इदानीं कुपितो राजश्यालसंस्थानो भविश्यति। तत् त्वरितं वहामि। वहामि। यातम्, गावौ यातम्।

हिन्दी अनुवाद -चेट -मुझे तो बड़ा डर लग रहा है। सूर्य मध्याह्न में आ गया है। राजाका साला संस्थानक कहीं गुस्सा न जाय, इसलिए गाड़ी जल्दी-जल्दी हॉकता हूँ। बढे चलो, बैलो ! बढे चलो।

वसन्तसेना -हा धिक्! हा धिक् ! न खलु वर्द्धमानकस्यायं स्वरसंयोग :। किन्नु खलु आर्यचारूदत्तेन वाहनपरिश्रमं परिहरता अन्यो मनुष्योऽन्यत् प्रवहणं प्रेषितं भविष्यति ? स्फुरति दक्षिणं लोचनम्, वेपते मे हृदयम्, शुन्या :दिश:, सर्वमेव विसुष्ठुलं पश्यामि।

वसन्तसेना -हाय, हाय, यह तो वर्धमानक की आवाज नहीं है। तो फिर क्या बात है ? क्या आर्य चारूदत्त ने थकावट दूर करने के लिए गाड़ी और गाड़ीवान् को बदल दिया है ? मेरी दाहिनी ऑख फड़क रही है। कलेजा कॉप रहा है। दिशाऍं सूनी-सूनी लग रही हैं। सब कुछ उल्टे दिखलाई पड़ रहा है।

शकार -:भाव! भाव ! आगतं प्रवहणम।

शकार -गाड़ी की घड़घड़ाहट सुनकर (महाशय, गाड़ी आ गई।

विट -:कथं जानासि ?

विट -कैसे जानते हो ?

शकार -:किं न प्रेक्षते भाव :? बृद्धशूकर इव घुरघरायमाणं लक्ष्यते।

शकार -क्या आप नहीं देख रहे हैं ? बूढे सुँअर की तरह घुरघुराती गाड़ी आ रही है।

विट -:दृष्ट्वा साधु लक्षितम्। अयमागत:।

विट -देखकर आपने ठीक ही कहा। ये गाड़ी आ गई।

चेट -:अथ किम्।

चेट -हॉं मैं आ गया।

शकार -:पुत्रक! स्थावरक ! चेट ! आगतोऽसि ?

शकार -:वेटे, स्थावरक, चेट तुम आ गये ?

शकार -:गावावपि आगतौ ?

शकार -गाड़ी भी आ गई ?

शकार -तुम भी आ गये ?

चेट -:अथ किम्।

चेट-हॉं, गाड़ी भी आ गई

शकार -:त्वमपि आगत :?

शकार -बैल भी आ गये ?

चेट -:भट्टारक! अहमप्यागत :। हंसकर हॉं, मालिक मैं भी आ गया।

चेट -हॉं , बैल भी आ गये।

शकार -:तत् प्रवेशय प्रवहणम्।

शकार-तब गाडी भीतर करो।

चेट -:कतरेण मार्गेण ?

चेट -किस राह से ?

शकार -:एतेनैव प्राकारखण्डेन।

शकार-इस टीले पर से।

चेट -:भट्टारक! गावौ म्रियेते, प्रवहणमपि भज्यते , अहमपि चेटो म्रिये ।

चेट -मालिक, इस रास्ते से तो बैल मर जायेगे, गाड़ी टूट जायेगी, और आपका सेवक मैं भी मर जाऊँगा।

शकार: - अरे राजश्यालकोहं, गावौ मृतौ अपरौ क्रेष्यामि प्रवहणम् भग्नं अपरं घटयिष्यामि , त्वं मृत: अन्य: प्रवहणवाहको भविष्यति।

शकार-अरे, मैं राजा का साला हूँ , बैल मरेगें तो दूसरा खरीद लँगा, गाड़ी टूटेगी तो दूसरी बन जायेगी, तुम मर जाओगे तो दूसरा गाड़ीवान् रख लूँगा।

चेट -:सर्वमुपपन्नं भविष्यति, अहमात्मीयो न भविष्यामि।

चेट -सब कुछ ठीक हो जायेगा। पर मैं आपका सेवक तो जिन्दा नहीं रहूँगा।

शकार -:अरे! सर्वमपि नश्यतु। प्राकारखण्डेन प्रवेशय प्रवहणम्।

शकार -सब कुछ, समाप्त हो जाने दो, तुम इस टीले पर से गाड़ी हॉको।

चेट -:विभड्धि रे प्रवहण! समं स्वामिना विभड्पि। अन्यत् प्रवहणं भवतु भट्टारकं गत्वा निवेदयामि। कथं न भग्नम् ? भट्टारक ! एतदुपस्थिते प्रवहणम्।

चेट -टूट जा री गाड़ी, मालिक के साथ ही खत्म हो जा, दूसरी गाड़ी बन जायेगी,मैं अभी मालिक को कहताहूँ।)पास जाकर (क्या गाड़ी टूटी नहीं ? मालिक, यह गाड़ी हाजिर है।

शकार -:न छिन्नौ गावौ ? न मृता रज्जव :? त्वमपि न मृत:?

शकार -अरे बैल नहीं टूटे, रस्सियॉ नहीं मरी और तुम भी नहीं मरे?

चेट -:अथ किम्।

चेट -हाँ, सब बच गये

शकार -:भाव! आगच्छ, प्रवहणं पश्याव:। भाव! त्वमपि से गुरू :परमगुरू :प्रेक्ष्यसे, सादरक : अभ्यन्तरक इति पुरस्करणीय इति त्वं तावत् प्रवहणमग्रत :अधिरोह।

शकार -विद्वन्, आइए गाड़ी देखें। मान्यवर, तुम मेरे गुरू हो, परमगुरू हो आदरणीय हो , अन्तरंग हो एवं सम्माननीय हो, अत :तुम्हीं पहले गाड़ी पर चढो।

विट -:एवं भवतु। इत्यारोहति।

विट -ठीक ऐसा ही हो। गाड़ी पर चढता है।

शकार -:अथवा तिष्ठ त्वम्। तव वप्रीयं प्रवहणम् ? येन त्वमग्रत :अधिरोहसि। अहं प्रवहणस्वामी अग्रत :प्रवहणमधिरोहामि।

शकार -अथवा नहीं,तुम रूको। क्या तुम्हारे बाप की गाड़ी है ? जो तुम मुझसे पहले गाड़ी पर चढते हो ? मैं गाड़ी का मालिक हूँ ,अत :इस पर सबसे पहले मैं चढूँगा।

विट -:भवानेव ब्रवीति।

विट -आप ने ही तो ऐसा कहा था।

शकार -:यद्यपि अहमेवं भणामि, तथापि तब एष आदर :अधिरोह भट्टारक। इति भणितुम्।

शकार -हॉ यद्यपि तुमसे ऐसा करने को मैंने ही कहा था फिर भी तुम्हारा भी तो कुछ कर्त्तव्य था, तुम मुझसे कहते -'मालिक, पहले आप चढिए।'

विट -:आरोहतु भवान्।

विट -ठीक है तो पहले आप ही चढिए।

शकार -:एष साम्प्रतमधिरोहामि। पुत्रक ! स्थावरक ! चेट ! परिवर्त्तय प्रवहणम्।

शकार -अच्छा तो अब पहले मैं ही चढता हूँ। बेटे, स्थावरक, चेट, जरा गाड़ी तो घुमाओ।

चेट -:अधिरोहतु भट्टारक :।

चेट- गाडी घूमाकर मालिक चढिए।

शकार -:भाव! भाव ! म्रियते, म्रियते। प्रवहणाधिरूढा राक्षसी चौरो वा प्रतिवसति। यदि राक्षसी, तदा उभावपि मुषितौ। अथ चौर :तदा उभावपि खादितौ।

शकार -चढकर, कुछ देखकर, सन्देह का अभिनय कर, जल्दी –जल्दी उतरकर विट के गले से लगकर भाव, भाव, मर गये , गये। गाड़ी पर कोई राक्षसी बैठी है अथवा कोई चोर घुसा है। यदि राक्षसी है तो हम दोनों को लूटेगी और यदि चोर है तो तुम दोनों को खा जायेगा।

विट -: न भेतव्यम्। कुतोऽत्र वृषभयाने राक्षस्या :सञ्चार:। मा नाम, ते मध्याह्नार्क-ताप-च्छिन्न-दृष्टे :स्थावरकस्य सकञ्चुकां छायां दृष्ट्वा भ्रान्तिरूत्पन्ना ?

विट -डरना नहीं चाहिए। इस गाड़ी में राक्षसी कहॉ से आ सकती है। दुपहरिया की धूप के कारण तुम्हारी ऑखे चुँधिया गई हैं, अत :चेट के कपड़े की परछाई देखकर तुम्हें भ्रम हो गया है

शकार -: पुत्रक! स्थारक ! चेट जीवसि ?

शकार -बेटा चेट, तुम जिन्दा हो ?

चेट -: अथ किम्।

चेट -हॉ मालिक, मैं जिन्दा हूँ।

शकार -: भाव! प्रवहणाधिरूढा स्त्री प्रतिवसति। तदवलोकय।

शकार -महाशय, गाड़ी में कोई औरत बैठी है, देखो तो।

विट -: कथं स्त्री

अवनतशिरस :प्रयास शीघ्रं पथि वृषभा इव वर्षताडिताक्षा :।
मम हि सदसि गौरवप्रियस्य कुलजनदर्शनकातरं हि चक्षु :।।15।।

अन्वय -:पथि, वर्षताडिताक्षा:, वृषभा:, इव, अवनतशिरस:, वयम् शीघ्रम्, प्रयास । हि, सदसि,गौरवप्रियस्य, मम्, चक्षु :कुलजनदर्शनकातरम्, हि ।।15।।

विट -क्या औरत ?

राह में मेघ के पानी से आहत ऑखों वाले बैल की तरह सिर झुकाये हमें भी यहॉ से चुपचाप चल देना चाहिए। क्योंकि, मैं समाज का लब्धप्रतिष्ठ व्यक्ति हूँ। अत :किसी कुल ललना के सामने मेरी ऑखे स्वत :नीचे झुक जाती हैं। मैं उसे देखने में बिल्कुल असमर्थ हूँ **।।15।।**

वसन्तसेना -कथं मम नयनयोरायासकर एव राजश्याल :। तत् संशयिताऽस्मि मन्दभागा। एतदिदानीं मन्दभागिन्या ऊषरक्षेषपतित इव बीजमुष्टि :निष्फलमिहागमनं संवृत्तम् । तत् किमत्र करिष्यामि ?

वसन्तसेना -आश्चर्य के साथ , मन ही मन क्या मेरी ऑखों का कॉटा राजा का साला शकार ही है। हाय मैं अभागिन हूँ, मेरी जान पर खतरा है। इस समय मुझ हतभागिनी का यहॉ आना ऊसर खेत में बीज बोने की तरह बेकार हो गया। तो मैं अब क्या करूँ ?

शकार - :कातर :खल्वेष :वृद्धचेट :प्रवहण नावलोकयति । भाव! आलोकम प्रवहणम्।

शकार - यह बूढा चेट डरपोक है, ठीक से गाड़ी को देख पा नहीं रहा है। मान्यवर, जरा तुम्हीं देखो तो गाड़ी को।

विट -:को दोष :। भवत्वेवं तावत्।

विट -क्या हर्ज है। मैं ही देख लेता हूँ।

शकार -: कथ श्रृगाला उड्डीयन्ते , वायसा व्रजन्ति। तद् यावतु भाव :अक्षिभ्यां भक्ष्यते, दन्तै : प्रेक्ष्यते, तावदहं पलायिष्ये।

शकार -क्या सियार उड़ रहे हैं ? कौए भाग रहे हैं ? अत :जब तक गाड़ी पर बैठी राक्षसी मुझे ऑखो से नहीं खा लेती,दॉतो से नहीं देख लेती, मैं भाग जाता हूँ।

विट -:वसन्तसेनां दृष्ट्वा, सविषादमात्मगतम् कथमये मृगी व्याघ्रमनुसरति। भो :कष्टम्।

विट -वसन्तसेना को देखकर, मन ही मन, दु:ख से अरे यह हिरणी बाघ का पीछा क्यों कर रही है ? हाय खेद है -

2.3.3 श्लोक संख्या 16 से 24 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

शरच्चन्द्रप्रतीकाशं पुलिनान्तरशायिनम्।

हंसी हंसं परित्यज्य वायसं समुपस्थिता ।।16।।

अन्वय -:हंसी, शरच्चन्द्रप्रतीककाशम् , पुलिनान्तरशायिनम्, हंसम्, परित्यज्य, वायसम्, समुपस्थिता ।।16 ।।

शरत्काल के चन्द्रमा की भॉति अति शुभ्र एवं नदी की रेती पर स्थित हंस को छोड़कर यह हंसी कौवे के पास कैसे पहुँच गयी।

जनान्तिकम्- वसन्तसेने! न युक्तमिदं, नापि सदृशमिदम्।

पूर्व मानादवज्ञाय द्रव्यार्थे जननीवशात्।

वसन्तसेना-। **इति शिरश्चालयति।** न

विट -:अशौण्डीर्यस्वभावेन वेशभावेन मन्यते ।।17 ।।

ननूक्तमेव मया भवतीं प्रति -'सममुपचर भद्रे ! सुप्रियञ्चाप्रियञ्च '।

अन्वय -:पूर्वम्,मानात्,अवज्ञाय, सम्प्रति जननीवशात्,द्रव्यार्थम्,अथवा शौण्डीर्यस्वभावेन,मन्यते **।।17 ।।**

हिन्दी अनुवाद- धीरे से वसन्तसेने, तुमने यह उचित नहीं किया, यह तुम्हारे योग्य नहीं हुआ -पहले तो तुमने मान किया, शकार का अनादर किया। फिर धन के लालच से मॉ के कहने पर -

वसन्तसेना-नहीं। सिर हिलाती है।

विट -अपने वेश्यापन के कारण,अपने अनुदारस्वभावश स्वत: शकार के पास पहूँच गई हो **।17।**

मैंने पहले ही तुमसे कहा -हे कल्याणि, प्रिय और अप्रिय का भेद किये बिना तुम सभी पुरूषों के साथ समान व्यवहार करो।

वसन्तसेना -प्रवहणविपर्यासेनागता शरणागताऽस्मि।

वसन्तसेना -नहीं गाड़ी के फेरबदल में अनजाने ही मैं यहाँ गई हूँ। मैं आपकी शरण में हूँ मेरी रक्षा कीजिए।

विट -: न भेतव्यं, न भेतव्यम्। भवत्वेनं वञ्चयामि। शकारमुपगम्य काणेलीमात!: सत्यं राक्षस्येवात्र प्रतिवसति।

विट -डरने की कोई बात नहीं है। ठहरो, मैं शकार को ठगता हूँ। शकार के पास जाकर अरे ओ कुँआरी के बेटे,गाड़ी पर तो सचमुच राक्षसी बैठी है।

शकार : भाव! भाव ! यदि राक्षसी प्रतिवसति, तत् केन न त्वां मुश्णाति ? अथ चौर:, तत् किं न त्वं भक्षित:?

शकार : यदि सचमुच दानवी बैठी है तो उसने आपको लूटा क्यों नहीं, अथवा चोर बैठा है तो फिर खा क्यों न लिया ?

विट -:किमनेन निरूपितेन। यदि पुनरूद्यानपरम्परया पद्भ्रयामेव नगरी -मुज्जयिनीं प्रविशाव:, तदा को दोष :स्यात्?

विट- इस तरह विचार करने से क्या लाभ यदि बगीचे की आड़ ग्रहण कर ही हम लोग उज्जयिनी पहुँच जॉय तो हानि क्या है।

शकार -: एवं कृते किं भवति ?

शकार - ऐसा करने से क्या होगा।

विट -:एवं कृते व्यायाम :सेवितो धुर्याणाञ्च परिश्रम :परिहृतो भवति।

विट - ऐसा करने से हम लोगों की कसरत हो जायेगी, गाड़ीवान् और बैलों की थकावट भी दूर हो जायेगी।

शकार : एवं भवतु। स्थावरक! चेट ! नय प्रवहणम्। अथवा, तिष्ठ, तिष्ठ। देवतानां ब्रह्मणानाञ्चाग्रत :चरणेन गच्छामि। नहिं, प्रवहणमधिरूह्य गच्छामि। येन दूरतो मां प्रेक्ष्य भणिष्यन्ति –'एष सराष्ट्रियश्यालो भट्टारकोगच्छति।

शकार -तो फिर, ऐसा ही करो, बेटे चेट, गाड़ी लेकर आगे बढ। अथवा रूक जा, देवता और ब्राह्मण के आगे मैं पैदल ही चलूँगा। नहीं नहीं, मैं तो गाड़ी पर चढकर ही चलूँगा, ताकि दूर से ही लोग मुझे देखकर ही कहेंगे -'यह राजा का साला धनपति आ रहा है।'

विट -:स्वागतम् दुष्करं विषमौषधीकर्त्तुम्। भवतु एव तावत्। प्रकाशम् काणेलीमात! : एषा वसन्तसेना भवन्तमभिसारयितुमागता।

विट- मन ही मन जहर को औषधि बनाना बड़ा कठिन है। अच्छा ऐसा हो प्रकट हे पुंश्चलीपुत्र , यह वसन्तसेना, छिपकर आपसे मिलने आई है।

वसन्तसेना -शान्तं पापं, शान्तं पापम्।

वसन्तसेना -हाय, हाय, ऐसा बोलना भी पाप है।

शकार -:भाव! भाव! मां प्रवरपुरूषं मनुष्यं वासुदेवकम् ?

शकार -खुश होकर मान्यवर, प्रधान पुरूष, मनुष्य, मुझ वासुदेव के पास ?

विट -:अथ किम्।

विट -हॉं, आपके ही पास आई है।

शकार -:तेन हि अपूर्वा श्री :समासादिता, तस्मिन् काले मया रोषिता, साम्प्रतं पादयो :पतित्वा प्रसादयामि।

शकार -तब तो यह अपूर्व लक्ष्मी अनायास उपलब्ध हो गई। उस दिन तो इसे मैंने नाखुश कर दिया था। आज इसके पैरों पर गिरकर इसे खुश कर लेता हूँ।

विट -:साधु अभिहितम्।

विट -बहुत अच्छा।

शकार -:एष पदयो :पतामि। मात! : अम्बिके ! श्रृणु मम विज्ञाप्तिम्।

शकार -लो चरणो पर गिरता हूँ वसन्तसेना के पास जाकर हे मॉं, हे अम्बे, मेरी विनती सुनो-

एष पतामि चरणयोर्विशालनेत्रे! हस्ताञ्जलिं दशनखे ! तव शुद्धदन्ति !

यत्तन्मया अपकृतं मदनातुरेण तत् क्षामितासि वरगात्रि ! तवास्मि दारा:।। ।।18।।

अन्वय -:हे विशालनेत्रे, एष:, चरणयो:, पतामि,हे शुद्धदन्ति, दशनखे, तव, हस्ताञ्जलिम् हे वरगात्रि, मया, यत्, तत् क्षामिता, असि,अहम् तव, दास:, अस्मि **।।18।।**

अर्थात् हे विशाललोचने तेरे पैरों पर मैं गिरता हूँ। हे दशनखमय चरण वाली, हे स्वच्छ दॉंतों वाली, मैं तुम्हें हाथ जोड़ता हूँ। हे कोमलांगी, कामातुर होकर मैंने जो पहले तुम्हें अपमानित किया, उसके लिए आज क्षमा प्रार्थी हूँ। मैं तुम्हारा दास हूँ **।।18।।**

वसन्तसेना -अपेहि , अनार्य मन्त्रयसि।

वसन्तसेना -गुस्साकर दूर हट नीच, तुम अनर्गल बक रहे हो। पैरों से उसे मारती है।

शकार -: सक्रोधम्

यच्चुम्बितमम्बिकामातृकाभिर्गतं न देवानामपि यत् प्रणामम्।

तत् पातितं पादतलेन मुण्डं वने श्रृगालेन यथा मृताड्गम् ।।।।19।।

अरे स्थावरक ! चेट ! कस्मिन् त्वया एषा समासादिता।

अन्वय -:यत्, अम्बिकामातृकाभि:, चुम्बितम्, यत्, देवानाम्, अपि, प्रणामम्, न, गतम्, तत्, मुण्डम्, पादतलेन, पातितम्,यथा, वने, श्रृगालेन, मृताड्गम् **।।19।।**

शकार- क्रुद्ध होकर जिस माथे को मेरी मॉं ने चूमा, जो सिर कभी देवताओं के आगे भी नहीं झुका, उस माथे को जैसे जंगल में सियार शव के अंगो को पैरों से रौंदता है उसी तरह तुमने पैरों से ठुकरा दिया है **।।19।।**

अरे, चेट, तू इसे कहॉं से उठा लाया।

चेट -:भट्टक! ग्रामशकटै :रूद्धे राजमार्गे तदा चारूदत्तस्य वृक्षवाटिकायां प्रवहणं स्थापयित्वा, तस्मिन्नवतीर्य यावत् चक्रपरिवृर्त्ति करोमि , तावदेषा प्रवहणविपर्यासेन इह आरूढेति तर्कयामि।

चेट -मालिक, गाँव की गाड़ियों से जब सड़क अवरूद्ध हो गई, उस समय मैंने कुछ देर के लिए अपनी गाड़ी चारूदत्त की वाटिका में खड़ी कर दी और उतर कर उन्हें घुमाने लगा, सोचता हूँ उसी समय धोखे से यह इस गाड़ी पर चढ गई होगी।

शकार -:कथं प्रवहणविपर्यासेनागता। न मामभिसारयितुम्। तदवतर अवतर मदीयात् प्रवहणात्। त्वं तं दरिद्रासार्थवाह-पुत्रकमभिसारयसि, मदीयौ गावौ वाहयसि। तदवतर अवतर गर्भदासि ! अवतर अवतर

शकार -तो क्या गाड़ी के फेरबदल से यह आई मुझसे मिलने नहीं। तो फिर मेरी गाड़ी से उतर। नीच, मिलने जा रही है उस दरिद्र चारूदत्त से और मेरे बैलों से ढोयी जा रही है। उतर मेरी गाड़ी से उतर।

वसन्तसेना-तमार्यचारूदत्तमभिसारयसि इति यत् सत्यम्, अलङ्कृतास्मि अनेन वचनेन। साम्प्रतं यद्भवतु तद्भवतु।

वसन्तसेना- उस आर्य चारूदत्त से रमण करने जा रही हो यह सुनकर मैं निहाल हो गई अब जो हो, सो हो।

शकार -:

एताभ्यां ते दशनखोत्पलमण्डलाभ्यां हस्ताभ्यां चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम्।
कर्षामि ते वरतनुं निजयानकात् केशेषु बालिदयितामिव यथा जटायु :।।20।।

अन्वय -:दशनखोत्पलमण्डलाभ्याम् , चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम्, एताभ्याम्, हस्ताभ्याम्, यथा, जटायु:, बालिदयिताम्, इव, केशेषु, ते वरतनुम्, निजयानकात्, कर्षामि ।।20।।

शकार -मैं दसनख रूपी कमलवाले तथा मीठी मीठी बातों की तरह पीटने में अभ्यस्त अपने हाथों से तुम्हारा बाल पकड़कर गाड़ी से घसीटकर उसी तरह निकालता हूँ जैसे जटायु ने बालि की पत्नी तारा को घसीटा था **।।20।।**

विट -:अग्राह्या मूर्द्धजेष्वेता :स्त्रियो गुणसमन्विता :।
न लता :पल्लवच्छेदमर्हन्त्युपवनोद्भवा :।।21।।

अन्वय -: गुणसमन्विता:, एता :स्त्रिय:, मूर्धजेषु, अग्राह्या :उपंवनोद्भवा:, लता:, पल्लवच्छेदम्, न, अर्हन्ति **।।21।।**

तदुत्तिष्ठ त्वम्। अहमेनामवतारयामि। वसन्तसेने ! अवतीर्यताम्।

वसन्तसेना अवतीर्य एकान्ते स्थिता।

विट -ये गुणवती स्त्रियॉं ऐसे घसीटी नहीं जाती, फुलवाड़ी की लताओं के पत्ते तोड़े नहीं जाते ।।21।।

तो फिर तुम उतरो, मैं इसे गाड़ी से उतारता हूँ। वसन्तसेने, उतरिये।

वसन्तसेना गाड़ी से उतर कर एक ओर खड़ी हो जाती है।

शकार -:य :स मम वचनापमानेन तदा रोषाग्नि :सन्धुक्षित:, अद्य एतया पादप्रहारेणनेन प्रज्वलित:, तत् साम्प्रतं मारयाम्येनाम्। भवतु, एवं तावत्। भाव! भाव !

शकार-मन ही मन पहले जो इसके तिरस्कार से मेरी कोपाग्नि जली थी, आज इसके पैरों की ठोकर से दहक उठी है। तो अब इसे मारूँगा। अच्छा ठीक इस तरह , प्रकट हे विद्वन!

यदिच्छसि लम्बदशाविशालं प्रावारकं सूत्रशतैर्युक्तम्।
मासञ्च खादितु तथा तुष्टिं कतुँ चुहू चुहू चुक्कु चुहू चुहू इति।22।।

अन्वय -:यदि, सूत्रशतै:, युक्तम्, लम्बदशाविशालम्, प्रावारकम्, तथा, चुहू, चुहू, चुक्कू, चुहू, इति ध्वनिम् कुर्वन्, मांसम्, खादितुम्, तुष्टिम्, च, कर्त्तुम्, इच्छसि। **।।22।।**

हिन्दी अनुवाद -यदि तुम रंग-विरंगे सूतो से विनिर्मित, लम्बी किनारी वाले दुपट्टे पुरस्कार में चाहते हो, चुहू,चुहू, चुक्कु, चुहू,आवाज के साथ मांस खाना चाहते हो **।।22।।**

विट -:तत :किम् ?

विट -तो मुझे क्या करना होगा ?

शकार -:मम प्रियं कुरू।

शकार -मेरे कथनानुसार करो।

विट -:बाढं करोमि, वर्जयित्वा त्वकार्यम्।

विट -अवश्य करूँगा,पर दुष्कर्म को छोड़कर।

शकार -:भाव! अकार्यस्य गन्धोऽपि नास्ति, राक्षसी क्वापि नास्ति।

शकार -महाशय, अपकर्म की तो इसमें गन्ध भी नहीं है। कोई राक्षसी थोड़े ही है।

विट -:उच्यतां तहिं।

विट -तब कहो।

शकार -:मारय वसन्तसेनाम्।

शकार -वसन्तसेना को मार दो।

विट -:कणौ पिधाय

बालां स्त्रियञ्च नगरस्य विभूषणञ्च वैश्यामवेश-सदृश-प्रणयोपचाराम्।
एनामनागसमहं यदि मारयामि केनोडुपेन परलोकनदीं तरिष्ये ।।23।।

अन्वय -:यदि, अहम्, नगरस्य, विभूषणम्, अवेशसदृशप्रणयोपचाराम्, वैश्याम्, बालाम्,अनागसम्, एनाम् स्त्रियम्, घातयामि, केन, उडुपेन, परलोकनदीं तरिष्ये **।।23।।**

विट-कान मूँदकर

हिन्दी - यदि मैं इस उज्जयिनी के अलंकार, कुलललना की तरह व्यवहार करने वाली निरपराध इस युवा वेश्या की मैं हत्या कर दूँ तो फिर परलोक की वैतरणी को किस नाव से पार करूँगा **।।23।।**

शकार -:अहं ते उडुपं दास्यामि। अन्यच्च विविक्ते उद्याने इह मारयन्तं कस्त्वां प्रेक्षिष्यते ?

शकार -वैतरणी पार करने के लिए मैं तुम्हें नौका दूँगा। दूसरी वात यह है कि इस निर्जन फुलवाड़ी में तुम्हें देखेगा ही कौन ?

विट -: पश्यन्ति मां दश दिशो,वनदेवताश्च ,

चन्द्रश्च दीप्तिकिरणश्च दिवाकरोऽयम् ।
धर्मानिलौच गगनश्च तथान्तरात्मा
भूमिस्तथा सुकृति –दुष्कृति-साक्षिभूता: ।।24।।

अन्वय -:सुकृतिदुष्कृतिसाक्षिभूता:, दशदिश:, वनदेवता:, च, चन्द्र:, च, दीप्त किरण:, अयम् दिवाकर:, च, धर्मानिलौ, च, गगनम्, च, तथा,अन्तरात्मा, तथा भूमि:, माम्, पश्यन्ति ।।24।।

विट - पाप और पुन्य की साक्षी ये दिशाएँ देखेंगी, वनदेवता, चन्द्रमा, तीक्षणकिरणवाले ये दिवाकर, धर्म, वायु, आकाश और भूमि देखेगी और सबसे अधिक देखेगी मेरी अन्तरात्मा **।।24।।**

शकार -: तेन हि पटान्तापवारितां कृत्वा मारय ।

शकार -तो फिर, कपड़े, से ढककर इसे मारों ।

विट -:मूर्ख! : अपध्वस्तोऽसि

विट -मूर्ख , तुम पतित हो गये हो ।

शकार -: अधर्मभीरूरेष वृद्धकोल :। भवतु स्थावरकं चेटमनुनयामि । पुत्रक! स्थावरक ! चेट ! सुवर्णकटकानि दास्यामि।

शकार -यह बूढा सुअर धर्म से डरता है। अच्छा तो इस काम के लिए मैं चेट से अनुनय करता हूँ । बेटे! स्थावरक ! चेट ! देख मैं तुम्हें सोने का कंगन दूँगा ।

चेट -:अहमपि परिधास्यामि।

चेट -मैं उसे पहन लूँगा ।

शकार -:सौवर्ण ते पीठकं कारयिष्यामि ।

शकार -बैठने के लिए मैं तुम्हें सोने का आसन बनवा दूँगा ।

चेट -:अहमपि उपवेक्ष्यामि।

चेट -मैं आराम से उस पर बैठूँगा ।

शकार -:सर्वचेटानां महत्तरकं कारयिष्यामि ।

शकार -मै बचा खुचा सारा भोजन तुम्हें ही दूँगा ।

चेट -:भट्टक ! भविष्यामि ।

चेट -मैं खूब खाऊँगा ।

शकार -:तन्मन्यस्व मम वचनम् ।

शकार -तो फिर, मेरी बात मान लो ।

चेट -:भट्ट! सर्व करोमि वर्जयत्वा अकार्यम् ।

चेट -मालिक, मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ , केवल कोई दुष्कर्म नहीं करूँगा ।

शकार -:अकार्यस्य गन्धोऽपि नास्ति ।

शकार -इसमें गलत काम की गन्ध भी नहीं है ।

चेट :भणतु भट्टक :।

चेट -तो फिर बतलाओ मालिक।

शकार -:एनां वसन्तसेनां मारय।

शकार -इस वसन्तसेना को समाप्त कर दो।

चेट -:प्रसीदतु भट्टक :इयं मया अनार्येण आर्या प्रवहणपरिवर्त्तनेनानीता।

चेट -इसके लिए मुझे माफ कर दो मालिक। मैं ही पापी हूँ, गाड़ी बदल जाने के कारण मैंने ही आर्या वसन्तसेना को इस स्थिति में ला दिया हैं।

शकार -:अरे चेट! तवापि न प्रभवामि ?

शकार -अरे सेवक, क्या तुम पर भी मेरा अधिकार नहीं है ?

चेट -:प्रभवति भट्टक:शरीरस्य, नचारित्रस्य। तत् प्रसीदतु भट्टक :बिभेमि खलु अहम्।,

चेट-है क्यों नहीं देह पर ही, चरित्र पर नहीं। आप रंज न हो, निश्चय ही में डरता हूँ।

शकार -:त्वं मम चेटी भूत्वा कस्माद् विभेषि ?

शकार -रे तुम मेरा नौकर होकर डरते किससे हो ?

चेट -:भट्टक! : परलोकात्

चेट -मालिक, मैं परलोक से डरता हूँ।

शकार -:क :स परलोक :?

शकार -यह परलोक क्या है ?

चेट -:भट्टक! सुकृतदुष्क;तस्य परिणाम :?

चेट -मालिक, पाप और पुण्य का फल ही तो परलोक है।

शकार -:कीदृश :सुकृतस्य परिणाम :।

शकार-पुण्य का फल क्या होता है ?

चेट -:यादृशो भट्टक :बहुसुवर्णमण्डित:।

चेट -:आप की तरह सम्पन्न रहना सुकृत का परिणाम है ।

शकार -:दुष्कृतस्य कीदृश :?

शकार -:और कुकर्म का फल कैसा होता है।

चेट -:यादृशोऽहं परपिण्डभक्षको भूत :। तदकार्य न करिष्यामि।

चेट -मेरे जैसा आदमी जो दूसरों पर पलता हो, इसलिए अब और अधिक कुकर्म नहीं करूँगा

शकार -:अरे! न मारयिष्यसि ?बहुविधं ताडयति।

शकार -अरे, तो तुम इसे नहीं मारोगे ? चेट को अनेक प्रकार से पीटता है।

चेट -:ताडयतु भट्टक -:मारयतु भट्टक:, अकार्य न करिष्यामि।

चेट -चाहे आप मुझे पीटिए, जान से मार दीजिए, मैं ऐसा कुकर्म नहीं करूँगा।

अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए -

1. बौद्ध सन्यासी का स्वरूप कैसा है-

क -मंगल ख -उदास ग -अमंगल घ -विशेष

2. नापित का अर्थ है -

क -नपा हुआ ख -न पाया ग -नाई घ -विशेष

3. स्तुनु का अर्थ है -

क -प्रशंसा ख -प्रशस्त ग -स्तुति घ -कोई नहीं

4. शुनक का तात्पर्य है -

क -शेर ख- कुत्ता ग -मुर्गा घ -सियार

5. भगवान बुद्ध को कौन नमस्कार कहता है -

क -शकार ख -विट ग -चेट घ -भिक्षु

6. व्यभिचारिणी का बेटा किसे कहा गया है -

क -शकार ख -विदूषक ग -विट घ -कोई नहीं

7. कापुरूष का अर्थ है -

क -उद्योगी ख -कायर ग -साहसी घ -आलसी

8. विवर्द्धते शब्द से तात्पर्य है -

क -विशेष ख -वृद्धि को प्राप्त ग -विशेषता घ-कोई नहीं

9. निलीन :शब्द का अर्थ है -

क -गिरा हुआ ख -पतन ग -सुखा घ -गीला

10. अवनत शिरस :से तात्पर्य है -

क -नतमस्तक ख -गिरागया ग -सिर के बल घ -कोई नही

11. "प्रयाम" का अर्थ है -

क -चले जाना ख -जाना ग -जाया है घ-जायेगे

12. शरत् चन्द्र प्रतीकाशं शब्द का अर्थ है -

क -चन्द्रमा का प्रतीकाश ख-शरद काल के चन्द्रमा के समान

ग-शरद की पूर्णिमा घ -शरदचन्द्र का प्रतीक विशेष

2. 4 सारांश -

अष्टम् अंक के अध्ययन के लिए वर्णित इस इकाई के अध्ययन के बाद आपने जाना कि बौद्ध सन्यासी का अपमान नेपथ्य में करने के बाद किसने उसे अधिक अपमान दिया । सन्यासी ने अपासक कहकर शकार को प्रशांसित किया है। विट, भिसु और शकार के बीच सम्वादों में एक दूसरे को अपमानित और कलंकित करते हुए भिक्षु के चले जाने पर शकार और विट के सम्वादो में विभिन्न प्रकार के वातावरण सम्बन्धी वार्तालाप हो रहे हैं । पुन :शकार के द्वारा विभिन्न औषधियों के सेवन के पश्चात भी कण्ठ के मधुर न बनने रूपी पश्चाताप का कथन सराहनीय है जो प्राकृतिकता की जानकारी का निदर्शन भी है ।

गाड़ी पर सवार चेट और वसन्तसेना का प्रवेश होता है तथा चेट, शकार आदि अन्य पात्रों के सम्भावना से होकर दानवी कहता है। अपने लिए वह कल्पना करता है कि मुझे जाते हुए देखकर लोग यही कहेंगे कि यह राजा का साला धनपति आ रहा है। पुन :बीसवें श्लोक में वह वसन्तसेना को गाड़ी से घसीटकर उतारने की बात करता है। वसन्तसेना गाड़ी से उतरकर एक ओर खड़ी हो जाती है। शकार उसे मारने के लिए कहताहै। पुन :विभिन्न सम्वादो के मध्य चौबीसवें श्लोक तक विट के कथन में पाप और पुण्य ,देवी –देवता पृथ्वी आदि को साक्षी बताकर सर्वाधिक द्रष्टा के रूप में अपनी अन्तरात्मा को स्वीकार किया गया है।

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप यह बतायेंगे कि आठवें अंक में शकार और विट तथा वसन्तसेना के मध्य सम्वादों की क्या मर्यादा है। शिष्टाचार का अतिक्रमण कहाँ पर किया गया है।

2. 5 शब्दावली -

1. इन्द्रिय चौरा - :यहाँ पर इन्द्रियों को शक्तिशालिनी मानकर धर्म आदि क्रियाओं का अपहरण करने के कारण इन्द्रिय चौरा कहा गया है।

2. काणेलीमात- :अविवाहिता स्त्री को काणेली कहा जाता है और वह जिसकी माता हो।

3. किण - :प्रतीक अथवा चिह्न

4. केशविरहात् – बालों का अभाव या बालों का सिर पर न रहना।

5. श्रमणक – बौद्ध सन्यासी को श्रमणक कहा गया है।

6. प्रतिमुक्त शष्यफल – घास चबाना छोड़कर, या घास खाना छोड़कर

7. सदसि -सभा में

8. राजश्याल – राजा का साला

9**. अशौण्डीर्यस्वभावेन** -उदारता से हीन स्वभाव के द्वारा

10. सुकृति -पुण्य कर्म, सुन्दर कर्म

11. दुष्कृति – दुराचार, अनाचार, इत्यादि।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ग 2.ग 3. क 4 .ख 5 .**घ** 6.क 7.क 8.ख 9.क

10.क 11.क 12.ख

2. 7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

2. 8 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. आठवें अंक के श्लोक सं0 4, 5 एवं 6 का सन्दर्भ सहित अनुवाद कीजिए।
2. इस इकाई में वर्णित तथ्यों के आधार पर वसन्तसेना के कथनों अनुवाद कीजिए।
3. पठित अंश के आधार पर शकार का चरित्र चित्रण दीजिए।
4. प्रस्तुत इकाई का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

इकाई-3 श्लोक संख्या 25 से 47 तक मूलपाठ, अर्थ एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 श्लोक संख्या 25 से 47 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
3.4 सारांश
3.5 पारिभाषिक शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 संदर्भग्रन्थ
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3 . 1 प्रस्तावना -

मृच्छकटिकम प्रकरण के अध्ययन से सम्बन्धित यह तृतीय इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप आठवें अंक के 25वें श्लोक से लेकर अन्तिम श्लोक एवं कथनों का अध्ययन करेंगे। इसके पूर्व की इकाई में शकार और विट के कथनों के क्रम में आगे के वर्णनों का अध्ययन इस इकाई के अन्तर्गत प्रस्तुत है।

शकार ने विट को बूढ़ा सूअर कहा और चेट को उसने सोने का कंगन पहनने के लिए दिया। पुन :चेट और शकार के बीच विभिन्न वार्तालाप हुए जिसमें वसन्तसेना को मारने के लिए भी कहा गया। परलोक से भी डरने का कथन किया गया, पाप, पुण्य आदि के फलों से सम्बन्धित बातें हुई। वसन्तसेना शरणागत है। शकार मूर्छित हो जाता है। पुन :होश में आने पर वसन्तसेना की हत्या के आशंका और अन्य वार्तालाप होते हैं। वसन्तसेना माता का स्मरण करती है चारूदत्त को अन्तिम प्रणाम कहती है। आगे चलकर भिक्षु के कथन के साथ अंक समाप्त होता है।

स्वर्ग प्राप्ति की बात कहते हुए भिक्षु के कथन से अंत हो रहे आठवें अंक का अध्ययन करने के पश्चात् आप इसकी विशेषताओं को बता सकेंगे।

3. 2 उद्देश्य–

आठवें अंक के अध्ययन से सम्बन्धित इस इकाई का सम्यक् अध्ययन करने के बाद आप -

- ❖ पच्चीसवें श्लोक से लेकर सैंतालीसवें श्लोक के वर्णनों को संक्षेप में बता सकेंगे।
- ❖ आठवें अंक में किसका आचरण ठीक है मूल्यांकन कर सकेगे।
- ❖ वसन्तसेना का आचार कैसा है, बता सकेंगे।
- ❖ शकार और चेट का क्या सम्बन्ध है, समझा सकेंगे।
- ❖ विट और चेट की भूमिका का निर्धारण कर सकेंगे।
- ❖ बौद्ध भिक्षु की शिक्षाओं का क्या महत्व है, बता सकेंगे।

3.3 श्लोक संख्या 25 से 47 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

येनास्मि गर्भदासो विनिर्मितो भागधेयदोषै :।

अधिकञ्च न क्रीणिष्यामि तेनाकार्य परिहरामि।। ।। 25

अन्वय -:येन, भागधेयदोषै :, गर्भदास:, विनिर्मित:, अस्मि। तेन अधिकम्, न, क्रीणिष्यामि, अकार्यम्, च ,परिहरामि ।।25।।

हिन्दी अनुवाद -पूर्वजन्म में किए गये पापों के कारण ही मेरा जन्म दास कुल में हुआ है। अब वसन्तसेना को मार कर और अधिक पाप बटोरना नहीं चाहूँगा। दुष्कर्म नहीं करूँगा **।।25।।**

वसन्तसेना -भाव! शरणागतास्मि।

वसन्तसेना -भाव, मैं शरणागत हूँ।

विट -:काणेलीमात :मर्षय मर्षय। साधु स्थावरक! साधु।

अप्येष नाम परिभूतदशो दरिद्र :
प्रेष्य :परत्र फलमिच्छति नास्य भर्ता ।
तस्मादमी कथमिवाद्य न यान्ति नाशं
ये वर्द्धयन्त्यसददृशं सदृशं सदृशं त्यजन्ति ।।26।।

अपि च -

रन्ध्रानुसारी विषय :कृतान्तो यदस्य दास्यं तव चेश्वरत्वम्।
श्रियं त्वदीयां यदयं न भुड्क्ते यदेतदाज्ञां न भवान् करोति ।।27।।

अन्वय-:परभूतदशः, दरिद्रः, प्रेष्यः, अपि, एषः, परत्र, फलं, नाम, इच्छति, अस्य, भर्ता, न, तस्मात् , ये, असदृशम्, वर्धयन्ति , सदृशम्, त्यजन्ति । अमी, अद्य, कथमिव, नाश, न, यान्ति **।।26।।**

अन्वय -:कृतान्तः, रन्ध्रानुसारी, विषम्, यत् , अस्य , दास्यम्, तव, च, ईश्वरत्वम । यत्, अयम्, त्वदीयाम्, श्रियम्,न, भुड.क्ते, यत्, भवान् , एतदाज्ञाम्, न, करोति **।।27।।**

विट -पुंश्चलीपुत्र , इसे माफ कर दो । धन्य रे चेट, धन्य । यह दास दरिद्र है, दयनीय है, फिर भी परलोक के फल की इच्छा करता है, किन्तु इसके मालिक को इसकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है । तो फिर जो उचित काम छोड़कर पापों का पहाड़ बनाते रहते हैं, उनका इसी क्षण विनाश क्यों नहीं हो जाता **।।26।।**

और भी -भाग्य भी विपरीत ही करता है, वह छिद्रान्वेषी है, अन्यथा यह धार्मिक चेट और नौकर और पापी शकार मालिक कैसे बन गया । और यह चेट शकार की सम्पत्ति का उपभोग नहीं कर पाता और शकार जिसे चेट का दास होना चाहिए था, उसका हुक्म नहीं मानता **।।27।।**

शकार:- अधर्मभीरूको वृद्धश्रृगालः, परलोकभीरूरेष गर्भदास :। अहं राष्ट्रियश्याल :कस्माद्विभेमि वर-पुरूष– मनुष्य:? अरे गर्भदास ! चेट ! गच्छ त्वम्, अपवारके प्रविश्य विश्रान्त एकान्ते तिष्ठ ।

हिन्दी अनुवाद -शकार -मन ही मन यह बूढा सियार विट , पाप से डरता है । और चेट परलोक से भय खाता है किन्तु मैं तो प्रधान पुरूष हूँ , राजा का साला हूँ , मुझे किसका डर है ?प्रकट अरे ओ नीच सेवक जा यहॉ से भाग जा और किसी एकान्त कुंज में विश्राम कर ।

चेट -:यद्भ्ट्टक आज्ञापयति । आर्ये! एतावान्मे विभवः।

चेट -मालिक जैसा कहें । वसन्तसेना के पास जाकर आर्ये, तुम्हारी रक्षा के लिए मुझमें इतनी ही ताकत है । निकल जाता है ।

शकार -:तिष्ठ वसन्तसेने! तिष्ट, मारयिष्यामि ।

शकार -फेटा कसते हुए रूको, वसन्तसेने रूको , मैं ही तुम्हें मारूँगा ।

विट -:आ! : ममाग्रतो व्यापादयिष्यसि ? इति गले गृह्णाति ।

विट -अरे, तो क्या मेरे सामने ही मारोगे ? गर्दन पकड़ लेता है ।

शकार -:भावो भट्टकं मारयति ।

शकार-धरती पर गिर जाता है । विद्वन्, मालिक को मारते हो ,अचेत हो जाता है,फिर होश मेंआकर

सर्वकालं मयापुष्टो मांसेन च घृतेन च

अद्य कार्ये समुत्पन्ने जातो मे वैरिक: कथम् ।।28।।

अन्वय-:सर्वकालम् , मया, मांसेन, च, घृतेन, च, पुष्ट:, अद्य, कार्ये, समुत्पन्ने, मे, वैरी, कथम् जात:? ।।28।।

हिन्दी अनुवाद -सदा मांस और घी खिलाकर मैंने तुम्हारा पालन किया है किन्तु , आज जब तुमसे काम पड़ा तो तुम हमारे शत्रु कैसे बन गये ?

भवतु, लब्धो मया उपाय: । दत्ता वृद्धश्रृगालेन शिरश्चालनसञ्ज्ञा, तदेवं प्रेष्य वसन्तसेनां मारयिष्यामि। एवं तावत्। भाव ! यत् त्वं यया भणित :, तत् कथमहमेवं बृहत्तरै :गल्लकप्रमाणै : कुलैर्जातोऽकार्य करोमि ? एवमेतदङ्गीकारयितं मया भणितम्।

कुछ सोचकर अच्छा तो अब मुझे उपाय सूझ गया। इस बूढे सियार ने शिर हिलाकर इशारा कर दिया है, तो पहले इसी को यहॉ से हटाकर तब वसन्तसेना को मारूँगा। तो ऐसा करूँ। कट अरे ओ पण्डित, मैंने तुमसे जो कुछ कहा उस पर तुमने सोचा । जरा विचारो तो, ऊँच कुत्ते की तरह कुल में जन्म लेकर भला मैं ऐसा कुकर्म कैसे करूँगा ? यह सब तो मैंने केवल उसे स्वीकार कराने के लिए कहा था।

विट -: **किं कुलेनोपदिष्टेन शीलमेवात्र कारणम्।**

भवन्ति सुतरां सफीता :सुक्षेत्रे कण्टकिद्रुमा :।।29।।

अन्वय -:कुलेन, उपदिष्टेन, किम् ? अत्र, शीलम्, एव, कारणम्, सुक्षेत्रे , कष्टकिद्रुमा:, सुतराम्, स्फीता:, भवन्ति **।।29।।**

हिन्दी अनुवाद –विट -अच्छाई के लिए , अच्छे खानदान में जन्म लेना कोई जरूरी नहीं है। इसमें तो आदमी का अपना स्वभाव ही कारण है। क्योंकि , अच्छी जमीन में भी कंटीले पेड़ जन्म लेकर और अधिक फैलते हैं **।।29।।**

शकार -:भाव! एषा तवाग्रतो लज्जते, न मामंगीकरोति तद् गच्छ, स्थावरकचेटो मया पीड़ितो गतोपि। एष पलाय्य गच्छति, तत् तं गृहीत्वा आगच्छतु भाव :।

शकार -हे पण्डित, वसन्तसेना तुम्हारे सामने लजाती है, इसी लिए वह मुझे स्वीकार नहीं करती है। अत :तुम यहॉ से हट जाओ। स्थावरक को भी मैंने पीट दियाहै, वह भी रूककर भागा जा रहा है, कृपया उसे पकड़ कर ले आओ।

विट -:स्वगतम्

अस्मत्समक्षं हि वसन्तसेना शौण्डीर्यभावान्न भजेत मूर्खम्।

तस्मात् करोम्येष विविक्तमस्या विविक्तविस्रम्भरसो हि काम :।।30।।

प्रकाशम् एवं भवतु, गच्छामि।

अन्वय-: वसन्तसेना, शौण्डीर्यभावात्, अस्मत् समक्षं, मूर्खम्, न भजेत्, तस्यात् एष:, अस्या:, विवक्तम्, करोमि,हि काम:, विविक्तविश्रम्भरस :भवति **।।30 ।।**

विट -मन ही मन

अपने गर्वीले स्वभाव के कारण ही वसन्तसेना शायद मेरे सामने इस मूर्ख को कबूल नहीं करे।

अत :मैं यहॉ से हटकर इन्हें इसका अवसर दे देता हूँ। क्योंकि एकान्त में ही परस्पर काम भावना बढती है **।।30।।** सुनकर अच्छा तो अब चलूँ।

वसन्तसेना - पटान्ते गृहीत्वा ननु भणामि शरणागतास्मि।

वसन्तसेना -कपड़े से पकड़ कर मैं कहती हूँ न, मैं आप की शरण में हूँ।

विट -: वसन्तसेने! न भेतव्यं न भेतव्यम्। काणेलीमात! : वसन्तसेना तब हस्ते न्यास :।

विट- वसन्तसेने डरने की कोई बात नहीं है। मत डरो। हे पुंश्चलीपुत्र यह वसन्सेना, मैं तुम्हारे हाथों में धरोहर छोड़ रही है।

शकार -:एवं। मम हस्ते एषा न्यासेन तिरष्ठतु।

शकार -ठीक है, मेरे पास यह धरोहर ही है।

विट -:सत्यम् ?

विट -सच बोलते हो न ?

शकार -:सत्यम्

शकार -हॉ सच बोल रहा हूँ।

विट : किंचिद् गत्वा अथवा मयि गते नृशंसो हन्यादेनाम्। तदपवारितशरीर :पश्यामि तावदस्य चिकीर्षितम्। इत्येकान्ते स्थित :।

विट -कुछ दूर जाकर या अगर मैं चला गया तो कहीं यह पापी , वसन्तसेना की हत्या न कर दे, तो क्या कहीं छिपकर इस पापी का चरित्र देखा जाय। शून्य स्थान में छिप जाता है।

शकार -:भवतु मारयिष्यामि। अथवा कपट-कापटिक एष ब्राह्मणो वृद्धश्रृगाल :कदापि अपवारितशरीरो गत्वा श्रृगालो भूत्वा कपटं करोति । तदेतस्य वञ्चनानिमित्तम् एवं तावत् करिष्यामि। बाले बाले ! वसन्तसेने !एहि।

शकार - अच्छा, मारूँगा। पर, कहीं यह रंगा सियार छिपकर देखता हो और मौका पाते ही झपट कर आक्रमण कर दे। अत :इसे धोखा देने के लिए पहले ऐसा करूँ) फूल चुनकर अपने को सजाता है। हे बाले , वसन्तसेना आओ ।

विट -:अये! कामी संवृत्त:। हन्त! निर्वृतोऽस्मि। गच्छामि। इति निष्क्रान्त :।

सुवर्णकं ददामि , प्रियं वदामि ,पतामि शीर्षेण सवेष्टनेन

तथापि मां नेच्छसि शुद्धदन्ति, किं सेवकं कष्ट मया मनुष्या: ।।31।।

अन्वय -सुवर्णकम्, ददामि, प्रियम्, वदामि,सवेष्टनेन, शीर्षेण, पतामि, तथापि,हे शुद्धदन्ति, माम्, सेवकम्, किम्, न , इच्छामि, ? मनुष्या:,कष्टमया :भवन्ति ।।31।।

विट -अरे यह तो कामातुर है। मैं निश्चिन्त हो गया। अब जाता हूँ। चला जाता है।

शकार -सोना देता हूँ। मीठी– मीठी बातें करता हूँ। पैरों पर माथा टेकता हूँ।

अरी सुदन्ती , फिर भी मुझ सेवक को तुम नहीं चाहती हो। सच ही मनुष्य अपने अनुगतों से बड़ा क्रूर व्यवहार करता है **।।31।।**

वसन्तसेना -कोऽत्र सन्देह :? अवनतमुखी खलचरितं इत्यादि श्लोकं पठति।

हिन्दी अनुवाद -वसन्तसेना - इसमें क्या सन्देह ?खलचरित' आदि दो श्लोकों को सर झुकाकर ही गुनगुनाती है।

खलचरित ! निकृष्ट ! जातदोष :कथमिह मां परिलोभसे धनेन।
सुचरितचरितं विशुद्धदेहं न हि कमलं मधुपा :परित्यजन्ति ।।32।।
यत्नेन सेवितव्य :पुरूष :कुलशीलवान् दरिद्रोऽपि।
शोभा हि पणस्त्रीणां सदृशजनसमाश्रय :काम :।।33।।

अन्वय -हे खलचरित, निकट, जातदोष:, इद, माम्,धनेन, कथम्, परिलोभसे? मधुपा : सुचरितचरितम्, विशुद्धदेहम्, कमलम्, हि, न, परित्यजन्ति ।।32।।

अन्वय -कुलशीलवान्, पुरूष:, दरिद्र:, अपि ,यत्नेन, सेवितव्य:, हि सदृशजनसमाश्रय:, काम:, पणस्त्रीणाम् शोभा अस्ति ।।33।।

हिन्दी - रे नीच, तुम अपने व्यवहार से क्रूर हो , मूर्खता प्रभृति तुममें दोष हैं फिर भी अपनी सम्पदा से तुम मुझे लुभाना चाहतेहो। पर तुम यह नहीं जानते कि सुन्दर शील एवं आकर्षक आकृति वाले कमल को छोड़कर भौंरी और कहीं नहीं भटकती **।।32।।**

यदि शीलवान् एवं कुलीन व्यक्ति निर्धन भी है तो भी सेवनीय है। क्योंकि, समशील एवं अनुरूपव्यक्ति के साथ समागम ही हम वारवनिताओं की शोभा है **।।33।।**

अपि च, सहकारपादपं सेवित्वा न पलाशपादपमङ्गीकरिष्यामि।

और भी रसाल का रस चख लेने के बाद पुन: पलाश को कैसे स्वीकार करू।

शकार -:दास्या :पुत्रि! दरिद्र-चारूदत्तक :सहकारपादप :कृत:,अहं पुन :पलाशो भणित:, किंशुकोऽपि न कृत:। एवं त्वं मे गार्लि ददती अद्यापितमेव चारूदत्तकं स्मरसि ?

शकार – ओ नौकरानी की बच्ची तुमने तो उस दरिद्र चारूदत्त को आम कहा किन्तु मुझे टेसूका फूल भी न कहकर पलरा का पेड़ कह दिया। मुझे तुमने गाली दी है , उस गरीब चारूदत्त को तुम आज भी याद करती हो।

वसन्तसेना -हृदयगत एव किमिति न स्मर्यते ?

वसन्तसेना- जो हृदय में है उसकी याद कैसे न आये।

शकार -अद्यापि ते हृदयगतं त्वाञ्च सममेव मोटयामि। तद् दरिद्र-सार्थवाहकमनुष्कामुकिनि! तिष्ठ, तिष्ठ।

शकार- आज ही तुम्हारे हृदय में बैठे उस चारूदत्त को और तुमको चूर करके रख देता हूँ। उस भिक्षुक को चाहने वाली ठहर।

वसन्तसेना -भण भण, पुनरपि भण। इलाघनीयानि एतानि अक्षराणि।

वसन्तसेना- बोलो , फिर बोलो , उन पवित्र अक्षरों को फिर से बोलो।

शकार -:परित्रायतां दास्या :पुत्रो दरिद्र-चारूदत्तस्त्वाम्।

शकार -:देखता हूँ कि वह दरिद्र तुम्हें कैसे बचाता है।

वसन्तसेना -परित्रायते, यदि मां प्रेक्षते।

वसन्तसेना- यदि मुझे देख ले तो बचा ही लेगा।

शकार -:

किं स शक्रो बालिपुत्रो महेन्द्र: ,रम्भापुत्र: कालनेमि: सुबन्धु:
रूद्रो राजा द्रोणपुत्रो जटायुश्चाणक्यो वा धुन्धुमारस्त्रिशंकु: ?।।34।।
अथवा एतेऽपि त्वां न रक्षन्ति।
चाणक्येन यथा सीता मारिता भारते युगे
एवं त्वां मोटयिष्यामि जटायुरिव द्रौपदीम् ।।35।।

अन्वय- स: किं शक्र: बालिपुत्र: महेन्द्र: , रम्भापुत्र: कालनेमि: सुबन्धु: ,राजा रूद्र द्रोणपुत्र: जटायु:चाणक्य: धुन्धुमार: वा त्रिशंकु**:। 34।**

अन्वय -यथा, भारते, युगे, चाणक्येन, सीता, मारिता, जटायु :, द्रौपदीम्, इव, एवम्, त्वाम्, मोटयिष्यामि ।।35।।

क्या वह चारूदत्त स्वयं इन्द्र हे या बालि का बेटा महेन्द्र है ,वह रम्भा नाम की अप्सरा का पुत्र कालनेमि है या सुबन्धु। वह राजा रूद्र है या द्रोण का पुत्र जटायु , चाणक्य है कि धुन्धुमार या फिर वह त्रिशंकु है।**। 34।**

अथवा, ये भी तुम्हें बचा नहीं पायेंगे।

महाभारत युद्ध में जैसे चाणक्य ने सीता को मारा था, जैसे जटायु ने द्रौपदी को मारा था , उसी प्रकार मैं भी तुम्हारी हत्या कर दूँगा **।।35।।**

वसन्तसेना -हा मात! : कस्मिन्नसि ? हा आर्य्यचारूदत्त ! एष जन :असम्पूर्णमनोरथ एव विपद्यते। तदूर्ध्वमाक्रन्दयिष्यामि। अथवा वसन्तसेना ऊर्ध्वमाक्रन्दतीति लज्जनीयं खल्वेतत्। नम आर्यचारूदत्ताय।

वसन्तसेना -हाय, माँ , तुम कहाँ हो ? हा प्रिय चारूदत्त, मनोरथ पूरा होने से पहले ही मर रही हूँ। जी करता है जोर जोर से चिल्ला कर रोऊँ। किन्तु नहीं –'वसन्तसेना चिल्ला रही है।'
यह कितनी लाज की बात है। हे आर्य चारूदत्त , तुम जहाँ हो, वहीं मेरा अन्तिम प्रणाम।

शकार -:अद्यापि गर्भवासी तस्यैव पापस्य नाम गृह्णाति ?इति कण्ठे पीडयन् स्मर गर्भदासि! स्मर।

शकार -यह नीच अभी भी उसी पापी को पुकार रही है। गला दबाता है। ले अधम अब उसे खूब याद कर।

वन्तसेना - नम: आर्यचारूदत्ताय

वसन्तसेना -आर्य चारूदत्त को प्रणाम।

शकार -:म्रियस्व गर्भदासि! म्रियस्व।

वसन्तसेना मूर्च्छिता निश्चेष्टा पतति।

शकार -मर साली मर। अभिनयपूर्वक गला दबाकर मारता है। वसन्तसेना मूर्च्छित होकर गिरती है और निश्चेष्ट हो जाती है।

शकार -:सहर्षम्

एतां दोषकरण्डिकामविनयस्यावासभूतां खलां
रक्तां तस्य किलागतस्य रमणे कालागतामागताम् ।
किमेषु समुदाहरामि निजकं बाह्वो :शूरत्वं
नि:श्वासेपि म्रियते अम्बा सुमृता सीता यथा भारते ।।36।।
इच्छन्तं मां नेच्छतीति गणिका रोषेण मया भारिता
शून्येपुष्पकरण्डके इति सहसा पाशेनोत्त्रासिता ।
स वा वञ्चितो भ्राता मम पिता मातेव सा द्रौपदी
योऽसौ पश्यति नेदृशं व्यवसितं पुत्रस्य शूरत्वम् ।।37।।

अन्वय -दोषकरण्डिकाम् , अविनयस्य, आवासभूताम्, खलाम्, रक्ताम्, आगतस्य, तस्य, रमणे, आगताम्, किल, कालागताम्, एताम्, एष :, निजकम्, बाह्वो:, शूरत्वम्, किम्, उदाहरामि, नि:श्वासे , अपि , अम्बा, म्रियते, यथा , भारते, सीता, सुमृता ।।36।।

अन्वय -इच्छन्तम्, माम्, गणिका, न, इच्छति, इति, रोषेण, मया, शून्ये, पुष्पकरण्डके, सहसा, पाशेन, उत्त्रासिता, मारिता, च, स:, मम, भ्राता, वा, पिता, वन्चित :, द्रौपदी, इव, सा माता, च, वन्चिता, य :असौ , पुत्रस्य, ईदृशम्, शूरत्वम्, व्यवसितम्, च, न, पश्यति।।37।।

हिन्दी अनुवाद) -पीटना चाहता है ।

शकार -प्रसन्न होकर

पाप की पिटारी , दुर्व्यवहार की निवास भूमि यह वसन्तसेना चारूदत्त को प्यार करती है; उसी के साथ रमण करने हेतु यह पापिन इस जीर्णोद्यान में क्या आई ? मौत इसे घसीटकर ले आई है । इसे मारकर मैं अपनी बाहुओं की क्या बडाई करूँ , जबकि जोर से मेरी श्वास लेने से ही यह उसी प्रकार माता मर गयी जैसे महा-भारत में सीता मारी गई थी **।।36।।**

मैं इसे दिल से चाहता हूँ पर यह वेश्या मुझे नहीं चाहती है, इसी क्रोध से मैंने इसे इस एकान्त में गला घोटकर मार डाला । वह मेरे भाई और पिता अथवा द्रौपदी की तरह यह मेरी मॉं अपने बेटे के वीरता पूर्ण इस काम को ऑंख भर देखने के लिए जिन्दा नहीं रही, यही खेद है **।।37।।**

भवतु , साम्प्रतं वृद्धश्रृगाल आगमिष्यतीति तदपसृत्य तिष्ठामि ।

विट -:प्रविश्य चेटेन सह (अनुनीतो मया स्थावरकश्चेट:। तद् यावत् काणेलीमातरं पश्यामि । परिक्रम्यावलोक्य च अये! मार्ग एव पादपो निपतित:। अनेन च पतिता स्त्री व्यापादिता । भो : पाप! किमिदमकार्य मनुष्ठितं त्वया तवापि पापिन :पतनात् स्त्रीवधदशनेनातीव पातिता वयम् । अनिमित्तमेतद् यत्सत्यं वसन्तसेनां प्रति शंकितं मे मन :। सर्वथादेवता :स्वस्ति करिष्यन्ति । शकारमुपसृत्य काणेलीमात! : एवं मया अनुनीत :स्थावरकश्चेट:।

अच्छा तो वह बूढा सियार विट अब आने ही वाला है तो थोड़ा दूर हटकर प्रतीक्षा करूँ । कुछ दूर खिसक जाता है ।

विट -चेट को लिये विट का प्रवेश लो, मैं चेट को मनाकर ला दिया, तो अब उस अधम को

देखता हूँ थोड़ा घूमकर और देखकर (यह तो रास्ते में ही वृक्ष गिरा है। इसने गिर कर स्त्री को मार डाला। रे पापी, तुमने यह कुकर्म क्यों किया? तुम्हारे गिरने और स्त्रीवध देखने के कारण हम भी पतित हो गये। अकारण ही वसन्तसेना के लिए मेरा मन सन्दिग्ध हो रहा है। देवता उसकी रक्षा करें। शकार के पास जाकर लो, मैंने तुम्हारे सेवक को मनाकर ला दिया।

शकार -:भाव! स्वागतं ते। पुत्रक ! स्थावरक ! चेट ! तवापि स्वागतम्।

शकार -मैं तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ । बेटे, स्थावरक, चेट, तुम्हारा भी स्वागत है।

चेट -:अथ किम्।

चेट -हाँ

विट -:मदीयं न्यासमुपनय।

विट -अब मेरी धरोहर मुझे लौटा दो

शकार -:कीदृश :?

शकार -कैसी धरोहर ?

विट -:वसन्तसेना।

विट - वसन्तसेना

शकार -:गता।

शकार- वह तो गई।

विट -:क्व ?

विट -कहाँ ?

शकार -:भावस्यैव पृष्टत:।

शकार -तुम्हारे पीछे पीछे।

विट -:सवितर्कम् न गता खलु सा तया दिशा।

विट -कुछ सोचकर नहीं उधर तो वह नहीं गई है।

शकार -:त्वं कतमया दिशा गत :?

शकार -तुम किस ओर गये थे?

विट -:पूर्वया दिशा।

विट -पूरब की ओर।

शकार -:सापि दक्षिणया गता।

शकार -तो फिर वह दक्षिण की ओर गई।

विट -:अहं दक्षिणया।

विट – मैं तो दक्षिण की ओर गया था।

शकार -:सापि उत्तरया।

शकार -वह भी उत्तर की ओर गई है।

विट -:अत्याकुलं कथयसि । न शुध्यति मे अन्तरात्मा। तत् कथय सत्यम्।

विट -तुम कुछ घबड़ाकर बोल रहे हो। तुम्हारी बातें सच्ची नहीं लगती।
ठीक-ठीक बतलाओ; वह कहॉ गई ?
शकार -:शपे भावस्य शीर्षमात्मीयाभ्यां पादाभ्याम्, तत् संस्थापय हृदयम् एषा मया मारिता।
शकार- मैं अपने पैरों से तुम्हारा माथा छू कर कसम खाकर कहता हूँ ,दिल थामकर सुनो, मैंने वसन्तसेना को मार डाला।
विट -:सविषादम् सत्यं त्वया व्यापादिता ?
विट -दु:ख के साथ क्या सचमुच तुमने उसे मार डाला ?
शकार -:यदि मम वचने न प्रत्ययसे,तत् प्रेक्षस्व प्रथमं राष्ट्रिय-श्याल-संस्थानस्य शूरत्वम्।
शकार -यदि तुम्हें मेरी बातों पर विश्वास नहीं है तो राजा के साले की वीरता को देख लो। गिरी हुई वसन्तसेना को दिखाताहै।
विट -:हा! हतोऽस्मि मन्दभाग्य :। इति मूर्च्छित :पतति।
विट -हाय, मैं अभागा तो मर गया। अचेत होकर गिर जाताहै।
शकार - :ही ही! उपरतो भाव :।
शकार -अरे, विट तो मर गया।
चेट -: समाश्वसितु समाश्वसितु भाव:। अविचारितं प्रवहणमानयतैव मया प्रथमं मारिता।
चेट -भाव, धीरज धरो, बिना कुछ सोचे विचारे अपनी गाड़ी से यहॉ लाकर पहले तो मैंने ही उसका बध किया।
विट -:समाश्वस्य सकरूणम् हा वसन्तसेने!
दाक्षिण्योदकवाहिनी विगलिता याता स्वदेशं रति :
हा हालड्कृतभूषणे ! सुवदने ! क्रीडारसोद्भासिनि !।
हा सौजन्यनदि ! प्रहासपुलिने ! हा मादृशामाश्रये !
हा हा नश्यति मन्मथस्य विपणि :सौभाग्यपण्याकर :।।38।।
सास्रम् कष्टं भो! : कष्टम्।
किं नु नाम भवेत् कार्यमिदं येन त्वया कृतम्।
अपापा पापकल्पेन नगरश्रीर्निपातिता ।।39।।
स्वगतम् अये! कदाचिदयं पाप इदमकार्य मयि संक्रामयेत्। भवतु, इतो गच्छामि।
शकार उपगम्य धारयति।
अन्वय -दाक्षिाण्योदकवाहिनी, विगलिता, रति:, स्वदेशम्, याता, हा हा, अलंकृतभूषणे, सुवदने, क्रीडारसोद्भासिनि, हा प्रहासपुलिने, सौजन्यनदि, हा, मादृशाम्, आश्रये, हा ! हा! मन्मथस्य, विपणि:, सौभाग्यपण्याकर:, नश्यति **।।38।।**
अन्वय -किम्, नु, नाम, कार्यम्, भवेत्, येन , त्वया, इदम्, कृतम्, पापकल्पेन, अपापा:, नगरश्री:, निपातिता:।**।39।।**
विट -धीरज रखकर, दयापूर्वक हाय, वसन्तसेने।

हा आभूषणों के आभूषण, सुन्दर मुखवाली, सुरतसुखदायिनि, सुजनता की नदी, हास्य के पुलिन, मेरे जैसे अनाथों की आश्रयदायिनि, हा वसन्तसेने, तुम कहॉ गई? उदारता रूपी जल की नदी सूख गई। धरती की रति पुन :स्वर्ग चली गई। हाय, हाय, सौन्दर्यरूपी विक्रेय वस्तु की खान खत्म हो गई और कामदेवका बाजार लुट गया **।।38।।**

हिन्दी अनुवाद -ऑखो में ऑसु भरकर कष्ट है, महाकष्ट -

वसन्तसेना को मारकर तुम्हारा कौन सा मनोरथ पूरा हुआ ? किसलिए तुमने यह जघन्य अपराध किया ? महान् पापी तुमने इस पाप रहित नगरलक्ष्मी को ही समाप्त कर दिया **।।39।।**

मन ही मन अरे कहीं यह पापी इस कुकर्म को मेरे माथे ही न थोप दे ? अच्छा तो मुझे यहॉ से चल ही देना चाहिये। शकार आकर विट को पकड़ लेता है।

विट -:पाप! मा मा स्प्राक्षी:। अलं त्वया। गच्छाम्यहम्।

विट -पापी, तुम मुझे मत छुओ। तुम्हारा प्रयास बेकार है। मैं अब चला ।

शकार -:अरे! वसन्तसेनां स्वयमेव मारयित्वा मां दूषयित्वा कुत्र फलायसे ? साम्प्रतम् ईदृशोऽहमनाथ: प्राप्ता:।

शकार -अरे, तुमने वसन्तसेना की हत्या कर दी और इस हत्या का कलंक मेरे माथे थोप कर स्वयं कहॉ भाग रहे हो ? हाय, इस समय मैं ऐसे असहाय हो गया।

विट -:अपध्वस्तोऽसि।

विट -तुम पतित हो।

शकार -: अर्थान् शतं ददामि सुवर्णकं ते कार्षापणं ददामि सवोडिकं ते
एष दोषस्थानं पराक्रमो मेसामान्यकोभवति मनुष्यकाणाम् ।।40।।

अन्वय -अहम् (ते, शतम्, अर्थान् सुवर्णकम्, ददामि, ते सवोडिकम्, कार्षापणम् ददामि, दोषस्थानम्, मे, एष:, पराक्रम:, मनुष्याणाम्, सामान्यक:, भवतु, **।।40।।**

शकार -मैं तुम्हें सोने के मोहरों से भर दूँगा। कौड़ियों के साथ कार्षापण भी दूगॉ। अपराध का करण मेरा यह पराक्रम किसी और सामान्यजन पर थोप देना। **।।40।।**

विट -:धिकं, तवैवास्तु।

विट -तुम्हें धिक्कार है। यह दोष तो तुम्हीं पर होगा।

चेट -:शान्तं पापम्।

चेट - ऐसा मत कहो शकार , जिसका पाप है, उसी पर रहेगा।

शकार :हसति।

शकार हँसता है।

विट-:

अप्रीतिर्भव तु विमुच्यतां हि हासो
धिक् प्रीतिं परिभवकारिकामनार्याम्।
मा भूच्च त्वयि मम संगतं कदाचिद्

आच्छिन्नं धनुरिव निर्गुणं त्यजामि ।।41।।

अन्वय-हास:, विमुच्यताम्, अप्रीति:, भवतु, हि, परिभवकारिकाम्, अनार्याम्, प्रीतिम्, धिक्। त्वयि, मम,संगतम्, कदाचित्, मा भूत। च, आच्छिन्नम् , निर्गुणम्, धनु :, इव, त्वाम् त्यजामि ।।41।।

हिन्दी अनुवाद - विट -बेकार हँसना बन्द करो। अब तुम्हारे साथ हमारी दोस्ती नहीं निभेगी। ऐसी दोस्ती पद लानत है जिससे अपमान एवं दुष्टता की बदबू आती हो। तुम्हारे साथ हमारी संगति कभी न हो तुम्हें टूटे डोरे वाले धनुष की तरह छोड़कर जाता हूँ **।।41।।**

शकार -:भाव! प्रसीद, प्रसीद ! एहि, नलिन्यां प्रविश्य क्रीडाव:।

शकार -अरे ओ विद्वन्, प्रसन्न हो जाओ,आओ इस कमल से भरे तालाब में हम क्रीड़ा करें।

विट -:

अपतितमति तावत् सेवमानं भवन्तं
पतितमिव जनोऽयं मन्यते मामनार्यम्।
कथमहमनुयायां त्वां हतस्त्रीकमेनं
पुनरपिनगरस्त्री-शंकिताद्धीक्षिदृष्टम् ।।42।।
सकरूणम् वसन्तसेने!
अन्यस्यामपि जातौ मा वेश्या भूस्त्वं हि सुन्दरि ! ।
चारित्र्यगुणसम्पन्ने ! जायेथा विमले कुले।।43।।

अन्वय -भवन्तम्, सेवमानम्, अपतितम्, अपि, माम्, अयम्, जन:, पतितम्, इव, मन्यते, हतस्त्रीकम्, नगरस्त्रीशंकिताद्धीक्षिदृष्टम्, एनम्, त्वाम्, पुनरपि, कथम्, अनुयायाम् **।।42।।**

अन्वय -हे सुन्दरि, त्वम्,अन्यस्याम्, जातौ, अपि, वेश्या, मा, भू:, हे चारित्रगुणसम्पन्ने, विमले, कुले, जायेया:। **।।43।।**

विट-तुम्हारे साथ रहने पर मैं स्वयं अपनी ऑंख में ही आप गिर जाऊँगा। जनसामान्य भी मुझे पतित एवं नीच समझेंगे। तुम वसन्तसेना के हत्यारे हो। नगर की महिलाएँ तुम्हें बड़ी सन्दिग्ध दृष्टि से देखती हैं। तुम्ही बतलाओ, तुम पर खुश होकर मैं तुम्हें अब कैसे साथ दूँ **।।42।।**

दयापूर्वक हे वसन्तसेने!

हे सुन्दरी, अगले जन्म में तुम वेश्या कुल में कभी जन्म मत लेना, तुम एक चरित्रगुणसम्पन्न महिला हो, अत :तुम किसी कुलीन घर में जन्म लेना **।।43।।**

शकार : मदीये पुष्पकरण्डकजीर्णोद्याने सवन्तसेनां मारयित्वा कस्मिन् पलायसे । एहि, मम आवुत्तस्य अग्रतो व्यवहारं देहि।

शकार -अरे ओ दुष्ट, मेरे पुष्पकरण्डक नामक जीर्णोद्यान में वसन्तसेना को मारकर, अब तुम्हारा विचार होगा। पकड़ता है

विट -:किं रे! भीतोऽसि ? तद्गच्छ।

विट - अच्छा, ठहर रे नीच। तलवार खींचता है।

शकार -:निधनं गच्छ । अरे स्थावरक! पुत्रक ! कीदृशं मया कृतम्।

शकार-डर से कुछ दूर हटकर अरे, तो क्या तुम डर गये, जब जाओ।

विट -:स्वगतम् न युक्तमवस्थातुम्। भवतु, अत्र आर्यशर्विलकचन्दनकप्रभृतय :सन्ति, तत्र गच्छामि !इति निष्क्रान्त:।

विट -अपने आप अब यहॉ ठहरना बिल्कुल ठीक नहीं है। अच्छा तो जहॉ, आर्य शर्विलक, चन्दनक आदि गये हैं वहीं चला जाय। निकल जाता है।

चेट -:भट्टक! महदकार्य कृतम्।

चेट -मालिक, आपने बहुत बुरा काम किया है।

शकार -:अरे चेट! किं भणसि अकार्य कृतमिति ? भवतु , एवं तावत्। गृहाण इममलंकारं मया तावद्दत्तम्, यावत्यां वेलयामलङ्करोमि, तावती वेलां मम अन्यां तव।

शकार -क्या कहा, रे सेवक, 'बहुत बुरा काम किया'? अच्छा तो सुन)अपनी देह से बहुत सारे जेवरों को उतार कर ले, इसे रख ले। मैंने तुझे दे दिया। पहनने के समय ये मेरे रहेंगे और बाकी समय में तेरे।

चेट -:भट्टके एव एते शोभन्ते किं मम एतै :?

चेट-ये सब तो आपको ही शोभते हैं मालिक, मेरे लिए ये किस काम के हैं ?

शकार -:तद् गच्छ , एतौ गावौ गृहीत्वा मदीयायां क्रीडार्थायां प्रासादबालाग्रप्रतोलिकायां तिष्ठ , यावदहमागच्छामि।

शकार -तो जा अब इन बैलों को अपने साथ लेते जा। हॉ और वहॉ महल की नई अटारी की ऊपर वाली प्रतोली में रूककर मेरी प्रतीक्षा करो। मैं आ ही रहा हूँ।

चेट -:यद्भट्टक आज्ञापयति।

चेट -मालिक का जैसा हुक्म। ऐसा कहकर चला जाता है।

शकार -:आत्म्परित्राणे भावो गत :अदर्शनम्, चेटमपि प्रासादबालाग्रप्रतालिकायां निगडपूरितंकृत्वा स्थापयिष्यामि। एवं मन्त्रो रक्षितो भवति। तद्गच्छामि। अथवा, पश्यामि तावदेनाम्, किमेषा मृता ? अथवा पुनरपि मारयिष्यामि। कथं सुमृता। भवतु , एतेन प्रावारकेण प्रच्छादयामि एनाम्। अथवा नामांकित एष:, तत् कोऽपि आर्यपुरूष :प्रत्यभिजानाति। भवतु, एतेन वातालीपुञ्जितेन शुष्कपर्णपुटेन प्रच्छादयामि । भवतु एवं तावत्, साम्प्रतमधिकरणं गत्वा व्यवहारं लेखयामि। यथा; अर्थस्य कारणात् सार्थवाहचारूदत्तेन मदीयं पुष्पकरण्डकं जीर्णोद्यानं प्रवेश्य वसन्तसेनाव्यापादितेति।

चारूदत्त-विनाशाय करोमि कपटं नवम्।
नगर्या विशुद्धायां पशुघातमिव दारूणम् 44।।

अन्वय -अस्याम् विशुद्धायाम्, नगर्याम्, दारूणम्, पशुघातम्, इव, चारूदत्तविनाशाय, नवम्, कपटम्, करोमि **।।44।।**

शकार -अपने बचाव के लिए विट विलुप्त हो गया। चेट को भी बेड़ी डालकरअपने महल की नई अटारी वाली गली में छोड़ दूँगा। इस तरह इस हत्या का भेद छिपा रह जायेगा। तो, जाता हूँ ,अथवा जाने से पहले इसे देख लूँ कि यह मर गई ? अथवा और मारूँ देखकर यह तो पूरी तरह मर गई। अच्छा तो इस दुपट्टे से इसे ढँक देता हूँ। अथवा -इस दुपट्टे पर तो नाम लिखा है। कोई भी भला आदमी इसे देखते ही पहचान लेगा। अच्छा तो, हवा के झोंको से इकट्ठे किये गये इन सूखे पत्तों से ही इसे ढँक दूँ। वैसा ही करके ,कुछ सोंचकर (अच्छा तो अब ऐसा करूँ ; न्यायालय में जाकर रपट लिखवा दूँ कि धन के लोभ से सार्थवाहसुत चारूदत्त ने वसन्तसेना को पुष्पकरण्डक नामक मेरे पुराने बगीचे में लाकर मार दिया।

इस पवित्र नगरी में दुखद पशुहत्या की तरह आर्य चारूदत्त के विनाश के लिए मैं एक नया छल करता हूँ ।।44।।

शकार -मर जा। अरे बेटा स्थावरक, मैंने कैसा काम किया?

भवतु , गच्छामि। अविदमादिके ! अवदमादिके !येन येन गच्छामि मार्गेण, तेनैव एष दुष्टश्रमणक : गृहीतकाषायोदकं चीवरं गृहीत्वा आगच्छति । एष मया नासां छत्वा वाहित :कृत्वैर :कदापि मां प्रेक्ष्य 'एतेन मारिता' इति प्रकाशयिष्यति । तत् कथं गच्छामि ? भवतु एतदर्द्धपतितं प्राकारखण्डमुल्लंघय गच्छामि।

अच्छा तो अब चलूँ। निकल कर, देखकर, डरते हुए ओह, जिधर मैं जाता हूँ, उधर ही हाथ में गेरूआ कौपीन लिये यह संन्यासी मुझे मिल जाता है। मैंने इसकी नाक छेदकर इसे अपने बगीचे से बाहर खदेड़ दिया है। अत :यह मेरा नित्य-शत्रु है, मुझे यहॉ देखकर कही यह न कह दे कि- 'शकार ने ही वसन्तसेना को मारा है।' तो फिर कैसे जाऊँ ? देखकर अच्छा तो आधी गिरी हुई इस दीवार को लॉघकर में निकल जाता हूँ।

एषोऽस्मि त्वरित-त्वरितो लंकानगर्य्या गगने गच्छत्।

भूम्यां पाताले हनूमच्छिखरे इव महेन्द्र :।।45।।

अन्वय -एष:, अहम्, आकाश, भूमयाम, पाताले, हनुमच्छिखरे, लंकानगर्याम्, गच्छन्, महेन्द्र:, इव, त्वरितत्वरित:, गच्छामि **।।45।।**

यह मैं शकार आकाश, पाताल, धरती और हनुमान् पर्वत की चोटी महेन्द्र पर्वत की चोटी एवं लंका को जाते हुए महेन्द्र वस्तुत:हनुमान् की भॉति तेजी से जा रहा हूँ **।।45।।**

इति निष्क्रान्त :प्रविश्य अपटीक्षेपेण

संवाहको भिक्षु -:प्रक्षालितमेतन्मया चीवरखण्डम् किं नु खलु शाखायां शोषयिष्यामि ? इह वानरा विलुम्पन्ति। किं नु खलु भूम्याम् ? धूलिदोषो भवति। तत् कुत्र प्रसार्य्य शोषयिष्यामि ? भवतु, इह वातालीपुञ्जिते शुष्क–पत्रसञ्चये प्रसारयिष्यामि। नमो बुद्धाय ।भवतु, धर्माक्षराणि उदाहरामि। अथवा अलं ममैतेन स्वर्गेण। यावत्तस्या बुद्धोपासिकाया :प्रत्युपकारं न करोमि,यया दशानां सुवर्णकानां कृते द्यूतकाराभ्यां निष्क्रीत:, तत :प्रभृति तया क्रीतमिवात्मानमवगच्छामि। किं न खलु पर्णोदरे समुच्छ्वसिति ? अथवा -

वातातपेन तप्तानि चीवरतोयेन स्तमितानि पत्राणि।

एतानि विस्तीर्णपत्राणि मन्ये पत्राणीवसफुरन्ती ।।46।।

वसन्तसेना संज्ञां लब्ध्वा हस्तं दर्शयति।

अन्वय -वातातपेन, तप्तानि, एतसनि, पत्राणि, चीवरतोयेन, स्तिमितानि, विस्तीर्णपत्राणि, पक्षिण:, इव, स्फरन्ति, इति मन्ये ।।46।।

संवाहक भिक्षु – इस भगवे को तो मैंने धो डाला किन्तु इसे कहॉ पर सुखाऊँ , यदि पेड़ पर डालूँ तो बन्दर इसे फाड़ डालेंगे। धरती पर धूल लग जायेगी , हवा ने यहॉ सूखे पत्तों की राशि लगा दी है , इसी पर सुखाता हूँ। भगवान बुद्ध को प्रणाम करता है , बैठ जाता है – कहता है कि अब मैं धार्मिक अक्षरों का पाठ करता हूँ **पंचजना: येन मारिता्**.....' इत्यादि पूर्वोक्त श्लोक पढता है। अथवा इस स्वर्ग से मुझे क्या लाभ ? जब जक मैं उस बुद्धोपासिका वसन्तसेना का प्रत्युपकार नहीं करता हूँ, जिसने सुवर्ण के लिए मुझे जुआड़ियों से छुडा़ लिया। तभी से मैं समझता हूँ कि उसने मुझे खरीद लिया देखकर अरे, पत्तो के ढेर के बीच से यह सॉस कौन ले रहा हूँ अथवा - **हिन्दी** - हवा और घाम से सूखे ये पत्ते भगवे के पानी से भीगकर मानो ऐसे फैल रहे हैं जैसे कोई पखेरू अपने पंख फैलाकर हिल रहे हों **।।46।।**

भिक्षु -:हा हा शुद्धालंकारभूषित :स्त्रीहस्तो निष्क्रामति। कथं द्वितीयोऽपि हस्त :? प्रत्यभिजानामीव एतं हस्तम्। अथवा,किं विचारेण सत्यं स एव हस्त :, येन मे अभयं दत्तम्। भवतु, प्रेक्षिष्ये। सैव बुद्धोपासिका। सन्तसेना पानीयमाकांक्षति।

भिक्षु -हाय, हाय यह तो सुन्दर जेवरो से सजा हुआ किसी औरत का हाथ बाहर निकल रहा है, ये लो, यह दूसरा हाथ भी। कुछ गौर कर यह हाथ तो कुछ जाना पहचाना-सा लगता है, अथवा – सच यह तो वही हाथ है जिसने जुआडियों से मुझे अभयदान दिया था। अच्छा , देखता हूँ। अभिनयपूर्वक पत्ते हटाकर, देख और पहचान कर यह तो वही बुद्धोपासिका वसन्तसेना है।

वसन्सेना इशारे से पानी मॉंगती है।

भिक्षु -:कथमुदकं मार्गयति, दूरे च दीर्घिका। किमिदानीमत्र करिष्यामि ? भवतु, एतच्चीवरमस्या उपरि गालयिष्यामि।

वसन्तसेना संज्ञां लब्ध्वा उत्तिष्ठति। भिक्ष :पटान्तेन बीजयति

भिक्षु -हाय , यह तो पानी मॉंग रही है। जलाशय दूर है। अब मैं क्या करूँ ? अच्छा इस भगवे को निचोड़ता हूँ। निचोड़ता है।

वसन्तसेना होश में आकर उठ बैठती है। सन्यासी वस्त्र से हवा करता है।

वसन्तसेना -आर्य! कस्त्वम्?

वसन्तसेना -मान्यवर ,आप कौन है ?

भिक्षु - :किं मां न स्मरति बुद्धोपासिका दश-सुवर्ण-निष्क्रीतम् ?

भिक्षु -अरी ओ बुद्धोपासिका, तुमने मुझे पहचाना नहीं, दस सोने के सिक्के देकर तुमने ही तो मुझे खरीदा है।

वसन्तसेना -स्मरामि, न पुनर्यथा आर्यो भणति। वरमहमुपरतैव।

वसन्तसेना -याद तो आती हैं पर, जैसे आप कह रहे हैं वैसे नहीं। इससे तो वह मौत ही अच्छी थी।

भिक्षु - बुद्धोपासिके ! किं नु इदम् ?

भिक्षु -:बुद्धोपासिके, यह तुम्हें क्या हुआ है ?

वसन्तसेना -यत् सदृशं वेशभावस्य।

वसन्तसेना -दु:ख के साथ वेश्यालय में जन्म लेने का उचित फल ही है।

भिक्षु - **:**उत्तिष्ठतु, उत्तिष्ठतु, बुद्धोपासिका, एतां पादपसमीप-जातां लतामवलम्ब्य।

भिक्षु -बुद्धोपासिके, वृक्ष की पार्श्ववर्त्तिनी इस लता के सहारे उठकर खड़ी हो जाओ। ऐसा कहकर लता को झुकाता है।

वसन्तसेना लता के सहारे उठकर खड़ी हो जाती है।

भिक्षु -:एतस्मिन् विहारे मम धर्मभगिनी तिष्ठति। तस्मिन् समाश्वस्तमना भूत्वा उपासिका गेहं गमिष्यति। तत् शमै :शनै :गच्छतु बुद्धोपासिका। अपसरत आर्य्या! : अपसरत। एषा तरूणी स्त्री, एष भिक्षुरिति शुद्धो मम एष धर्म :।

भिक्षु -इस बौद्ध मठ में मेरी एक धर्म की बहन रहती है। वहॉ कुछ आराम कर आप लौट जाओगी। तो धीरे धीरे बढो। ऐसा कहकर घूमता है। देखकर लोगो हटो, यह युवती स्त्री है और मैं सन्यासी हूँ। इसलिये मेरा यह पवित्र कर्त्तव्य है।

हस्तसंयतो मुखसंयत इन्द्रियसंयत :स खलु मानुष:।
किं करोति राजकुलं तस्य परलोको हस्ते निश्चल:।। 47।। इति निष्क्रान्ता :

अन्वय -स:, खलु, मानुष:, हस्तसंयत:, मुखसंयत:, इन्द्रियसंयत:, राजकुलम्, तस्य ,किम्, करोति, परलोक:, तस्य:, हस्ते, निश्चल**:।। 47।।**

हिन्दी - वही मनुष्य वस्तुत :मनुष्य है, जिसका हाथ, मुँह और इन्द्रियॉ वश में रहती हैं। राजकुल उसका क्या बिगाड़ सकता है ? मरने के बाद स्वर्गतो उसकी मुट्ठी में है। **47।।**

सभी निकल जाते है। आठवॉ अंक समाप्त।

अभ्यास के प्रश्न –

1. निम्नलिखित सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिए -

1. शकार ने किसे बूढा सियार कहा है-

क -चेट ख -विट ग -भिक्षु घ -कोई नहीं

2. सदा मांस और घी खिलाकर किसे पाला गया -

क -विट ख -चेट ग -भिक्षु घ -वसन्तसेना

3. शकार ने पण्डित किसे कहा है -

क -स्वयं ख -विट को ग -चेट को घ-वसन्तसेना को

4. शकार किसे मारने की इच्छा करता है -

क-वसन्तसेना ख-चेट ग-विट घ -कोई नहीं

5. वसन्तसेना ने सर झुकाकर कितने श्लोको को गाया -

क-चार ख-दो ग-तीन घ-पांच

2. सत्य एवं असत्य कथनों की पहचान कीजिए

क-जो मन में बसा है उसकी याद कैसे नहीं आयेगी ,यह कथन वसन्तसेना का है।

ख-गर्भदासि वसन्तसेना को कहा गया है।

ग-चेट का नाम स्थावरक नहीं है।

घ-विट को पतित कहा गया है।

ड -.भिक्षु ने वसन्तसेना को बुद्धोपासिका कहा।

3.4 सारांश –

प्रसतुत इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि 25वें श्लोक में चेट ने कहा कि मैं अपने पूर्व जन्म में किये हुए पापों के कारण ही दासकुल में जन्म पाया हूँ। वसन्तसेना की हत्या करके मैं और अधिक पापों को नहीं जुटाना चाहता। विट को बूढा सियार कहा और चेट को परलोक से भय खाने वाला बताया किन्तु मैं तो राज्य का साला और प्रधान पुरूष हूँ । वह विट को भगा देता है। दोनों के वार्तालाप होते हैं। किन्तु विट का कथन सराहनीय है कि अच्छाई के लिए अच्छे कुल में जन्म लेना अनिवार्य नहीं है। ऐसा कह कर वह शकार और वसन्तसेना को मिलने के लिए एकान्त प्रदान करता है। किन्तु शंका भी करता है कि कहीं यह पापी शकार उसकी हत्या न कर दे। वसन्तसेना दुष्टचरित के लिए दो श्लोक कहती है। शकार क्रोधित होता है। वह चारूदत्त की प्रसंशा नहीं सुनता। वसन्तसेना चारूदत्त के वियोग में मरने जा रही है। चारूदत्त को पुकार रही है। शकार इसे सहन नहीं करता और वह कहता है कि इस पापिनी की मौत इसे जीर्णोद्यान में खीचकर लायी है। शकार विट से कहता है कि मैंने वसन्तसेना को मार डाला। किन्तु बौद्धभिक्षु और वसन्तसेना के वार्तालापों से अष्टम अंक समाप्त होता है। अत :इस इकाई को पढ़ने के बाद आप आठवें अंक के वर्णन वैशिष्ट्य के साथ-साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताएं भी बता सकेंगे।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

1 . शौण्डीर्यभावात् -स्व औदार्यात्अर्थात् अपनी उदारता से।

2. विविक्तविस्तम्भ रसो -विविक्त का अर्थ होता है शून्य या एकान्त और विस्ततम्भ का अर्थ है विश्वास रस का तात्पर्य है आनन्द।

3. पणस्त्रीणाम-शारीरिक व्यवसाय में लिप्त स्त्रीयों को कहा गया है।

4. मोटायिष्यामि -इसका अर्थ चूर्णा करोमि है अर्थात् चूर कर दूँगा।

5. परिभव कारिकामनायीम -.आनादर करने वाली , या अनादरकारिणी, निन्दनीया महिलायें।

6. आच्छिन्नं -टूटा हुआ। टूट गया

7. पशुघात - -हिंसा , बलि इत्यादि।

8. हस्तसंयत -हाथों के द्वारा कोई गलत कार्य न करने वाला।

9. मुखसंयत – मुख से किसी को पीड़ा न पहुचाने वाला।

10. इन्द्रिय संयत – इन्द्रिय रूप साधनों से किसी का अपकार न करने वाला।

3. 6अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख-2 .क -3 .ख -4 .क 5. ख

2. क -सत्य ख -सत्य ग- असत्य घ-सत्य ड-.सत्य

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ 0कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

2. डॉ 0उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न –

1. इस पठित इकाई के आधार पर वसन्तसेना की विशेषता लिखिए।

2. पठित अंश का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

3. पठित अंश का साहित्यिक वैशिष्ट्य लिखिए।

4. बौद्ध भिक्षु के कथनों की समीक्षा कीजिए।

इकाई - 4 रत्नावली प्रथम अंक संवाद एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मंगलाचरण से प्रस्तावना तक
4.4 श्लोक संख्या 7 से 25 तक अर्थ व्याख्या
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

स्नात्तकोत्तर संस्कृत चतुर्थ सेमेस्टर के चतुर्थ प्रश्न पत्र नाटक एवं नाटिका में खण्ड 2 के वर्ण्य विषय रत्नावली नाटिका से सम्बन्धित यह चतुर्थ इकाई है। इस इकाई में प्रथम अंक मुख्य वर्ण्य विषय है।

प्रथम अंक का आरम्भ परम्परा के अनुसार कवि ने मंगलाचरण से किया है। इसकी कथा वस्तु का मूल स्रोत कथासरितसागर है। यह रूपक का एक भेद है। प्रथम अंक में प्रारम्भिक वर्णन नान्दी के पश्चात् विश्कम्भक का चित्रण करते हुये यौगन्धरायण के द्वारा उदयन के भाग्योत्कर्श की सूचना दी गई है। नेपथ्य की कल कल ध्वनि में महाराज उदयन का वसन्त उत्सव देखने के लिये राजप्रसाद पर चढ़ना, कौशाम्बी में वसन्तोत्सव के समय समस्त अन्तःपुर का आनन्दित होना इत्यादि सूचित हुआ है। राजा का मकरन्द उद्यान में पहुंचना, सागरिका का कौशाम्बी में काम पूजन देखने का कुतूहल, तथा राजा की अन्य अभिलाशायें संवादों के मध्य प्रथम अंक में प्रकट है।

अतः रत्नावली नाटिका के प्रथम अंक से सम्बन्धित श्लोकों के अध्ययन व संवादों के अवलोकन के पश्चात् आप मंगलाचरण से लेकर प्रथम अंक की सम्पूर्ण कथावस्तु के विविध पक्षों को समझा सकेगें।

4.2 उद्देश्य

रत्नावली नाटिका के प्रथम अंक में विभिन्न पात्रों के मध्य हुये संवादों एवं श्लोकों का सम्यक् अध्ययन करने के पश्चात् आप बता सकेगें कि -

- ❖ मंगलाचरण कितने प्रकार के होते है।
- ❖ नान्दी का प्रयोग क्यों किया जाता है।
- ❖ कथावस्तु की प्रथम सूचना कौन देता है।
- ❖ रत्नावली के नायक नायिका कौन तथा किस कोटि के है।
- ❖ प्रथम अंक के श्लोकों में किन किन छन्दों का प्रयोग हुआ है।
- ❖ प्रथम अंक के रचना विधान में कवि ने नाट्य शास्त्र के नियमों का किस प्रकार पालन किया है।
- ❖ प्रथम अंक का वैशिश्ट्य क्या है।

4.3 मंगलाचरण से प्रस्तावना तक

पादाग्रस्थितया मुहुः स्तनभरेणानीतया नम्रतां
शंभोः सस्पृहलोचनत्रयपर्थं यान्त्या तदाराधने।
ह्रीमत्या शिरसीहितः सपुलकस्वेदोद्गमोत्कम्पया
विश्लिष्यन्कुसुमाञ्जलिर्गिरिजया क्षिप्तोऽन्तर पातु वः।। 1।।

अपि च

औत्सुक्येन कृतत्वरा सहभुवा व्यावर्तमाना ह्रिया
तैस्तैर्बन्धुवधूजनस्य वचनैर्नीताभिमुख्यं पुनः।
दृष्टवाग्रे वरमात्तसाध्वसरसा गौरी नवे संगमे
संरोहत्पुलका हरेण हसता श्लिष्टा शिवायाऽस्तु वः।। 2।।

हिन्दी अनुवाद -उसके (शिव के) आराधन में पैरों के अगले भाग पर खड़ी हुई, (परन्तु) स्तनों के भार से बार-बार झुकाई गई, शम्भु के लालसापूर्ण तीनों नेत्रों के पथ में जाती हुई, (अतः) रोमा´ंच, पसीने तथा कम्पन से युक्त, (अतः) लजाती हुई पार्वती द्वारा (शिव के) सिर पर (डालने के लिये) चाही गई (परन्तु) फेंके जाने पर (शिव और पार्वती के) बीच में बिखरती हुई पुष्पों की अंजलि तुम्हारी (अर्थात् सभासदों की) रक्षा करे।।1।।

प्रथम मिलन में उत्सुकता के कारण (पति की ओर जाने की) शीघ्रता करती हुई, (लेकिन) सहज लज्जा के कारण लौटती हुई, फिर सम्बन्धी स्त्रियों के उन-उन (अनेक प्रोत्साहित करने वाले) वचनों द्वारा (शिव के) सामने ले जाई गई, आगे पति को देख कर भय तथा आनन्द का अनुभव करती हुई, रोमान्चित हुई तथा (पार्वती की विचित्र अवस्था को देखकर) हँसते हुये शिव द्वारा आलिंगन की गई गौरी तुम्हारे कल्याण के लिये होवे।।2।।

अपि च

संप्राप्तं मकरध्वजेन मथनं त्वत्तो मदर्थे पुरा
तद् युक्तं बहुमार्गगां मम पुरो निर्लज्ज वोढुं तव।
तामेवानुनय स्वभावकुटिलां हे कृष्णकण्ठग्रहं
मुच्चेत्याह रुषा यमद्रितनया लक्ष्मीश्च पायात्सवः।।

अपि च

क्रोधेद्धैर्दृष्टिपातैस्त्रिभिरुपशमिता वह्नयोऽमी त्रयोऽपि।
त्रासार्ता ऋत्विजोऽधश्चपलगणहृतोष्णीषपट्टाः पतन्ति।
दक्षः स्तौत्यस्य पत्नी विलपति करुणं विद्रुतं चापि देवैः
शंसन्नित्यात्तहासो मखमथनविधौ पातु देव्यै शिवो वः।। 3।।

और भी -

शिव पक्ष में - ''पहले मेरे कारण कामदेव ने तुम से नाश प्राप्त किया था, हे निर्लज्ज, तब क्या मेरे सामने अनेक मार्गों में बहने वाली (त्रिपथगा गंगा) को वहन करना तेरे लिये उचित है ? हे नीलकण्ठ (शिव) स्वभाव से कुटिल उस (गंगा) को ही प्रसन्न कर, (मेरी) पकड़ छोड़ दे।'' इस प्रकार क्रोध से पार्वती ने जिसे कहा था, वह (शिव) तुम्हारी रक्षा करे।

विष्णु-पक्ष में - ''पहले मेरे कारण समुद्र ने तुम से मंथन प्राप्त किया था, हे निर्लज्ज तब क्या मेरे सामने अनेकों के मार्गों पर चलने वाली (कुलटा, कुब्जा) को वहन करना तेरे लिये उचित है। हे कृष्ण, हृदय से कुटिल उस (कुब्जा) को ही प्रसन्न कर, (मेरे) कण्ठ का आश्लेष छोड़ दे'' लक्ष्मी ने इस प्रकार क्रोध पूर्वक जिस से कहा था, वह (विष्णु) तुम्हारी रक्षा करे।

''क्रोध से दीप्त तीन दृष्टियों के प्रक्षेप ने वह तीनों ही अग्नियाँ बुझा दीं, भय से आक्रान्त पुरोहित, जिनके दुपट्टे चञ्चल गणों ने छीन लिये थे, नीचे गिरने लगे; दक्ष (प्रजापति) स्तुति करने लगा; इसकी पत्नी करुण विलाप करने लगी और देव लोग भी भाग खड़े हुये।'' इस प्रकार यज्ञ-विध्वंस के विधान के विषय में देवी (पार्वती) से कहकर अट्टाहस करता हुआ शिव तुम्हारी रक्षा करंे।।3।।
अपि च
जितमुडुपतिना नमः सुरेभ्यो द्विजवृषभा निरुपद्रवा भवन्तु।
भवतु च पृथिवी समृद्धसस्या प्रतपतु चन्द्रवपुर्नरेन्द्रचन्द्रः।।4।।
(नान्द्यन्ते)
सूत्रधारः - अलमतिविस्तरेण। अद्याहं वसन्तोत्सवे सबहुमानमाहूय नानादिग्देशागतेन राज्ञः श्रीहर्षदेवस्य पादपद्मोपजीविना राजसमूहेनोक्तो यथा-अस्मत्स्वामिना श्रीहर्षदेवेनापूर्ववस्तुरचना लंकृता रत्नावली नाम नाटिका कृता। सा चास्माभिः श्रोत्रपरम्परया श्रुता न तु प्रयोगतो दृष्टा। तत्तस्यैव राज्ञः सकलजनहृदयाह्लादिनो बहुमानादस्मासु चानुग्रहबुद्ध्या यथावत्प्रयोगेण त्वया नाटयितव्येति।तद्यावदिदानीं नेपथ्यरचनां कृत्वा यथाभिलषितं सम्पादयामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) अये आवर्जितानि सकलसामाजिकानां मनांसीति मे निश्चयः। कुतः -
श्रीहर्षो निपुणः कविः परिषदप्येषा गुणग्राहिणी
लोके हारि च वत्सराजचरितं नाट्ये च दक्षा वयम्।
और भी - नक्षत्रों का अधिपति (चन्द्रमा) सर्वोत्कर्ष को प्राप्त है; देवों को (मेरा) नमस्कार है; श्रेष्ठ ब्राह्मण उत्पीडन से मुक्त हों; पृथ्वी समृद्ध धान्य वाली हो और चन्द्रमा के समान (सुन्दर) शरीर वाला, चन्द्र सदृश राजा प्रताप प्रदर्शित करे।।4।।
(नान्दी के बाद)
सूत्रधार - बस, अधिक क्या ! आज वसन्तोत्सव के अवसर पर अनेक दिशाओं तथा देशों से आये हुये, राजा श्री हर्षदेव के चरण-कमलों के आश्रित, राजा लोगों ने अत्यादरपूर्वक बुलाकर मुझसे कहा है - 'हमारे स्वामी श्री हर्षदेव ने अपूर्व कथा-रचना से अलंकृत रत्नावली नाम की नाटिका रची है। हमने श्रोत्र-परम्परा से उसके विषय में सुना तो है, लेकिन उसका अभिनय नहीं देखा है। इसलिये सब लोगों के हृदय को आनन्दित करने वाले उस राजा के प्रति अत्यधिक आदर के कारण और हमारे प्रति अनुग्रह करके तुम्हें उचित अभिनय द्वारा उसका नाट्य करना चाहिये।' तो, अब मैं वेश-विन्यास करके मन-चाहा किये देता हूँ। (घूम कर और देखकर) अहा ! मुझे निश्चय है कि सब सहृदयों के चित्त (हमारे नाट्य के लिये) लालायित हैं। क्योंकि -
श्रीहर्ष चतुर कवि हैं, यह सभा भी गुणों की ग्राहक है, वत्सराज (उदयन) का चरित लोगों को लुभाने वाला है और हम अभिनय-कला में पारंगत हैं।
वस्त्वेकैकमपीह वाञ्छितफलप्राप्तेः पदं किं पुन-
र्मद्भाग्योपचयादयं समुदितः सर्वो गुणानां गणः।।5।।

तद् यावद् गृहं गत्वा गृहिणोमाहूय संगीतकमनुतिष्ठामि। (परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखमवलोक्य च) इदमस्मदीयं गृहम्। यावत् प्रविशामि। (प्रविश्य) आर्ये इतस्तावत्।

इनमें से एक-एक वस्तु भी अभीष्ट फल की प्राप्ति का कारण होती है। फिर भला क्या (कहना, जबकि) मेरे भाग्य के उत्कर्ष से सब गुणों का समूह एकत्र उपस्थित हो गया है।।5।।

तो अब घर जाकर और गृहिणी को बुलाकर संगीत का प्रबन्ध करता हूँ। (प्रवेश कर के) आर्ये, इधर तो आओ।

(प्रवेश करके)

(प्रविश्य)

नटी - आर्यपुत्र, इयमस्मि। आज्ञापयत्वार्यः को नियोगोऽनुष्ठीयतामिति।

नटी - आर्यपुत्र, यह आ गई। आर्य आज्ञा देवें कि क्या आज्ञा सम्पन्न की जाय ?

सूत्रधारः - आर्ये रत्नावलीदर्शनोत्सुकोऽयं राजलोकः। तद् गृह्यतां नेपथ्यम्।

सूत्रधार - आर्ये, ये राजा लोग रत्नावली देखने को उत्सुक हैं। इसलिये वेश-विन्यास कर लीजिये।

नटी - (निःश्वस्य सोद्वेगम्) आर्यपुत्र, निश्चिन्त इदानीमसि त्वम्। तत्किमिति न नृत्यसि। मम मन्दभाग्यायाः पुनरेकैव दुहिता। सापि त्वया कस्मिंश्चिद्देशान्तरे दत्ता। कथमेवं दूरदेशस्थितेन जामात्रा सहास्याः पाणिग्रहणं भविष्यतीत्यनया चिन्तयात्मापि न मे प्रतिभाति। किं पुनर्नर्तितव्यम्।

नटी - (लम्बा सांस लेकर परेशानी के साथ) आर्यपुत्र, तुम तो अब निश्चिन्त हो, नाचोगे क्यों नहीं ? लेकिन मुझ भाग्यहीन की तो एक ही पुत्री थी, वह भी तुमने कहीं परदेस में दे दी। इतने दूर देश में रहने वाले दामाद से इसका विवाह कैसे होगा - इस चिन्ता से मुझे तो आपा भी नहीं सुहाता, फिर भला नाचना क्या ?

सूत्रधारः - आर्ये, दूरस्थेनेत्यलमुद्वेगेन। पश्य -

द्वीपादन्यस्मादपि मध्यादपि जलनिधेर्दिशोऽप्यन्तात्।
आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखीभूतः।।6।।

सूत्रधार - आर्ये, 'दूर रहने वाले (पति से कैसे विवाह होगा)' इसके लिये परेशानी न उठाओ। देखो - अनुकूल भाग्य अन्य द्वीप से भी, समुद्र के मध्य से भी और दिशा के छोर से भी अभीष्ट को लाकर तुरन्त मिला देता है ।।6।।

(नेपथ्ये)

साधु, भरतपुत्र, साधु! एवमेतत्। कः संदेहः। ('द्वीपात्-1/6 इत्यादि पठति)

सूत्रधारः - (आकर्ण्य नेपथ्याभिमुखमवलोक्य सहर्षम्) आर्ये, नन्वयं मम यवीयान्भ्राता गृहीतयौगन्धरायणभूमिकः प्राप्त एव। तदेहि। आवामपि नेपथ्यग्रहणाय सज्जीभवावः।

(इति निष्क्रान्तौ)इति प्रस्तावना

(नेपथ्य में)

ठीक है, भरतपुत्र, ठीक है। ऐसा ही है। क्या सन्देह है ? ('द्वीपादन्यस्माद्' इत्यादि श्लोक का पाठ करता है)।

सूत्रधार - (सुनकर, नेपथ्य की ओर देखकर, हर्ष से) आर्ये, यह मेरा छोटा भाई यौगन्धरायण की भूमिका धारण करके आ ही गया। तो आओ हम भी वेष-विन्यास के लिये तैयार होवें।(दोनों निकल जाते हैं)प्रस्तावना समाप्त होती है (यौगन्धरायण प्रवेश करता है)

4.4 श्लोक संख्या 7 से 25 तक अर्थ एवं व्याख्या

(ततः प्रविशति यौगन्धरायणः)

यौगन्धरायणः - ऐवमेतत्। कः सन्देहः ? (द्वीपादन्यस्मादिति पुनः पठित्वा) अन्यथा क्व सिद्धादेशप्रत्ययप्रार्थितायाः सिंहलेश्वरदुहितुः समुद्रे यानभङ्गमग्नोत्थिताया फलकासादनं क्व च कौशाम्बीयेन वणिजा सिंहलेभ्यः प्रत्यागच्छता तदवस्थायाः संभावनं रत्नमालाचिह्नायाः प्रत्यभिज्ञानादिहानयनं च।(सहर्षम्) सर्वथा स्पृशन्ति नः स्वामिनमभ्युदयाः। (विचिन्त्य) मयापि चैनां देवीहस्ते सगौरवं निक्षिपता युक्तमेवानुष्ठितम्।श्रुतं च मया -बाभगव्योऽपि क´ुचुकी सिंहलेश्वरामात्येन वसुभूतिना सह कथं कथमपि समुद्रादुत्तीर्य कोशलोच्छित्तये गतवता रुमण्वता मिलित इति। तदेवं निष्पन्नप्रायमपि प्रभुप्रयोजनंन न मे धृतिमावहतीति कष्टोऽयं खलु भृत्यभावः। कुतः -

प्रारम्भेऽस्मिन्स्वामिनो वृद्धिहेतौ
दैवेनेत्थं दत्तहस्तावलम्बे।
सिद्धेर्भ्रान्तिर्नास्ति सत्यं तथापि
स्वेच्छाचारी भीत एवास्मि भर्तुः।। 7।।

यौगन्धरायण - ऐसा ही है। क्या सन्देह है ? ('द्वीपादन्यस्माद्' इत्यादि श्लोक पुनः पढ़कर) नहीं तो, कहाँ सिद्ध के वचन के विश्वास से मांगी गई, समुद्र में जहाज के टूट जाने से डूब कर बची हुई, सिंहल देश के राजा की पुत्री का तख्ते को पा लेना और कहाँ सिंहल देश से लौटने वाले कौशाम्बी निवासी व्यापारी द्वारा उस दशा वाली की रक्षा और रत्नमाला के चिह्न वाली को पहचान लेने के कारण यहाँ ले आना। (हर्ष के साथ) सब तरह हमारे स्वामी को अभ्युदय प्राप्त हो रहे हैं। (सोचकर) और मैंने भी इसे आदरपूर्वक महारानी के हाथों में सौंप कर ठीक ही किया है। और मैंने सुना है कि-क´ुचुकी बाभ्रव्य भी सिंहल के राजा के मन्त्री वसुभूति के साथ किसी प्रकार समुद्र से निकल कर कोशल के नाश के लिये गये हुये रूमण्वान् से मिल गया है। तो इस प्रकार लगभग सम्पन्न होता हुआ भी प्रभु का कार्य मुझे सन्तोष नहीं देता। सेवक होना, निश्चय ही, बड़ा कष्टकारी है। क्योंकि -

स्वामी की वृद्धि के निमित्तभूत, दैव के द्वारा इस प्रकार हाथ का सहारा दिये गये इस उद्योग के विषय में, सचमुच, सफलता में कोई सन्देह नहीं है। तब भी, अपनी इच्छानुसार आचरण करने वाला मैं स्वामी से डरा हुआ ही हूँ।7।।

(नैपथ्ये कलकलः)

यौगन्धरायणः - (आकर्ण्य) अये, यथायमभिहन्यमानमृदुमृदङ्गानुगतसंगीतमधुरः पुरः पौराणां समुच्चरति चर्चरीध्वनिस्तथा तर्कयामि यदेनं मदनमहमहीयांसं पुरजनप्रमोदमत्रलोकयितुं प्रासादाभिमुख प्रस्थितो देव इति। (ऊर्ध्वमवलोक्य) अये, कथमधिरूढ एव देवः प्रासादम्। य एषः -

विश्रान्तविग्रहकथो रतिमाञ्जनस्य

चित्ते वसन्प्रियवसन्तक एव साक्षात्।

पर्युत्सुको निजमहोत्सवदर्शनाय

वत्सेश्वरः कुसुमचाप इवाभ्युपैति।।8।।

तद्यावदृहं गत्वा कार्यशेषं चिन्तयामि।

(इति निष्क्रान्तः)

यौगन्धरायण - (सुनकर) अरे ! जैसे कि यह सामने पीटे जाते हुए मृदुल शब्द करने वाले मृदंगों के साथ गाये गये गीतों के कारण मनोहारी, नागरिकों की करतलध्वनि बढ़ रही है, उससे सोचता हूँ कि देव मदनमहोत्सव के कारण बढ़े हुए, नगर निवासियों के उल्लास को देखने के लिए राजमहल की ओर चल पड़े हैं। (ऊपर की ओर देखकर) अरे कैसे ! महाराज राजमहल पर चढ़ भी गये। जो यह - अनुरागवान्, प्रजा के हृदय में समाये हुए, वत्स देश के महाराज हैं, जिनकी युद्ध की बात शान्त हो गई है और जिन्हें वसन्तक प्रिय है, वह, मानो, साक्षात् कामदेव ही-जिसके शरीर की कथा समाप्त हो गई है, जिसकी रति नाम की पत्नी है, जो लोगों के चित्त में वास करता है और वसन्त ऋतु जिसका सखा है-अपने महोत्सव (मदन महोत्सव) को देखने के लिये लालायित होकर सामने आ रहे हैं। तो अब घर जाकर शेष कार्य की चिन्ता करूं।।8।। (बाहर चला जाता है)

इति विष्कम्भकः

(ततः प्रविशत्यासनस्थो गृहीतवसन्तोत्सववेषो राजा विदूषकश्च)

(नेपथ्य में कलकल ध्वनि)

(आसन पर स्थित और वसन्तोत्सव का वेष धारण किये राजा विदूषक के साथ प्रवेश करता है।)

विष्कम्भक समाप्त

राजा - (सहर्षमवलोक्य) सखे वसन्तक !

राजा - (हर्ष के साथ देखकर) मित्र वसन्तक।

विदूषकः - आणवेदु भवं। (आज्ञापयतु भवान्।)

विदूषक - आज्ञा कीजिये।

राजा -

राज्यं निर्जितशत्रु योग्यसचिवे न्यस्तः समस्तो भरः

सम्यक्पालनलालिताः प्रशमिताशेषोपसर्गाः प्रजाः।

प्रद्योतस्य सुता वसन्तसमयस्त्वं चेति नाम्ना धृतिं

कामः काममुपैत्वयं मम पुनर्मन्ये महानुत्सवः।। 9।।

राजा - (यह) राज्य है, जिसमें सब शत्रुओं को जीत लिया है; सारा भार योग्य मन्त्री पर रख दिया है; प्रजायें, जिनके सब उपद्रव शान्त कर दिये गये हैं, भली भाँति रक्षा द्वारा वृद्धि को प्राप्त है, प्रद्योत की पुत्री (वासवदत्ता जैसे पत्नी) है; वसन्त ऋतु का समय है और तुम (अनुकूल मित्र) हो, इससे कामदेव

(मदनमहोत्सव) नाम के कारण सन्तोष भले ही पा लेवे, लेकिन मैं समझता हूँ कि यह महान् उत्सव मेरा (ही) है।।9।।

विदूषकः -(सहर्षम्) भो वयस्य, एवं न्विदम्। अहं पुनर्जानामि न भवतो न कामदेवस्य ममैवैकस्य ब्राह्मणस्यायं मदनमहोत्सवो यस्य प्रियवयस्येनैवं मन्त्र्यते। तत्किमनेन। प्रेक्षस्व तावदेतस्यधुमत्तकामिनीजनस्वयंग्राहगृहीतशृङ्गकजलप्रहारनत्यन्नागरजनजनितकौतूहलस्य समन्ततः शब्दायमानमर्दलोद्दामचर्चरीशब्दमुखररथ्यामुखशोभिनः प्रकीर्णपटवासपुञ्जपिञ्जरी कृतदश दिशामुखस्य सश्रीकतां मदनमहोत्सवस्य।

विदूषक - (हर्ष के साथ) हे मित्र, हाँ ऐसा हो सकता है। लेकिन मुझे तो लगता है कि यह मदन महोत्सव न आपका है और न ही कामदेव का, बल्कि अकेले मुझ ब्राह्मण का है, जिसका प्रिय मित्र इस प्रकार कह रहा है। (देखकर) खैर, इससे क्या ? मद्य से मस्त सुन्दरियों द्वारा स्वयं पकड़े गये और पिचकारियों के जल के प्रहार से नाचते हुए नगर निवासियों द्वारा कुतूहल उत्पन्न करने वाले, चारों ओर बजते हुए मृदंगों के कारण प्रचण्ड चर्चरी ध्वनि से गूँजती हुई सड़कों के मोड़ों से शोभा देने वाले और फैंके गये गुलाल के पुञ्ज से दसों दिशाओं के मुखों को पीला कर देने वाले इस मदन-महोत्सव की शोभा को तो देखो।

राजा - (समन्तादवलोक्य) अहो, परां कोटिमधिरोहति प्रमोदः पौराणाम्।

तथा हि -

कीर्णैः पिष्टातकौघैः कृतदिवसमुखैः कुङ्कुमक्षोदगौरै-
र्हेमालङ्कारभाभिर्भरनमितशिखैः शेखरैः कैङ्किरातैः।
एषा वेषाभिलक्ष्यस्वविभवविजिताशेषवित्तेशकोशा
कौशाम्बी शांतकुम्भद्रवखचितजनेवैकपीता विभाति।।10।।

अपि च

धारायन्त्रविमुक्तसंततपयःपूरप्लुते सर्वतः
सद्यः सान्द्रविमर्दकर्दमकृतक्रीडे क्षणं प्राङ्गणे।
उद्दामप्रमदाकपोलनिपतत्सिन्दूररागारुणैः
सैन्दूरीक्रियते जनेन चरणन्यासैः पुरः कुट्टिमम्।।11।।

राजा - (चारों ओर देखकर) आहा ! नागरिकों का उल्लास चरम-सीमा को पहुँच रहा है। क्योंकिकेसर के चूर्ण से पीले, (अतः) (दिन को) उषाकाल में परिणत करने वाले, फेंके गये, सुगन्धित चूर्ण की राशियों से, स्वर्ण के आभूषणों की कान्तियों से और भार से सिरों को झुका देने वाले अशोक पुष्पों के शिरो-भूषणों से यह कौशाम्बी (नगरी), जिसने (नागरिकों के) वेष से प्रकट होने वाले अपने ऐश्वर्य से कुबेर के सम्पूर्ण कोश को जीत लिया है और जिसके निवासी जन, मानो, स्वर्ण के रस से लिप्त हैं, पीली ही पीली दीखती है।।10।।

सब ओर पिचकारियों से छूटती हुई अविरल जल-धाराओं से भरे हुए और तभी अत्यधिक विमर्दन से (उत्पन्न) पङ्क में की गई क्रीड़ा वाले आंगन में लोगों द्वारा अत्यधिक मत्त स्त्रियों के कपोलों से

गिरते हुए सिन्दूर के वर्ण से लाल पद-चिह्नों से वह सामने फर्शक्षण भर सिन्दूर वर्ण का किया जा रहा है।।11।।

विदूषकः - (विलोक्य) एतदपि तावत्सुविदग्धजनभरितशृंगकजलप्रहारमुक्तसीत्कारमनोहरं वारविलासिनीजनविलसितमालोकयतु प्रियवयस्यः।

विदूषक - (देखकर) प्रिय मित्र वाराङ्गनाओं के विलास को तो देखो जो कि चतुर जनों द्वारा भरी हुई पिचकारी के जल के प्रहार के कारण छोड़ी गई सी-सी की ध्वनि से मनोहारी है।

राजा - (विलोक्य) वयस्य, सम्यग्दृष्टं भवता। कुतः -

अस्मिन्प्रकीर्णपटवासकृतान्धकारे
दृष्टो मनाङ्मणिविभूषणरश्मिजालैः।
पातालमुद्यतफणाकृतिशृङ्गकोऽयं
मामद्य संस्मरयतीह भुजङ्गलोकः।।12।।

राजा - (देखकर) मित्र, तुमने खूब देखा ! क्योंकि -

बिखेरे गये गुलाल से किये गये इस अन्धकार में मणि जटित आभूषणों की किरण-समूह से कुछ-कुछ दीख पड़ने वाला, (सर्प के) फण के आकार वाली पिचकारी उठाये हुए, यह कामी जनों का समूह (अन्य अर्थ-सर्पों का समूह) आज मुझे पाताल की याद दिला रहा है।।12।।

विदूषकः - (विलोक्य) भो वयस्वय, प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व। एषा खलु मदनिका मदनवशविसंष्ठुलं वसन्ताभिनयं नृत्यन्ती चूतलतिकया सहेत एवागच्छति।

विदूषक - (देखकर) ऐ मित्र, देखो, देखो। यह मदनिका काम-पीड़ित होने से लड़खड़ाते हुए वसन्त का अभिनय करती हुई चूतलतिका के साथ इधर ही आ रही है।

(ततः प्रविशतो मदनलीलां नाटयन्त्यौ द्विपदीखण्डं गायन्त्यौ चेट्यौ)

चेट्यौ -

कुसुमायुधप्रियदूतको मुकुलायितबहुचूतकः।
शिथिलितमानग्रहणको वाति दक्षिणपवनकः।।13।।

(मदनलीला का नाट्य करती हुई तथा द्विपदी-खण्ड गाती हुई दो चेटी प्रवेश करती हैं)।

दोनों चेटी -

कामदेव का प्रिय दूत, अनेक आम्र वृक्षों को मुकुलित करने वाला, (मानिनी सुन्दरियों के) प्रणय-कलह को शिथिल करने वाला, दक्षिण पवन बह रहा है।।13।।

विकसितबकुलाशोककः काङ्क्षितप्रियजनमेलकः।
प्रतिपालनासमर्थकस्ताम्यति युवतिसार्थकः।।14।।
इह प्रथमं मधुमासो जनस्य हृदयानि करोति मृदुलानि।
पश्चाद्विध्यति कामो लब्धप्रसरैः कुसुमबाणैः।।15।।

मौलसरी तथा अशोक को विकसित करने वाला, प्रिय जनों के साथ की इच्छा करने वाला, (प्रिय के आगमन की) प्रतीक्षा करने में असमर्थ युवतियों का समूह व्याकुल हो रहा है।।14।।

यहाँ (वसन्त आरम्भ होने पर) पहले वसन्त मास लोगों के हृदयों को कोमल कर देता है, (तब) बाद में, कामदेव अवसर पाए हुए पुष्प-बाणों से बींध देता है।।15।।

राजा - (निर्वर्ण्य सविस्मयम्) अहो निर्भरः क्रीडारसः परिजनस्य तथाहि -

स्रस्तः स्रग्दामशोभां त्यजति विरचितामाकुलः केशपाशः
क्षीबाया नूपुरौ च द्विगुणतरमिमौ क्रन्दतः पादलग्नौ।
व्यस्तः कम्पानुबन्धादनवरतमुरो हन्ति हारोऽयमस्याः
क्रीडन्त्याः पीडयेव स्तनभरविनमन्मध्यभङ्गानपेक्षम्।।16।।

राजा - (आश्चर्य से देखकर) आह ! सेवकों को (तो) क्रीड़ा का बड़ा आनन्द (आ रहा है)।

जैसे कि -मधु-पान से मत्त हुई (और) स्तनों के भार से झुकते हुए कटिभाग के टूटने की चिन्ता न करके नाचती हुई इस (सेविका) का खुला हुआ (अतः) बिखरा हुआ जूड़ा, मानो पीड़ा के कारण, किये गए पुष्प-मालाओं के प्रसाधन को छोड़ रहा है; ये पैरों में बंधे हुए दोनों नूपुर (मानो पीड़ा के कारण) और दुगना चिल्ला रहे हैं; कम्पन की निरन्तरता के कारण झूलता हुआ यह हार (मानो पीड़ा से) अनवरत छाती पीट रहा है।।16।।

विदूषकः - भो वयस्य, अहमप्येतासां मध्ये गत्वा नृत्यन् गायन् मदनमहोत्सवं मानयिष्यामि।

विदूषक - ए मित्र, मैं भी इन दोनों के बीच में जाकर नाचता-गाता मदन महोत्सव मनाऊँगा।

राजा - (सस्मितम्) वयस्य एवं क्रियताम्।

राजा - (मुस्कुराते हुए) मित्र, ऐसा (ही) करो।

उभे - हताश, न खलु एषा चर्चरी।

दोनों - (जोर से हंसकर) मूर्ख यह चर्चरी नहीं है।

विदूषकः - तत्किं खल्वेतत्।

विदूषक - तो, यह क्या है ?

मदनिका - द्विपदीखण्डं खल्वेतत्।

मदनिका - यह तो द्विपदी-खण्ड है।

विदूषकः - (सहर्षम्) किमेतेन खण्डेन मोदकाः क्रियते।

विदूषक - (हर्ष से) क्या इस खण्ड (= खाँड) से लड्डू बनाये जाते हैं ?

मदनिका - (विहस्य) नहि नहि पठ्यते खल्वेतत्।

मदनिका - नहीं, नहीं ! यह तो पढ़ी जाती है।

विदूषकः - (सविषादम्) यदि पठ्यते तदलं ममेतेन। वयस्यस्य सकाशमेव गमिष्यामि।

विदूषक - (विषाद से) यदि पढ़ी जाती है तो मेरे लिए इससे बस करो। मैं तो प्रिय मित्र के समीप ही जाता हूँ। (जाना चाहता है)

उभे - (हस्ते गृहीत्वा) एहि क्रीडामः। वसन्तक, कुत्र गच्छसि।

दोनों -आओ खेलें बसन्तक कहॉ जा रहे हो ।

विदूषकः - (हस्तमाकृष्य प्रपलाय्य राजानमुपसृत्य।) वयस्य नर्तितोऽस्मि। नहि नहि, क्रीडित्वा पलायितोऽस्मि।

विदूषक - (हाथ खींचकर, दौड़कर राजा के पास जाकर) प्रिय मित्र, मैं नाच लिया। ना, ना, खेलकर भाग आया।

राजा - साधु कृतम्।

राजा - अच्छा किया।

चूत0 - हञ्जे मदनिके चिरं खल्वावाभ्यां क्रीडितम्। तदेहि निवेदयावस्तावत् भर्त्र्याः संदेशं महाराजस्य।

चूतलतिका - सखी मदनिका, हम दोनों बहुत देर खेल लीं। तो आओ; अब महाराज को स्वामिनी का सन्देश निवेदन कर दें।

मदनिका - सखि, एवं कुर्वः।

मदनिका - सखी, ऐसा (ही) करें।

विदूषकः-(उत्थाय चेट्योर्मध्ये नृत्यन्) यöवानाज्ञापयति। भवति मदनिके भवति चूतलतिके। मामप्येतच्चर्चरिकं शिक्षयतम्।

विदूषक- (उठकर, चेटियों के बीच में नाचते हुए) श्रीमती मदनिका जी, श्रीमती चूतलतिका जी, मुझे भी यह चर्चरी सिखा दो।

चेट्यो- (परिक्रम्योपसृत्य च) (इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयन्त्यौ) जयतु जयतु भर्ता। भर्तः, देव्याज्ञापयति। नहि नहि। विज्ञापयति।

दोनों चेटियाँ - (घूमकर और समीप जाकर) स्वामी की जय हो। स्वामी, महारानी आज्ञा देती हैं ..... (यह आधा कह कर लज्जा का नाट्य करती हुई) ना, ना, निवेदन करती हैं।

राजा-(विहस्य सादरम्) मदनिके, नन्वाज्ञापयतीत्येव रमणीयम्। विशेषतोऽद्य मदनमहोत्सवे। तत्कथय, किमाज्ञापयति देवी।

राजा - (हंसकर, आदर से) मदनिका, 'आज्ञा देती हैं' बस यही सुन्दर है, विशेषकर आज मदन-महोत्सव में। तब बतलाओ महारानी क्या आज्ञा देती हैं।

विदूषकः - आः दास्याः पुत्रि, किं देव्याज्ञापयति।

विदूषक - ए, दासी की बेटी, क्या देवी आज्ञा दे रही हैं।

चेट्यो -एवं देवी विज्ञापयति-अद्य खलु मया मकरन्दोद्यानं गत्वा रक्ताशोकपादपतलञ्स्थापितस्य भगवतः कुसुमायुधस्य पूजा निर्वर्तयितव्या। तत्र आर्यपुत्रेण संनिहितेन भवितव्यमिति।

दोनों चेटी - देवी यह निवेदन करती हैं - कि आज मुझे मकरन्द नाम के उद्यान में जाकर रक्ताशोक वृक्ष के नीचे प्रतिष्ठापित भगवान् कामदेव की पूजा करनी है। वहाँ आर्यपुत्र उपस्थित होवें।

राजा - (सानन्दम्) वयस्य ननु वक्तव्यमुत्सवादुत्सवान्तरमापतितमिति।

राजा - (आनन्द के साथ) प्रिय मित्र, अब तो यह कहना चाहिए कि एक उत्सव के पश्चात् दूसरा उत्सव आ गया।

विदूषकः - भो वयस्य, तस्मादुत्तिष्ठ। तत्रैव गच्छावः। येन तत्र गतस्य ममापि ब्राह्मणस्य स्वस्तिवाचनं किमपि भविष्यतीति।

विदूषक - हे प्रिय मित्र, तब उठो। वहीं चलें, क्योंकि वहाँ जाने पर मुझ ब्राह्मण का भी कुछ स्वस्तिवाचन हो जायेगा।

राजा - मदनिके, गम्यतां देव्यै निवेदयितुमयमहमागत एव मकरन्दोद्यानमिति।

राजा - मदनिका, जाओ, महारानी से निवेदन करो कि बस मैं यह मकरन्द उद्यान में आ ही गया।

चेट्यो - इति निष्क्रान्ते। यर्ताऽऽज्ञापयति।

दोनों चेटी - जो स्वामी आज्ञा दें। (यह कहकर चली जाती हैं)

राजा - उभौ प्रासादावतरणं नाटयतः। वयस्य, आदेशय मकरन्दोद्यानस्य मार्गम्।

राजा - प्रिय मित्र, आओ। नीचे चलें। (दोनों महल से उतरने का अभिनय करते हैं) प्रिय मित्र, मकरन्द उद्यान का मार्ग बतलाओ।

विदूषकः - यद्भवानाज्ञापयति। एत्वेतु भवान्।

विदूषक - जो आप आज्ञा देवें। चलिये, चलिये।

इति परिक्रामतः)(दोनों घूमते हैं)

विदूषकः - (अग्रतोऽवलोक्य) भौ एतत्तन्मकरन्दोद्यानम्। तदेहि। प्रविशावः।

विदूषक - (आगे देखकर) अरे, यह वह मकरन्द उद्यान है। तो आओ, अन्दर चलें।

(इति प्रविशतः)

विदूषकः - (अवलोक्य सविस्मयम्) भो वयस्य प्रेक्षस्व। एतत् खलु तन्मलयमारुतान्दोलन प्रफुल्लत्सहकार मञ्जरीरेणुपटलप्रतिबद्धपटवितानं मत्तमधुकरमुक्तझङ्कारमिलित मधुरकोकिलारावसंगीतश्रुतिसुखं तावगमनदर्शितादरमिव मकरन्दोद्यानं लक्ष्यते। तत्प्रेक्षतां भवान्।(दोनों प्रवेश करते हैं)

विदूषक - (देखकर, आश्चर्य से) ए प्रिय मित्र, देखो, देखो। यह मकरन्द उद्यान, जिसमें मलय की वायु द्वारा झकझोर से खिलते हुए आम के बौर के पराग-समूह से शामियाना ताना गया है और जो मत्त भौरों से की गई झंकार से मिली हुई कोयलों की मीठी कूक के संगीत से श्रोत्रों को सुखदायी है, मानो, तुम्हारे आने पर आदर दिखलाता हुआ प्रतीत होता है। इसलिये आप देखें।

राजा - (समन्तादवलोक्य) अहो रम्यता मकरन्दोद्यानस्य। इह हि -

उद्यद्विद्रुमकान्तिभिः किसलयैस्ताम्रां त्विषं बिभ्रतो
भृङ्गालीविरुतैः कलैरविशदव्याहारलीलाभृतः।
घूर्णन्तो मलयानिलाहतिचलैः शाखासमूहैर्मुहु -
भ्रान्ति प्राप्य मधुप्रसङ्गमधुना मत्ता इवामी द्रुमाः।।17।।

अपि च

मूले गण्डूषसेकासव इव बकुलैर्वास्यते पुष्पवृष्ट्या।
मध्वाताम्रे तरुण्या मुखशशिनि चिराच्चम्पकान्यद्य भान्ति।

आकर्ण्याशोकपादाहतिषु च रणतां निर्भरं नूपुराणां
झङ्कारस्यानुगीतैरनुगणनयिवारभ्यते भृङ्गसार्थैः।।18।।

राजा - (चारों ओर देखकर) आ ! हा ! मकरन्द उद्यान की रमणीयता (आश्चर्यकारी है)। क्योंकि यहाँ - अब वसन्त ऋतु के संपर्क (अन्य अर्थ-मद्य के संपर्क) को पाकर उगते हुए मूंगों की कान्ति वाले नूतन पल्लवों से लाल कान्ति को धारण करते हुए, मधुर भ्रमर-माला की गुंजार से अस्पष्ट प्रलाप की चेष्टा को धारण करने वाले (और) मलय-वायु के आघात से चंचल शाखाओं के समूहों से बार-बार झूमते हुए, ये वृक्ष, मानो, मत्त-से प्रतीत होते हैं।।17।।

और भी -

मौलसरी के वृक्ष जड़ में मुंह में भर-भरकर सींचे गये मद्य को पुष्प वृष्टि से, मानो, सुगन्धित कर रहे हैं, सुन्दरी युवति के मुखरूपी चन्द्रमा के मद्य से आरक्त होने पर चिर काल बाद आज चम्पा के पुष्प शोभित हो रहे हैं और भ्रमरों के समूह (युवतियों के) अशोक वृक्षों को पैर से ताडन करने में जोर से बजते हुए नूपुरों की झंकार को सुनकर किये गये अपने गुंजारों से, मानो, (युवतियों के नूपुरों की झंकार को) गुनगुना रहे हैं।।18।।

विदूषकः - (श्रुत्वा) भो वयस्य, नैते मधुकरा नूपुरशब्दमनुहरन्ति। नूपुरशब्द एवैष देव्याः परिजनस्य।

विदूषक - (सुनकर) हे मित्र, यह भौंरे नूपुर की ध्वनि का अनुकरण नहीं कर रहे, (अपितु) यह महारानी की दासियों के नूपुरों की ध्वनि ही है।

राजा - वयस्य सम्यगुपलक्षितम्।

(ततः प्रविशति वासवदत्ता, काञ्चनमाला, पूजोपकरणहस्ता सागरिका, विभवतश्च परिवारः)

राजा - मित्र, (तुमने) ठीक पहचाना।

(तब वासवदत्ता, काञ्चनमाला हाथ में पूजा की सामग्री लिये सागरिका और श्रेणी के अनुसार सेवक-समूह प्रवेश करता है)

वासवदत्ता - हञ्जे काञ्चनमाले, आदेशय मे मकरन्दोद्यानस्य मार्गम्।

वासवदत्ता - सखी काञ्चनमाला, मुझे मकरन्द उद्यान का मार्ग बतलाओ।

काञ्च - एत्वेतु भर्त्री।

काञ्चनमाला - स्वामिनी चलें, चले।

वास0 - (परिक्रम्य) हञ्जे काञ्चनमाले, अथ कियद्दूरे स रक्ताशोकपादपो यत्र मया भगवतः कुसुमायुधस्य पूजा निर्वर्तयितव्या।

वासवदत्ता - (घूमकर) सखी काञ्चनमाला, अब वह रक्ताशोक वृक्ष कितनी दूर है, जहाँ मुझे भगवान् कामदेव की पूजा करनी है।

काञ्च0 - भर्त्रि, आसन्न एव। किं न प्रेक्षते भर्त्री। इयं खलु सा निरन्तरोद्भिन्नकुसुमशोभिनी भर्त्र्या परिगृहीता माधवीलता। एषाप्यपरा नवमालिका लता यस्या आकालकुसुमसमुद्रमश्रद्धालुना भर्त्रानुदिनमायास्यत

काञ्चनमाला - स्वामिनी, आ ही गया। क्या स्वामिनी देख नहीं रहीं ? निश्चय ही, यह वह घने खिले पुष्पों से शोभा देने वाली, स्वामिनी द्वारा अपनाई गई माधवी लता है। और यह दूसरी नवमालिका लता है, जिसके बिना ऋतु पुष्पोद्गम में विश्वास करने वाले स्वामी प्रतिदिन स्वयं को कष्ट दे रहे हैं।
आत्मा। तदेनामतिक्रम्य दृश्यत एव स रक्ताशोकपादपो यत्र देवी पूजां निर्वर्तयिष्यति।
तो इसे पार करके वह रक्ताशोक वृक्ष दीख ही पड़ रहा है, जहाँ देवी पूजा करेंगी।
वास0 - तदेहि तत्रैव लघु गच्छामः।
वासवदत्ता - तो आओ। शीघ्र वहीं चलें।
काञ्च0 - एत्वतु भर्त्री।
काञ्चनमाला - स्वामिनी चलिये, चलिये।
(सर्वाः परिक्रामन्ति)(सब घूमती हैं)
काञ्च 0 - भर्त्रि, अयं खलु स रक्ताशोकपादपो यत्र देवी पूजा निर्वर्तयिष्यति।
काञ्चनमाला - स्वामिनी, यही वह रक्ताशोक वृक्ष है, जहाँ महारानी पूजा करेंगी।
वास0 - तेन हि मे पूजानिमित्तान्युपकरणान्युपानय।
वासवदत्ता - तब मुझे पूजा के लिये सामग्री दो।
साग0 - (उपसृत्य) भर्त्रि, एतत्सर्वं सज्जम्।
सागरिका - (समीप जाकर) स्वामिनी, यह सब तैयार है।
वास0 - (निरूप्यात्मगतम्) अहो प्रमादः परिजनस्य। यस्यैव दर्शनपथात्प्रयत्नेन रक्ष्यते तस्यैव दृष्टिगोचरे पतिता भवेत्।भवतु। एवं तावöणिष्यामि। हञ्जे सागरिके, कस्मात्त्वमद्य मदनमहोत्सवपराधीने परिजने सारिकामुज्झित्वेहागता। तत्तत्रैव लघु गच्छ। एतदपि सर्वं पूजोपकरणं काञ्चनमालाया हस्ते समर्पय।
वासवदत्ता - (देखकर मन ही मन) ओह ! सेवकों की लापरवाही ! जिसके ही दृष्टि-पथ से प्रयत्नपूर्वक बचाई जा रही है, उसकी ही दृष्टि में पड़ जायेगी। अच्छा, तब ऐसे कहूँगी। (प्रकट में) सखी सागरिका, आज सेवकों के मदन-महोत्सव से बे-सुध होते हुए तू सारिका को छोड़कर यहाँ कैसे आ गई। जल्दी से वहीं पहुँच। और इस सब पूजा की सामग्री को काञ्चनमाला के हाथ में सौंप दे।
साग0 -(इति तथा कृत्वा कतिचित्पदानि गत्वा आत्मगतम्) (इति कुसुमावचयं नाटयति)। यöर्त्याज्ञापयति। सारिका मया पुनः सुसङ्गताया हस्ते समर्पिता। एतदप्यस्ति में प्रेक्षितुं कौतूहलं किं यथा तातस्यान्तःपुरे भगवाननङ्गोऽर्च्यते, अत्रापि तथैव किमन्यथेति। तस्मादलक्षिता भूत्वा प्रेक्षिष्ये। तद्यावदिह पूजासमयो भवित तावदहमपि भगवन्तमनङ्गमेव पूजयितुं कुसुमान्यवचेष्यामि।
सागरिका - जो स्वामिनी आज्ञा दें। (वैसा ही करके और कुछ पद जाकर, स्वगत) सारिका तो मैंने सुसङ्गता के हाथ सौंप दी है। फिर, मुझे यह देखने की उत्सुकता है कि पिता के अन्तःपुर में भगवान् कामदेव की जैसे पूजा होती है, क्या यहाँ भी वैसे ही होती है या अन्यथा। इसलिये छिपकर देखूँगी। (घूमकर और देखकर) जब तक यहाँ पूजा का समय होवे, तब तक मैं भी भगवान् कामदेव ही की पूजा के लिये पुष्प चुनती हूँ। (पुष्प चुनने का नाट्य करती है।)

वास0 - काञ्चनमाले, प्रतिष्ठापयाशोकमूले भगवन्तं प्रद्युम्नम्।

वासवदत्ता - काञ्चनमाला, अशोक की मूल में भगवान् कामदेव की प्रतिष्ठापना करो।

काञ्च - (इति तथा करोति)। यत्र्याज्ञापयति

काञ्चनमाला - जो स्वामिनी की आज्ञा हो। (वैसा करती है)

विदू0 - भो वयस्य, यथा विश्रान्तो नूपुरशब्दस्तथा तर्कयाभ्यागता देव्यशोकमूलमिति।

विदूषक - हे मित्र, जैसे कि नूपुरों की ध्वनि शांत हो गई है, उससे समझता हूँ कि महारानी अशोक की मूल पर पहुँच गई है।

राजा - (अवलोक्य) वयस्य, सम्यगवधारितम्। पश्येयं देवी या किलषा

कुसुमसुकुमारमूर्तिर्दधती नियमेन तनुतरं मध्यम्
आभाति मकरकेतोः पार्श्वस्था चापयष्टिरिव।।19।।

तदेहि। उपसर्पावः। (उपसृत्य) प्रिये वासवदत्ते।

राजा - (देखकर) मित्र, ठीक समझा। देखो, यह महारानी है जो यह -

पुष्प के समान कोमल शरीर वाली (और) व्रत-उपवास जो क्षीणतर कटि को धारण करती हुई कामदेव के समीप में स्थित, मानो धनुर्यष्टि सी लगती है।।19।।

तो आओ। पास चलें। (समीप जाकर) प्रिय वासवदत्ता।

वास0 - (विलोक्य) कथमार्यपुत्रः। जयतु जयत्वार्यपुत्रः। एतदासनं अत्रोपविशत्वार्यपुत्रः।

(राजा नाट्येनोपविशति)

वासवदत्ता - (देखकर) कैसे ! आर्यपुत्र !! आर्यपुत्र की जय हो, जय हो। (लीजिये) यह आसन। आर्यपुत्र इस पर बैठें।

(राजा बैठने का नाट्य करता है)

काञ्च 0 - भर्त्रि, स्वहस्तदत्तैः कुङ्कुमचन्दनस्थासकैः शोभितं कृत्वा रक्ताशोकपादपमर्च्यतां भगवान्प्रद्युम्नः।

काञ्चनमाला - स्वामिनी, रक्ताशोक वृक्ष को अपने हाथ लगाये गये केसर के लेप से भूषित करके भगवान् प्रद्युम्न की पूजी कीजिये।

वास0 - (उपनय मे पूजोपकरणानि।) काञ्चनमालोपनयति। वासवदत्ता तथा करोति।

वासवदत्ता - पूजा की सामग्री मेरे पास लाओ।

(काञ्चनमाला समीप ले जाती है और वासवदत्ता वैसा करती है)

राजा - प्रिये

प्रत्यग्रमज्जनविशेषविविक्तकान्तिः
कौसुम्भरागरुचिरस्फुरदंशुकान्ता।
विभ्राजसे मकरकेतनमर्चयन्ती
बालप्रवालविटपिप्रभवा लतेव।।20।।

अपि च

स्पृष्टस्त्वयैष दयिते स्मरपूजाव्यापृतेन हस्तेन।
उद्भिन्नापरमृदुतरकिसलय इव लक्ष्यतेऽशोकः।।21।।

अपि च

अनङ्गोऽयमनङ्गत्वमद्य निन्दिष्यति ध्रुवम्।
यदनेन न संप्राप्तः पाणिस्पर्शोत्सवस्तव।।22।।

राजा - प्यारी,

सद्यःस्नान से विशेष निर्मल कान्ति वाली, कुसुम्भी रंग (में रंगने) से सुन्दर चमकते हुए आंचल वाली, तुम कामदेव की पूजा करती हुई ताजे जलसिञ्चन से विशेष निर्मल कान्ति वाली, कुसुम्भ के पुष्प की-सी लाली से सुन्दर एवं चमचमाती हुई किरणों से रमणीय, नूतन-पल्लवों वाले वृक्ष पर उगी हुई, लता के समान शोभा दे रही हो।।20।।और भी -

प्रिये, तुम्हारे द्वारा कामदेव की पूजा में संलग्न हाथ से स्पर्श किया गया यह अशोक

वृक्ष (ऐसा) लगता है कि जिसमें, मानो, दूसरा अतिकोमल नूतन-पल्लव फूट आया है।।21।।

और भी -

आज, निश्चित ही, यह कामदेव (अपनी) शरीर हीनता की निन्दा करेगा कि यह तेरे हाथ के स्पर्श के आनन्द को न प्राप्त हुआ।।22।।

काञ्चनमाला - भर्त्रि, अर्चितो भगवान् प्रद्युम्नः। तत्कुरु भर्तुरुचितं पूजासत्कारम्।

काञ्चनमाला - स्वामिनी, भगवान् प्रद्युम्न की पूजा कर ली। अब स्वामी का योग्य पूजा-सत्कार कीजिये।

वासवदत्ता - तेन ह्य्युपनय में कुसुमानि विलेपनं च।

वासवदत्ता - तो पुष्प और अङ्गराग मेरे पास लाओ।

काञ्चनमाला - भर्त्रि, एतत् सर्व सज्जम्।

(वासवदत्ता नाट्येन राजानं-पूजयति)

काञ्चनमाला - स्वामिनी, यह सब तैयार है।

(वासवदत्ता राजा की पूजा का नाट्य करती है)

साग0 - (गृहीतकुसुमा) तथा कृत्वा विलोक्य सविस्मयम्। कुसुमानि प्रक्षिप्य। इति प्रणमति। (इति कतिचित् पदानि गच्छति) हा धिक् हा धिक्। कथं कुसुमलोभोत्क्षिप्तहृदयातिचिरमेव मया कृतम्। तदनेन सिन्धुवारविटपेनापवारितशरीरा भूत्वा प्रेक्षे। कथं प्रत्यक्ष एव भगवान् कुसुमायुध इह पूजां प्रतीच्छति। अस्माकं तातस्यान्तःपुरे पुनश्चित्रगतोऽर्च्यते। तदहमप्येभिः कुसुमैरिह स्थितैव भगवन्तं कुसुमायुधं पूजयिष्ये। नमस्ते भगवन् कुसुमायुध। अमोघदर्शनो मे भविष्यसि। दृष्टं यद् द्रष्टव्यम्। तद्यावन्न कोऽपि मां प्रेक्षते तावदेव गमिष्यामि।

सागरिका - (पुष्प लिए हुए) हाय धिक्कार ! हाय धिक्कार !! पुष्पों के लोभ से आकृष्ट हृदय होकर क्यों मैंने बहुत देर कर दी ? तो अब इस सिन्धुवार के झुरमुट में शरीर छिपाकर देखती हूँ। (वैसा करके और देखकर, आश्चर्य से) यह क्या ? यहाँ भगवान् कामदेव प्रत्यक्ष होकर पूजा ग्रहण करता है ! हमारे

पिता के अन्तःपुर में तो चित्र में बना हुआ पूजा जाता है ! तो मैं भी यहाँ खड़ी रह कर ही इन पुष्पों से भगवान् कामदेव की पूजा करूँगी। (पुष्प फेंक कर) भगवान् कामदेव, तुम्हें प्रणाम। अब तुम मेरे लिये सफल दर्शन वाले होगे। (इस प्रकार प्रणाम करती है) जो देखना था (वह) देख लिया। इसलिये जब तक कोई मुझे नहीं देखता तब तक चली जाती हूँ। (यह कहकर कुछ पद जाती है)।

काञ्च 0 - आर्य वसन्तक, एहि सांप्रतं त्वमपि स्वस्तिवाचनं प्रतीच्छ।

(विदूषकः उपसर्पति)

काञ्चनमाला - आर्य वसन्तक, आओ। अब तुम भी स्वस्ति-वाचन ग्रहण करो।

(विदूषक समीप जाता है)

वास0 - (विलेपनकुसुमाभरणदानपूर्वकम्) (इत्यर्पयति) आर्य स्वस्तिवाचनं प्रतीच्छ।

वासवदत्ता - (अङ्गराग, पुष्प और आभूषण देते हुए) आर्य, स्वस्ति-वाचन लीजिये। (देती है)।

विदू0 - (सहर्ष गृहीत्वा) स्वस्ति भवत्यै।

विदूषक - (हर्ष से लेकर) आपका कल्याण (हो)।

(नेपथ्ये वैतालिकः पठति)

अस्तापास्तसमस्तभासि नभसः पारं प्रयाते रवा-
वास्थानीं समये समं नृपजनः सायंतने संपतन्।
संप्रत्येष सरोरुहद्यु तिमुषः पादांस्तवासेवितुं
प्रीत्युत्कर्षकृतो दृशामुदयनस्येन्दोरिवोद्वीक्षते।।23।।

(नेपथ्य में वैतालिक पाठ करता है)

समस्त कान्ति को अस्ताचल पर डाल चुके हुए सूर्य के आकाश के पार पहुँच जाने पर अब सायं काल के समय एक साथ राजसभा की ओर मिलकर जाता हुआ यह राज-समूह चन्द्रमा के समान नेत्रों को आनन्द का अतिशय उत्पन्न करने वाले तुझ उदयन के, कमलों की कान्ति को चुराने वाले, चरणों की सेवा करने के लिये ऊपर (मुख करके) प्रतीक्षा कर रहा है ।।23।।

साग0 -(श्रुत्वा सहर्षं परिवृत्य राजानं सस्पृहं पश्यन्ती) कथमयं स राजा उदयनो यस्याह तातेन दत्ता। तत्परप्रेषणदूषितमपि मे जीवितमेतस्य दर्शनेनेदानीं बहुमतं संवृत्तम्।

सागरिका -(सुनकर, हर्ष से मुड़कर राजा को चाह से देखती हुई) अरे ! यह राजा उदयन है जिसको पिता ने मुझे दिया था (लम्बा सांस लेकर) तब दूसरे की चाकरी से दूषित भी मेरा जीवन इसके दर्शन से अब आदरणीय हो गया।

राजा -कथमुत्सवापहृतचेतोभिरस्माभिः सन्ध्यातिक्रमोऽपि नोपलक्षितः। सम्प्रति परिणतमहः। देवि, पश्य-

उदयतटान्तरितमियं प्राची सूचयति दिङ्निशानाथम्।
परिपाण्डुना मुखेन प्रियमिव हृदयस्थितं रमणी।।24।।

देवि, तदुत्तिष्ठ। आवासाभ्यन्तरमेव प्रविशावः।

(सर्व उत्थाय परिक्रामन्ति)

राजा - अरे ! यह क्या ! उत्सव से लुभाये चित्त वाले हम ने सन्ध्या का बीत जाना भी न देखा ! अब दिन समाप्त हो गया है। देवी, देखो,

यह पूर्व दिशा उदयगिरि के तट से व्यवहित चन्द्रमा को, जैसी (विरहिणी) रमणी पीले मुख से हृदय में स्थित प्रिय को, सूचित कर रही है।।24।।

देवी, तब उठो। घर के अन्दर ही चलें।

(सब उठकर घूमते हैं)

सागरिका - (राजानं सस्पृहं दृष्टवा निःश्वस्य) (इति राजानं पश्यन्ती निष्क्रान्ता)। कथं प्रस्थिता देवी। भवतु। तदहमपि त्वरितं गमिष्यामि। हा धिक् हा धिक्। मन्दभागिन्य। मया प्रेक्षितुमपि चिरं न पारितोऽयं जनः।

सागरिका - ऐं, महारानी चल पड़ी। अच्छा, तब मैं भी जल्दी से जाती हूँ। (राजा को चाह से देखकर और गहरा सांस लेकर) हाय ! धिक्कार ! हाय !! धिक्कार !! मैं मन्दभाग्य इस जन को देर तक देख भी न सकी। (इस प्रकार राजा को देखती हुई निकल जाती है)।

राजा - (परिक्रामन्)

देवि त्वन्मुखपङ्कजेन शशिनः शोभातिरस्कारिणा
पश्याब्जानि विनिर्जितानि सहसा गच्छन्ति विच्छायताम्।
श्रुत्वा ते परिवारवारवनितागीतानि भृङ्गाङ्गना
लीयन्ते मुकुलान्तरेषु शनकैः सञ्जातलज्जा इव।।25।।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

राजा - (घूमता हुआ) देवी, देखो, चन्द्रमा की कान्ति को तिरस्कृत करने वाले तुम्हारे मुख रूपी कमल से जीते गये जलज अचानक कान्ति-हीन हो रहे हैं। तुम्हारी सेविका गणिकाओं के गीतों को सुनकर भ्रमराङ्गनाएँ, जिन्हें, मानो, लज्जा उत्पन्न हो रही है, धीरे-से कुड्मलों
के मध्य में छिप रही हैं।।25।।

(सभी निकल जाते हैं) इस प्रकार मदनमहोत्सव नाम का प्रथम अंक समाप्त हो जाता है ।

अभ्यास प्रश्न –

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिये -

1.नक्षत्रों का अधिपति कौन है -

क. सूर्य ख. चन्द्रमा ग. आकाश घ. पृथ्वी

2.वत्सराज किसकी उपाधि है ।

क. दुश्यन्त ख. शकार ग. उदयन घ. कोई नही

3.उदयन का प्रधानमन्त्री कौन है ।

क. विदूशक ख. विजयवर्मा ग. यौगन्धरायण घ. वसुभूति

4.कांचनमाला कौन है ।

क. परिचारिका ख. विदूशक की सहेली ग. सेविका घ. प्रतीहारी

5.ऐन्द्रजालिक है -

क. सेवक ख. मजदूर ग. द्वारपाल घ. जादूगर

6. द्विपदीखण्ड का गायन कौन करता है।

क. चेटी ख. कंचुकी ग. सागरिका घ. कोई नही

7.औत्सुक्येन में किस विभक्ति का प्रयोग है।

क. प्रथमा ख. तृतीया ग. चतुर्थी घ. पंचमी

8.कृतत्वरा का अर्थ -

क. शीघ्रता से किया हुआ ख. विलम्ब से किया हुआ

ग. आकांक्षायुक्त घ. घ. सम्भावना

9.निर्जितशत्रु शब्द का तात्पर्य है -

क. सभी शत्रुओं का जीता जाना ख. सभी शत्रु ग. शत्रुहीन घ. कोई नही

10.सुसंगता कौन है -

क. सागरिका की सखी ख. परिचारिका ग. दासी घ. प्रतिहारी

4.5 सारांश

मंगलाचरण से लेकर प्रथम अंक के वर्णन पर्यन्त इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि कौशाम्बी में वसन्तोत्सव की धूम में अन्तःपुर के सब सेवक और पुर के नर और नारी डूबे हुये है। मकरन्द उद्यान में महारानी वासवदता को कामदेव की पूजा सम्पन्न् करनी है। जिसमें वह महाराज उदयन की उपस्थिति भी चाहती है। राजा के मकरन्द उद्यान में पहुंचन पर वासवदत्ता कामदेव पूजन के लिये तत्पर होती है। परन्तु तभी उसे ज्ञात होता है कि सागरिका जिसे महारानी ने सारिका की रक्षा के व्याज से राजा की दृश्टि से बचाने के अभिप्राय से कामदेव पूजन के समय मकरन्द उद्यान से रखने का प्रयास किया था, पूजा की सामग्री लिये खड़ी है। रानी वासवदश्त्ता ने सागरिका को सारिका की देख रेख करने के लिये वहॉ से चले जाने की आज्ञा दी। परन्तु सागरिकास को कौशाम्बी में काम पूजन देखने का कुतूहल था, इसीलिये वह छिपकर काम पूजन देखने का निश्चय करती है और स्वयं काम - पूजन के लिये पुश्प चयन के लिये चली जाती है। रानी वासदत्ता काम पूजा करने के प्श्चात राजा उदयन की पूजा करती है। तभी पुश्प्प चुनकर सागरिका भी आ जाती है और उसे यह देखकर आश्चर्य होता है कि कौशाम्बी में चित्र में बनाये गये कामदेव की पूजा नहीं होती, अपितु देहधारी कामदेव की पूजा होती है। वह उदयन को कामदेव समझती है और स्वयं भी उसकी पूजा करती है। लेकिन तभी वैतालिक के द्वारा पढी गई स्तुति से सागरिका यह जान लेती है कि यह वही राजा उदयन है जिसक लिये उसके पिता ने उसे दिया था। वह राजा को साभिलाश होकर देखती है और उसे देखते रहने के अवसरों की सुलभता की आशा से अन्तःपुर में सेविका के जीवन को भी बहुत मानती है।अतः इस प्रकार की कथा वस्तु के माध्यम से आप पात्रों का चरित्र चित्रण करने और श्लोकों का भाव बताने में सक्षम हो सकेगें।

4.6 शब्दावली

1. निशानाथम- रात्रि के स्वामी
2. भ्रूभङ्गे-आखें टेढी करने पर
3. प्रभुतया - विश्वास पूर्वक
4.त्वन्मुखपंकजेन- तुम्हारे मुख पंकज के द्वारा

4.7 अभ्योस प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1- ख 2- ग 3- ग 4- ग 5- घ 6- क 7- ख 8- क 9- क 10- क

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. रत्नावली के प्रथम अंक का सारांश अपने शब्दों में लिखिए
2. रत्नावली के प्रथम अंक का साहित्यिक वैशिश्ट्य अपने शब्दों में लिखिए

इकाई .5 रत्नावली द्वितीय अंक सम्वाद एवं व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 श्लोक संख्या 1 से 21 तक अर्थ व्याख्या
5.4 सारांश
5.5 शब्दावली
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भग्रन्थ
5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

रत्नावली नाटिका के द्वितीय अंक के वर्णन की इस इकाई में आप सागरिका के कामसन्तप्त अवस्था का अध्ययन करेंगे। वह राजा के प्रति अनुरक्त है। उत्कण्ठावश केले के बागीचे में बैठकर उदयन का चित्र बनाती है जिसे सुसंगता आदि सखियों से छिपाती है। इसी के साथ द्वितीय अंक के वर्णन का प्रारम्भ होता है।

राजा के चित्र रहस्य को सुसंगता समझती है और सागरिका से उसका विवाद है इसी बीच अश्वशाला से छूटा हुआ बन्धन तोडकर भागा हुआ वानर अन्तःपुर में भगदड मचाता है। कदलीगृह में भी आता है किन्तु सागरिका आदि उसे देखकर तमालवीथि में छुप जाती है। सखियों का वार्तालाप निरन्तर चल रहा है। यही सब विदूषक के हर्श पूर्वक नृत्यकरने तक का वर्णन इस इकाई में आपके अध्ययनार्थ प्रस्तुत है।

अतः इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप सागरिका के मदनावस्था का वर्णन करते हुये द्वितीय अंक के नाटकीय वैशिश्ट्य को भली -‘ भॉति समझा सकेगें। साथ ही पात्रों का चरित्र चित्रण करते हुये श्लोकों की व्याख्या भी कर सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

रत्नावली नाटिका के द्वितीय अंक में सागरिका के मदनावस्था से सम्बन्धित वर्णन की इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- ❖ राजा के प्रति सागरिका किस प्रकार अनुरक्त है कि इसका वर्णन कर सकेगें।
- ❖ सागरिका और सुसंगता के वार्तालाप को बता सकेंगे।
- ❖ कदलीगृह की शोभा का वर्णन कर सकेंगे।
- ❖ विदूषक की मूर्खता को बता सकेंगे।
- ❖ मकरन्द उद्यान की विशेशता का वर्णन कर सकेगे।
- ❖ द्वितीय अंक के नाटकीय वैशिष्टय को समझा सकेगें।

5.3 श्लोक संख्या 1 से 21 तक अर्थ व्याख्या

द्वितीय अंक (ततः प्रविशति सारिकापञ्जव्यग्रहस्ता सुसंगता)

सुसङ्गता - हा धिक् ! हा धिक् ! कुत्रेदानीं मम हस्ते सारिकापञ्जरं निक्षिप्य गता मे प्रियसखी सागरिका। तत्कुत्र पुनरेनां प्रेक्षिष्ये। कथमेषा खलु निपुणित एवागच्छति। तद्यावदेनां प्रक्ष्यामि।(सारिका का पिंजड़ा हाथ में लिये सुसङ्गता आती है)

सुसङ्गता - हाय ! हाय !! मेरे हाथ में सारिका का पिंजड़ा सौंप कर अब मेरी प्यारी सखी सागरिका कहाँ चली गई ? अब फिर उसे कहाँ देखूं ? (आगे देखकर) हूँ, यह निपुणिका इधर ही आ रही है। तब उससे ही पूछूंगी।ततः प्रविशति निपुणिका)

निपुणिका - (सविस्मयम्) (इति परिक्रामति) आश्चर्यम् आश्चर्यम्। अनन्यसदृशः प्रभावो मन्ये देवतायाः। उपलब्धः खलु मया भर्तुर्वृत्तान्तः। तद्गत्वा भर्त्र्यै निवेदयिष्यामि।(निपुणिका प्रवेश करती है)
निपुणिका - (विस्मय से) आश्चर्य ! आश्चर्य !! मैं देवता का अद्भुत प्रभाव स्वीकार करती हूँ। मैंने स्वामी का वृत्तान्त पा लिया। अब जाकर स्वामिनी से कहे देती हूँ। (घूमती है)।
सुसङ्गता - (उपसृत्य) हला निपुणिके, कुत्रैदानी विस्मयोत्क्षिप्तहृदयेवेह स्थितां
मामवधीर्येतोऽतिक्रामसि।
सुसङ्गता - (समीप जाकर) सखी निपुणिका, तू अब कहाँ आश्चर्य से हर लिये गये हृदय वाली सी मुझ यहाँ खड़ी हुई की उपेक्षा करके इधर से निकली जा रही है।
निपुणिका - कथं सुसङ्गता। हला सुसङ्गते, सुष्ठु त्वया ज्ञातम्। एतत्खलु मम विस्मयस्य कारणम्। अद्य किल भर्ता श्रीपर्वतादागतस्य श्रीखण्डदासनामधेयस्य धार्मिकस्य सकाशादकालकुसुमसञ्जननदोहदं शिक्षित्वाऽऽत्मनः परिगृहीतां नवमालिकां कुसुमसमृद्धिशोभितां करिष्यतीति। तत्रेतद्वृत्तान्तं ज्ञातुं देव्या प्रेषितास्मि। त्वं पुनः कुत्र प्रस्थिता ?
निपुणिका - कैसे ! सुसङ्गता ! सखी सुसङ्गता, तुमने ठीक जान लिया। मेरे आश्चर्य का कारण यह है - सुना है कि आज स्वामी श्रीपर्वत से आये हुए, श्रीखण्डदास नाम के महात्मा से बिना ऋतु के पुष्प उत्पन्न करने वाले योग को सीखकर अपनी अपनाई हुई नवमालिका को पुष्पों की बहार से शोभित करेगा। यह वृत्तान्त जानने के लिये महारानी ने मुझे वहाँ भेजा था। लेकिन तू कहाँ चली ?
सुसङ्गता - प्रियसखीं सागरिकामन्वेष्टुम्।
सुसङ्गता - प्रिय सखी सागरिका को खोजने।
निपुणिका - सखि, दृष्टा मया ते प्रियसखी सागरिका गृहीतसमुद्गकचित्रफलकवर्तिका समुद्विग्नेव कदलीगृहं प्रविशन्ती। तद्गच्छ प्रियसखीम्। अहमपि देवीसकाशं गमिष्यामि। निपुणिका - सखी, मैंने तेरी प्रिय सखी सागरिका रंगों का डिब्बा, चित्रपट और कूंची लिये, परेशान-सी कदली-गृह में घुसती-देखी थी। तब तू प्रिय सखी के पास जा। मैं भी महारानी के पास जाती हूँ।
(इति निष्क्रान्ते) इति प्रवेशकः(दोनों निकल जाती हैं)प्रवेशक समाप्त
(ततः प्रविशति गृहीतचित्रफलकवर्तिका मदनावस्थां नाटयन्तौ सागरिका)
सागरिका - (निःश्वस्य)
हृदय, प्रसीद प्रसीद। किममुनायासमात्रफलकेन दुर्लभजनप्रार्थनानुबन्धेन। अन्यच्च, येनैव दृष्टेन त ईदृशः सन्तापो ननु वर्धते पुनरपि तमेव प्रेक्षितुमभिलषसीत्यहो ते मूढता। कथं चातिनृशंस जन्मतः प्रभृति सहसंवर्धितमिमं जनं परित्यज्य क्षगमात्रदर्शनपरिचितं जनमनुगच्छन्न लज्जसे। अथवा कस्तव दोषः। अनङ्गशरपतनभीतेन त्वयैवमद्य व्यवसितम्। भवतु। अनङ्ग तवादुपालष्स्ये। भगवन् कुसुमायुध, निर्जितसकलसुरासरो भुत्वा स्त्रीजनं प्रहरन् कथं न लज्जसे। अथवानङ्गोऽसि। सर्वथा मम मन्दभागिन्या अनेन दुर्निमित्तेनावश्यं मरणमेवोपस्थितम्। तद्यावदिह कोऽपि नागच्छति तावदालेख्यसमर्पितं तमभिमतं जनं प्रेक्ष्य यथासमीहितं करिष्यामि। यद्यपि मेऽतिसाध्वसेन

वेपतेऽयमतिमात्रमग्रहस्तस्तथापि तस्य जनस्यान्यो दर्शनोपायो नास्तीति यथातथाऽऽलिख्यैनं प्रेक्षिष्य।इति नाट्येन लिखति

(ततः प्रविशति सुसङ्गता)

तत्पश्चात् चित्रपट और वर्ण लिये, कामावस्था का नाट्य करती हुई सागरिका प्रवेश करती है)

सागरिका - (गहरा सांस लेकर) हृदय, प्रसन्न हो, प्रसन्न हो। इस दुर्लभ जन की अभिलाषा के हठ से, जिसका केवलमात्र फल दुःख है, क्या लाभ ? और फिर, जिसके देखने मात्र से तुझे इतना सन्ताप बढ़ रहा है, फिर भी तू उसे ही देखने की अभिलाषा कर रहा है। आश्चर्य है तेरी मूढता ! और अतिक्रूर, जन्म से लेकर साथ बड़े हुये इस जन को छोड़कर क्षण भर के दर्शन से परिचित जन का अनुगमन करते तू लज्जित क्यों नहीं होता ? अथवा तेरा क्या दोष ? कामदेव के बाण के पड़ने से आशङ्कित हुये तूने आज ऐसा किया है। (आँसू लाकर) अच्छा, तब कामदेव को ही उपालम्भ दूंगी। (हाथ जोड़ कर) भगवान् कामदेव, सब सुर एवं असुरों को जीतने वाले होकर भी तुम स्त्री जन पर प्रहार करते हुए लजाते क्यों नहीं हो ? (सोच कर) या (ठीक है), तुम शरीर-हीन हो। (गहरा सांस लेकर) इस अपशकुन के कारण निश्चित ही मुझ मन्दभागिनी की मृत्यु आ गई है। (चित्रपट को देखकर) तो जब तक कोई यहाँ नहीं आता, तब तक चित्र में लिखित इस अभीष्ट जन को देखकर इच्छानुसार करूंगी। (संभल कर एकाग्र मन होकर चित्रपट उठाने का नाट्य करके गहरा सांस लेकर) यद्यपि अधिक घबराहट से मेरी अंगुलियाँ बहुत काँप रही हैं, फिर भी इस जन को देखने का कोई अन्य उपाय नहीं है। इसलिये जैसा-तैसा चित्रित करके इसे देखूँगी। (चित्र बनाने का नाट्य करती है)।

(तत्पश्चात् सुसङ्गता प्रवेश करती है)

सुसङ्गता - एतत्तत्कदलीगृहम्। तत्प्रविशामि। एषा में प्रियसखी सागरिका। किं पुनरेषा गुर्वनुरागोत्क्षिप्तहृदया किमप्यालिखन्ती न मां प्रेक्षते। भवतु तद्यावदस्या दृष्टिपथं परिहृत्य निरूपयिष्यामि किमेषाऽऽलिखतीति। कथं भर्ताऽऽलिखितः साधु, सागरिके, साधु। अथवा न कमलाकरमुज्झित्वा राजहंस्यन्यस्मिन्नभिरमते।

सुसङ्गता - यही वह कदली-गृह है। तो अन्दर जाती हूँ। (प्रवेश करके, आगे देखकर, विस्मय से) यह मेरी प्रिय सखी सागरिका है। लेकिन अधिक अनुराग से आक्रान्त-हृदय सी, कोई चित्र बनाती हुई, यह मुझे क्यों नहीं देख रही ? अच्छा ! तब इसकी नजर बचाकर देखूँगी कि यह क्या चित्र बना रही है ? (उसके पीछे की ओर निश्शङ्क खड़ी होकर ओर देखकर हर्ष से) क्या स्वामी का चित्र बनाया है ? धन्य हो, सागरिका, धन्य हो। ठीक है, राजहंसी कमल-वन को छोड़ कर अन्यत्र रमण नहीं करती।

साग0 - (सबाष्पम्) मुखमुत्तानीकृत्याश्रूणि निवारयन्ती सुसङ्गतां दृष्टवोत्तरीयेण फलकं प्रच्छादयन्ती सविलक्षस्मितम्। आलिखितो मयैषः। किं पुनरनवरतनिपतद्बाष्पसलिलेन मे दृष्टिः प्रेक्षितुं न प्रभवति। कथं प्रियसखी सुसङ्गता। सखि, इहोपविश।

सागरिका - (आँसू भर कर) मैंने यह बना तो लिया। लेकिन निरन्तर बहते हुये आंसुओं के कारण मेरी दृष्टि इसे देख नहीं पाती। (मुख ऊपर उठा कर, आँसुओं को रोकते हुए और सुसङ्गता को देखकर

ओढ़नी से चित्रफलक ढंकते हुये लज्जा और मुस्कान के साथ) क्या सखी सुसंगता है ? सखी, इधर बैठो।

सुसङ्ग0 - (उपविश्य बलात्फलकमाकृश्य) सखि, क एष त्वयात्र चित्रफलक आलिखितः।

सुसंगता - (बैठकर और बलपूर्वक चित्रफलक को खींचकर) सखी, यहाँ चित्रपट में तुमने किसे चित्रित किया है ?

साग0 - (सलज्जम्) सखि, प्रवृत्तमदनमहोत्सवे भगवाननङ्ग।

सागरिका - (लजाते हुये) सखी, (इस) हो रहे मदन-महोत्सव में भगवान् कामदेव।

सुसङ्ग - (सस्मितम्) वर्तिकां गृहीत्वा नाट्येन रतिव्यपदेशेन सागरिकामालिखति। अहो ते निपुणत्वम्। किं पुनः शून्यमिवैतच्चित्रं प्रतिभाति। तदहमप्यालिख्य रतिसनाथं करिष्ये।

सुसंगता - (मुस्कराकर) धन्य है तुम्हारी निपुणता ! फिर भी यह चित्र कुछ सूना-सा क्यों लग रहा है ? तो मैं भी चित्र बनाकर (इसे) रति से युक्त कर दूँ। (कूँची लेकर रति के व्याज से सागरिका का चित्र बनाने का नाट्य करती है)।

साग0 - (विलोक्य सासूयम्) सुसङ्गते, कस्मात्त्वयात्राहमालिखिता।

सागरिका - (देखकर नाराज होकर) सुसंगता, इसमें तूने मेरा चित्र क्यों बनाया ?

सुसङ्गता - (विहस्य) सखि, किमकारणं कुप्यसि। यादृशस्त्वया कामदेव आलिखितस्तादृशी मया रतिरालिखिता। तदन्यथासम्भाविनि, किं तवैतेनालपितेन। कथय सर्वं वृत्तान्तम्।

सुसंगता - (हंस कर) सखी, बिना कारण क्यों नाराज होती हो ? जैसा तूने कामदेव बनाया है, वैसी मैंने रति बना दी है। इसलिये, ए उल्टा समझने वाली, तेरी इस बकवास से क्या
लाभ सच्ची बात कह।

साग0 - (सलज्जा स्वगतम्) ननु ज्ञातास्मि प्रियसख्या। प्रियसखि, महती खलु मे लज्जा। तत्तवा कुरु यथा न कोप्यपर एतद्वृत्तान्तं जानातीति।

सागरिका - (लजाते हुये, मन में) प्रिय सखी ने मेरी बात जान ली है। (सुसङ्गता का हाथ पकड़ कर, प्रकट रूप से) प्रिय सखी, मुझे बड़ी लज्जा आ रही है। इसलिये ऐसा करो कि कोई दूसरा इस बात को न जान पाये।

सुसंगता - सखि, मा लज्ज स्व। ईदृशस्य कन्यारत्नस्यावश्यमेवेदृशे वरेऽभिलाषेण भवितव्यम्। तथापि यथा न कोऽप्यपर एतं वृत्तान्तं ज्ञास्यति तथा करोमि। एतया पुनर्मेधविन्.... सारिकयात्र कारणेन भवितव्यम्। कदाप्येषास्यालापस्य गृहीताक्षरा कस्यापिपुरतो मन्त्रयिष्यते।

सुसंगता - सखी, लज्जा न करो। ऐसी उत्तम कन्या को अवश्य ही ऐसे वर की अभिलाषा करनी चाहिये। फिर भी, जिससे कोई दूसरा इस बात को न जान पाये, मैं वैसा करूँगी। लेकिन यह बुद्धिमती सारिका इस (रहस्योद्घाटन) का कारण हो सकती है। कहीं यह इस बात-चीत के शब्दों को जानकर किसी के सामने कह सकती है।

साग0 - (इति मदनावस्थां नाटयति) तत्किमिदानीमत्र करिष्यामि अतोऽपि मेऽधिकतरं सन्तापो वर्धते।

सागरिका - तो अब इस विषय में क्या करूँ ? मेरा सन्ताप तो इससे भी अधिक बढ़ रहा है। (कामावस्था की चेष्टा करती है)।

सुसङ्ग0 - (सागरिकाया हृदये हस्तं दत्त्वा) (निष्क्रम्य पुनः प्रविश्य च नाट्येन नलिनीपत्रैः शयनीयं मृणालैर्वलयानि च रचयित्वा परिशिष्टानि नलिनीपत्राणि सागरिकाया हृदये निक्षिपर्ति) सखि, समाश्वसिहि समाश्वसिहि। यावदस्या दीर्घिकाया नलिनीपत्राणि मृणालिकाश्च गृहीत्वा लघ्वागच्छामि।

सुसंगता - (सागरिका के हृदय पर हाथ रखकर) सखी धैर्य रक्खो। धैर्य रक्खो। अभी मैं इस बावड़ी से कमलिनी के पत्ते और नाल लेकर तुरन्त आती हूँ।

(बाहर जाकर फिर प्रवेश करके कमलिनी के पत्तों से बिछावन और नालों से कड़े बनाकर और बचे हुये कमलिनी के पत्रों को सागरिका के वक्ष पर रखने का नाट्य करती है)।

साग0 - सखि, अपनयेमानि नलिनीपत्राणि मृणालवलयानि च। अलमेतेन किमित्यकारण आत्मानमायासयसि। ननु भणामि।

दुर्लभजनानुरागो लज्जा गुर्वी परवश आत्मा।
प्रियसखि विषमं प्रेम मरणं शरणं न वरमेकम् ।।1।।

(इति मूर्च्छति)

सागरिका - सखी, इन कमल-पत्रों तथा नाल-वलयों को अलग हटा दो। इससे कुछ न होगा। क्यों व्यर्थ अपने को कष्ट दे रही हो ? मैं ठीक कहती हूँ - दुर्लभ जन के प्रति प्रेम है, भारी लाज है और शरीर दूसरे के अधीन है। प्रिय सखी, (इन परिस्थितियों में) प्रेम संकटपूर्ण है। (क्या अब) केवल मृत्यु ही उत्तम शरण नहीं है।।1।।

(मूर्च्छित हो जाती है)

सुसंगता - (सकरुणम्) सखि सागरिके, समाश्वसिहि समाश्वसिहि।(नेपथ्ये)

कण्ठे कृत्तावशेषं कनकमयमधः शृङ्खलादाम कर्ष-
न्क्रान्त्वा द्वाराणि हेलाचलचरणरणत्किङ्किणीचक्रवालः।
दत्तातङ्कोऽङ्गनानामनुसृतसरणिः संभ्रमादश्वपालैः
प्रभ्रष्टोऽयं प्लवङ्गः प्रविशति नृपतेर्मन्दिरं मन्दुरायाः।।2।।

अपि च

नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाभावादपास्य त्रपा-
मन्तःकञ्चुकिकञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः।
पर्यन्ताश्रयिभिर्निजस्य सदृशं नाम्नः किरातैः कृतं
कुब्जा नीचतयैव यान्ति शनकैरात्मेक्षणाशङ्किनः।।3।।

सुसंगता - (करुणा से) सखी सागरिका, धीरज रक्खो, धीरज रक्खो।

(नेपथ्य में)

गले में टूटने से बची हुई सोने की जंजीर को नीचे (जमीन में) घसीटता हुआ, उछल-कूद से च´ंचल चरणों में बजते हुये घुँघरुओं के समूह वाला, द्वारों को लाँघ कर स्त्रियों को भयभीत करने वाला,

हड़बड़ा कर अश्व-रक्षकों द्वारा पीछा किया जाता हुआ, अश्व-शाला से खुला हुआ, यह वानर राजा के भवन में प्रवेश कर रहा है।।2।।

और भी -

हीजड़े, मनुष्यों में गिनती न होने कारण, लज्जा छोड़ कर भाग पड़े हैं; डर के मारे यह बौना कञ्चुकी के जामे में घुस रहा है; (अन्तःपुर) छोर का आश्रय लेने वाले किरातों ने अपने नाम के अनुरूप किया है और अपने देख लिये जाने से डरने वाले कुबड़े और झुककर धीरे-से जा रहे हैं।।3।।

सुसंगता - (आकर्ण्याग्रतोऽवलोक्य ससंभ्रममुत्थाय सागरिकां हस्ते गृहीत्वा) सखि, उत्तिष्ठोत्तिष्ठ। एष खलु दुष्टवानर इत एवागच्छति। तदलक्षितं तमालविटपान्धकारे प्रविश्यैनमतिवा हयावः।

सुसंगता - (सुनकर, सामने देखकर, घबराहट से उठकर और सागरिका का हाथ पकड़ कर) सखी, उठो, उठो। यह दुष्ट वानर इधर ही आ रहा है। अतः बिना दीखे तमाल वृक्षों के अंधियारे में जाकर इसे निकल जाने देवें।

(तथा कृत्वोभे सभयं पश्यन्त्यौ स्थिते)

साग0 - सुसङ्गते कथं त्वया चित्रफलक उज्झितः। कदापि कोऽपि तं प्रेक्षते।

(वैसा करके दोनों भयपूर्वक देखती हुई खड़ी होती हैं)

सागरिका - सुसंगता, अरी ! क्या तूने चित्रपट वहीं छोड़ दिया ? कहीं कोई उसे देख ले

सुसंग0 - अयि सुस्थिते, किमद्यापि चित्रफलकेन करिष्यसि। एष खलु दधिभक्तलम्पटः सारिकापञ्जरमुद्घाट्य दुष्टवानरीऽतिक्रान्तः। एषा खलु मेधाविन्युड्डीनाऽन्यतो गच्छति। तदेहि। लघ्वनुसरावः। अस्यालापस्य गृहीताक्षरा कस्यापि पुरतो मन्त्रयिष्यते।

सुसंगता - अरी, आराम से खड़ी रहने वाली, अब चित्रफलक का क्या करेगी ? (देख), दही और भात का लोभी यह दुष्ट बन्दर सारिका के पिंजरे को खोल कर चला गया है। यह मेधाविनी भी उड़ी जा रही है। तो आओ, जल्दी से इसका पीछा करें। इस बातचीत के अक्षरों को जानी हुई (यह) किसी के सामने कह देगी।

साग0 - सखि एवं कुर्वः।

सागरिका - सखी, ऐसा करते हैं।(इति परिक्रामतः)

(यह कहकर दोनों घूमती हैं) (नेपथ्ये)

ही ही आश्चर्यमाश्चर्यम्। (नेपथ्य में) हा ! हा ! अरे ! आश्चर्य, आश्चर्य !

साग0 - (विलोक्य सभयम्) सुसंगते, ज्ञायते पुनरपि स दुष्टवानर आगच्छतीति।

सागरिका - (देखकर भय से) सुसंगता, मालूम होता है, वह दुष्ट वानर फिर आ रहा है।

सुसंग0 - (विदूषकं दृष्टवा विहस्य) अयि कातरे, मा बिभीहि। भर्तुः परिपार्श्ववर्ती खल्वेष आर्यवसन्तकः।

सुसङ्गता - (विदूषक को देखकर जोर से हँसकर) अरी, डरपोक, न डर। यह तो स्वामी के पास रहने वाला आर्य वसन्तक है।

साग0 - (सस्पृहमवलोक्य) सखि सुसंगते, दर्शनीयः खल्वयं जनः।

सागरिका - (चाह से देखकर) सखी सुसंगता, तब तो यह जन दर्शनीय है।

सुसंग0 - अयि सुस्थिते, किमनेन दृष्टेन। दूरीभूता खलु सारिका। तदेहि। अनुसरावः।

(इति निष्क्रान्ते)

सुसंगता - अरी निश्चिन्त, इसके देखने से क्या होगा। सारिका दूर होती जा रही है। आओ, दोनों (उसी का) पीछा करें।

(दोनों बाहर जाती हैं)

(ततः प्रविशति प्रहृष्टो विदूषकः)

विदूषक - ही ही भो आश्चर्यमाश्चर्यम्। साधु, रे श्री खण्डदास धार्मिक, साधु। येन दत्तमात्रेणैव तेन दोहदकेनेदृशी नवमालिका संवृत्ता येन निरन्तरोद्भिन्नकुसुमगुच्छशोभितविटपोपहसन्तीव लक्ष्यते देवीपरिगृहीतां माधवीलताम्। तद्यावद्गत्वा प्रियवयस्यं वर्धयिष्यामि। एष खलु प्रियवयस्यस्तस्य दोहदस्य लब्धप्रत्ययतया परोक्षामपि तां नवमालिकां प्रत्यक्षामिव कुसुमितां प्रेक्षमाणो हर्षोत्फल्ललोचन इत एवागच्छति। तद्यावदेनमुपसर्पामि।

विदूषक - अहा ! हा ! अरे आश्चर्य। धन्य रे महात्मा श्रीखण्डदास, धन्य। क्योंकि उस योग (धूनी) के देते ही नवमालिका ऐसी हो गई कि निरन्तर खिले हुए फूलों के गुच्छों से शोभित डालियों वाली (वह), मानो, महारानी द्वारा अपनाई गई माधवी लता का उपहास करती हुई दीखती है। तब अब जाकर प्रिय मित्र को बधाई दूँगा। (घूमकर और देखकर) उस योग में विश्वास होने के कारण परोक्ष नवमालिका को, मानो, प्रत्यक्ष पुष्पित देखता हुआ, हर्ष से विकसित नेत्रों वाला यह प्रिय मित्र इधर ही आ रहा है। तो इसके पास जाता हूँ।

(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टो राजा)

राजा - (सहर्षम्)

उद्दामोत्कलिकां विपाण्डुररुचं प्रारब्धजृम्भां क्षणा-
दायासं श्वसनोद्गमैरविरतैरातन्वतीमात्मनः।
अद्योद्यानलतामिमां समदनां नारीमिवान्यां ध्रुवं
पश्यन्कोपविपाटलद्युति मुखं देव्याः करिष्याम्यहम् ।।4।।

(तत्पश्चात् प्रसन्न विदूषक प्रवेश करता है)

(तत्पश्चात् राजा प्रवेश करता है)

राजा - (हर्ष से)

क्षण भर में ही अत्यधिक कलियाँ निकली हुई, धवल कान्ति वाली, (कलियों का) प्रारम्भ हुए विकास वाली, निरन्तर वायु के आघात से अपना आयास प्रकट करती हुई (अर्थात् वायु के झोकों से हिलती हुई), मदन नामक वृक्ष से युक्त इस उद्यान लता को, अत्यधिक उत्कण्ठा वाली, जंभाई लेती हुई, निरन्तर गहरे श्वासों से अपनी खिन्नता प्रकट करने वाली, किसी अन्य कामावस्था वाली सुन्दरी के समान देखता हुआ मैं आज निश्चय ही महारानी के मुख को क्रोध से लाल कान्ति वाला कर दूँगा।।4।।

तद्वृत्तान्तमुपलब्धुं गतो वसन्तकोऽद्यापि नायाति।

उसका समाचार जानने के लिये गया हुआ वसन्तक अभी तक नहीं आया।

विदूषक - (सहसोपसृत्य) जयतु जयतु प्रियवयस्यः। भो वयस्य, दिष्ट्या वर्धसे।

विदूषक - (अकस्मात् समीप आकर) प्रिय मित्र की जय हो, जय हो। हे मित्र, तुम्हें बधाई है। (क्योंकि उस दोहद के देते ही नवमालिका ऐसी हो गई- ..... इत्यादि कहता है)

राजा - वयस्य, कः सन्देहः। अचिन्त्यो हि मणिमन्त्रौषधीनां प्रभावः।

पश्य

कण्ठे श्रीपुरुषोत्तमस्य समरे दृष्टवा मणिं शत्रुभि-
र्नष्टं मन्त्रबलाद्वसन्ति वसुधामूले भुजङ्गा हताः।
पूर्व लक्ष्मणवीरवानरभटा ये मेघनादाहताः
पीत्वा तेऽपि महौषधेर्गुणनिधेर्गन्धं पुनर्जीविताः।।5।।

तदादेशय मार्गं येन वयमद्य तदवलोकनेन चक्षुषः फलमनुभवासः।

राजा - मित्र, क्या संदेह है ? मणि, मन्त्र और औषधियों का प्रभाव अचिन्त्य होता है। देखो युद्ध में भगवान् विष्णु के कण्ठ में (कौस्तुभ) मणि को देखकर (उसके) शत्रु भाग खड़े हुए। मन्त्र के प्रभाव से शक्तिहीन हुए सर्प पृथ्वी के मूल (पाताल) में रहते हैं। पहले जो लक्ष्मण और वीर वानर-योद्धा मेघनाद ने मार दिये थे, वे भी गुणों की निधान महौषधि की गन्ध का पान करके फिर जीवित हो गये।। 5।।

तो मार्ग दिखलाओ, जिससे कि उसको देखकर हम भी दृष्टि का फल पा लेवें।

विदूषक - (साटोपम्) एत्वेतु भवान्।

विदूषक - (गर्व से) चलिये, चलिये।

राजा - गच्छाग्रतः।

राजा - आगे आगे चलो।

(उभौ सगर्वं परिक्रामतः)

विदूषक - (आकर्ण्य सभयं निवृत्य राजानं गृहीत्वा ससंभ्रमम्) भो वयस्य, एहि। पलायावहे।(दोनों गर्व से घूमते हैं)

विदूषक - (सुनकर, भय से लौटकर, राजा को पकड़ कर घबराहट से) ए मित्र, आओ, भाग चलें।

राजा - किमर्थम्।

राजा - क्यों ?

विदूषक - भोः, एतस्मिन् बकुलपादपे कोऽपि भूतः प्रतिवसति।

विदूषक - इस मौलसिरी के पेड़ पर कोई रहता है।

राजा - धिङ् मूर्ख विस्रब्धं गम्यताम्। कुत ईदृशानामत्र संभवः।

राजा - छिः मूर्ख, निडर होकर चलो। यहाँ ऐसी चीजों की कहाँ से सम्भावना हो सकती है।

विदूषक - भोः, एष खलु स्फुटाक्षरमेव मन्त्रयति। यदि मम वचनं न प्रत्याययसि तदग्रतो भूत्वा स्वयमेवाकर्णय।

विदूषक - अरे ! यह तो बिल्कुल साफ अक्षरों में बोल रहा है। यदि मेरी बात का विश्वास न हो तो आगे बढ़कर स्वयं ही सुन लो।

राजा - (तथा कृत्वा श्रुत्वा च)

स्पष्टाक्षरमिदं यस्मान्मधुरं स्त्रीस्वभावतः।
अल्पाङ्गत्वादनिर्ह्रादि मन्ये वदति सारिका।। 6।।

(ऊर्ध्वं निरूप्य) कथं सारिकैवेयम्।

राजा - (वैसा करके और सुनकर)

क्योंकि यह (वचन) स्पष्ट अक्षरों वाला है, स्त्रियों के स्वभाव के अनुरूप मधुर है, और (बोलने वाले के) छोटे अङ्गों वाला होने के कारण धीमा है, (इससे) मैं समझता हूँ कि (कोई) सारिका बोल रही है।।6।।

(ऊपर की ओर ध्यान से देखकर) अरे ! कैसे ! यह तो सारिका ही है।

विदूषक - (ऊर्ध्वमवलोक्य) आः कथं सत्यमेव सारिका। आः दास्याः पुत्रि, किं त्वं जानासि सत्यमेव वसन्तको बिभेतीति। तत्तिष्ठ मुहूर्त्तं यावदतेन पिशुनजनहृदयकुटिलेन दण्डकाष्ठेन परिपक्वमिव कपित्थफलमस्माद्वकुलपादपादाहत्य भूमौ त्वां पातयिष्यामि।

विदूषक - (ऊपर की ओर देखकर) आह ! कैसे ! सचमुच ही सारिका है। (क्रोध से छड़ी उठाकर) आह ! दासी की बच्ची, क्या तूने समझ लिया है कि वसन्तक सचमुच ही डर रहा है। तो जरा ठहर। अभी धूर्त जनों के हृदय के समान कुटिल इस छड़ी से पके कैथ के फल के समान तुझे मारकर इस मौलसिरी के पेड़ से जमीन पर गिराता हूँ। (यह कहकर मारने के लिये तैयार हो जाता है)।

राजा - (निवारयन्) मूर्ख, किमप्येषा रमणीयं व्याहरति। तत्किमेनां त्रासयसि। शृणुवस्तावत्।

राजा - (रोकते हुये) मूर्ख, यह कोई सुन्दर बात कह रही है। तो क्यों इसे डरा रहा है। दोनों सुनें तो।

(उभावाकर्णयतः)

विदूषक - (आकर्ण्य) भो वयस्य, श्रुतं त्वया यदेतया मन्त्रितम्। एषा भणति-'सखि क एष स्वयाऽऽलिखित। सखि, प्रवृत्तमदनमहोत्सवे भगवाननङ्ग' इति। पुनरपि भणति-'सखि, कस्मात्त्वयाहमत्रालिखिता। सखि, किमकारणे कुप्यसि। यादृशस्त्वया कामदेव आलिखितस्तादृशी मया रतिरालिखिता। तदन्यथासम्भाविनि, किं तवै तेनालपितेन। कथय सर्वं वृत्तान्तम्' इति। भो वयस्य, किंन्विदम्।

(दोनों सुनते हैं)

विदूषक - (सुनकर) ऐ मित्र, तुमने सुना, इसने क्या कहा। यह कह रही है-''सखी, तुमने यह किसका चित्र बनाया है ? सखी, प्रारम्भ हुए मदनमहोत्सव में भगवान् कामदेव का।'' यह आगे कह रही है-''सखी, तूने इसमें मेरा चित्र क्यों बनाया। सखी, क्यों तू व्यर्थ कुपित हो रही है। जैसा तूने कामदेव का चित्र बनाया है, वैसा ही मैंने रति का चित्र बना दिया है। इसलिये विपरीत समझने वाली, तेरी इस बकवास से क्या लाभ ? सारी सच्ची बात बतला।'' मित्र यह क्या बात है ?

राजा - वयस्य, एवं तर्कयामि। कयापि हृदयवल्लभोऽनुरागादालिख्य कामदेवव्यपदेशेन सखीपुरतोऽपह्न तः। तत्सख्यापि प्रत्यभिज्ञाय वैदग्ध्यावसावपि रतिव्यपदेशेन तत्रैवाऽऽलिखितेति।
राजा - मित्र, मैं ऐसा समझता हूँ-किसी ने प्रेमवश हृदय के प्रिय जन का चित्र बनाकर (उसे) सखी के सामने कामदेव के व्याज से छिपाया। तब सखी ने भी (रहस्य) ताड़ कर चतुरता से वहीं रति के बहाने उसका भी चित्र बना दिया।
विदूषक - (छोटिकां दत्वा) भो वयस्य, युज्यते। एवं खल्वेतत्।
विदूषक - (चुटकी बजाकर) ऐ मित्र, ठीक है। ऐसा ही है।
राजा - भो वयस्य, तूष्णीं भव। पुनरप्येषा व्याहरति।
राजा - मित्र, चुप रहो। यह फिर आगे कह रही है।
विदूषक - भो एषा भणति-'सखि, मा लज्जस्व। ईदृशस्य कन्यारत्नस्यावश्यमेवेदृशे वरेऽभिलाषेण भवितव्यम्' इति। भो वयस्य, यैषाऽऽलिखिता सा खलु कन्या दर्शनीया। विदूषक - अरे ! यह कह रही है-'सखी, लज्जा न करो। ऐसी उत्तम कन्या की अवश्य ही ऐसे वर के लिये अभिलाषा होनी चाहिए'। ऐ मित्र, जिस कन्या का चित्र बनाया गया है, वह अवश्य सुन्दर होगी।
राजा - यद्येवमवहितौ शृणुवस्तावत्। अस्त्यत्रावकाशो नः कुतूहलस्य।
(इत्युभावाकर्णयतः)
राजा - यदि ऐसा है तो सावधान होकर सुनें। इसमें हमारी उत्सुकता के लिये स्थान है। (दोनों सुनते हैं)
विदूषक - भो वयस्य, श्रुतं त्वया यदेतया मन्त्रितम्-'सखि, अतोऽपि मेऽधिकतरं संतापो
वर्धते। 'सखि, अपनयेमानि नलिनीपत्राणि मृणालवलयानि च। अलमेतेन। कस्मादकारण आत्मानमायासयसि' इति।
विदूषक - ऐ मित्र, तुमने, इसने जो कहा - 'सखी, इससे मेरी पीड़ा और अधिक बढ़ रही है।' 'सखी, इन कमलिनी के पत्रों और नाल के वलयों को हटाओ। इनसे बस करो। क्यों व्यर्थ स्वयं को कष्ट दे रही हो'।
राजा - वयस्य न केवलं श्रुतमभिप्रायोऽपि लक्षितः।
राजा - मित्र, केवल सुन ही नहीं लिया, अपितु आशय भी समझ लिया है।
विदूषक - भो मा त्वं पाण्डित्यगर्वमुद्रह। अहं त एतस्या मुखाच्छ्रुत्वा सर्वं व्याख्यास्यामि। तच्छृणुवः। अद्यापि कुरकुरायत एवैषा सारिका दास्याः पुत्री।
विदूषक - अरे, पाण्डित्य का अभिमान न कर। मैं इसके मुख से सुनकर तुझे सब बतला दूँगा। इसलिये दोनों सुनें। अभी भी यह दासी की पुत्री सारिका कुर-कुर कर रही है।
राजा - युक्तमभिहितम्। (पुनराकर्णयतः)
राजा - ठीक कहा। (फिर दोनों सुनते हैं)
विदूषक - भो वयस्य, एषा खलु सारिका दास्या दुहिता चतुर्वेदी ब्राह्मण इव ऋचः पठितुं प्रवृत्ता।
विदूषक - हे मित्र, यह तो दासी की बेटी सारिका चतुर्वेदी ब्राह्मण के समान ऋचायें पढ़ने लगी।
राजा - वयस्य, कथय किमप्यन्यचेतसा मया नावधारितं किमनयोक्तमिति।

राजा - मित्र, तनिक बतलाओ, अन्यत्र चित्त वाले मैंने समझा नहीं कि इसने क्या कहा।

विदूषक - भो एतदेतया पठितम्

दुर्लभजनानुरागो लज्जा गुर्वी परवश आत्मा।
प्रियसखि विषमं प्रेम मरणं शरणं नु वरमेकम्।। 7।।

विदूषक - अरे इसने यह कहा है -

दुलर्भ जन के प्रति प्रेम है, भारी लज्जा है और शरीर दूसरे के अधीन है। प्रिय सखी, (इन परिस्थितियों में) प्रेम संकटपूर्ण है। (क्या अब) केवल मृत्यु ही उत्तम शरण नहीं है।।7।।

राजा - (सस्मितम्) साधु, भवन्तं महाब्राह्मणं मुक्त्वा कोऽन्य एवमृचामभिज्ञः।

राजा - (मुस्करा कर) ठीक, आप महाब्राह्मण को छोड़कर अन्य कौन इस प्रकार ऋचाओं को जान सकता है।

विदूषक - ततः किं नु खल्विदम्।

विदूषक - तब फिर यह क्या है ?

राजा - ननु गाथेयम्।

राजा - यह गाथा है।

विदूषक - किं गाथा ?

विदूषक - क्या ? गाथा ?

राजा - वयस्य, कयापि श्लाघ्ययौवनया प्रियतममनासादयन्त्या जीवितनिरपेक्षयोक्तम्।

राजा - किसी प्रशंसनीय यौवन वाली ने प्रियतम को न पाकर जीवन से उदास हुई ने (यह) कहा है।

विदूषक - (उच्चैर्विहस्य) (हस्ततालं दत्त्वोच्चैर्विहसति)। भोः किमेतैर्वक्रभणितैः। ऋजुकमेव किं न भणसि यथा मामेवानासादयन्त्येति। अन्यथा कोऽन्यः कुसुमचापव्यपदेशेन निह्नूयते। विदूषक - (जोर से हंसकर) अरे ! इन टेढ़ी बातों से क्या (लाभ) ? सीधे ही क्यों नहीं कहते कि 'मुझे न पाती हुई ने'। नहीं तो, दूसरे किसको इस प्रकार कामदेव के व्याज से छिपाया

जायेगा। (हाथों से ताली बजाकर जोर से हँसता है)।

राजा - (ऊर्ध्वमवलोक्य) धिङ् मूर्ख, किमुच्चैर्विहसता त्वयेयमुन्त्रासिता येनोड्डीयान्यत्र क्वापि गता।(इति निरूपयतः)

राजा - (ऊपर की ओर देखकर) छिः मूर्ख, जोर से हँस कर तूने यह क्यों डरा दी कि उड़कर कहीं दूसरी जगह चली गई।

(दोनों ध्यान से देखते हैं)

विदूषक - (विलोक्य) भो एषा कदलीगृहमेव गता। तदेहि। लघ्वनुसरावः।

विदूषक - (देखकर) अरे, यह तो कदली-गृह की ओर ही गई है। तो आओ, दोनों जल्दी से पीछा करें।

राजा - **दुर्वारां कुसुमशरव्यथां वहन्त्या**
कामिन्या यदभिहितं पुरः सखीनाम्।
तद् भूयः शिशुशुकसारिकाभिरुक्तं

धन्यानां श्रवणपथातिथित्वमेति ।। 8।।

राजा - दुष्परिहार काम-पीड़ा को धारण करने वाली सुन्दरी द्वारा सखियों के सामने जो (वचन) कहा जाता है, बालक, तोते तथा मैना द्वारा फिर कहा गया वह (वचन) भाग्यशालियों (ही) के श्रोत्रपथ का गोचर होता है ।।8।।

विदूषक - (परिक्रामतः) एत्वेतु भवान्। भो एतत्खलु कदलीगृहम्। यावत्प्रविशावः।

(इत्युभौ प्रविशतः)

विदूषक - चलें, आप चलें। (दोनों घूमते हैं) रे, यही कदली-गृह है। आओ, प्रवेश करें।

(दोनों प्रवेश करते हैं)

विदूषक - भोगता दास्याः पुत्री इह तावन्मन्दमारुतोद्वेल्लद्बालकदलीदलशीतले शिलातल उपविश्य मुहूर्तं विश्राम्यावः।

विदूषक - अरे ! (वह) दासी की पुत्री (तो) गई। अब यहाँ मन्द पवन से हिलते हुए नये केले के पत्तों से शीतल शिलातल पर बैठ कर क्षण भर विश्राम कर लेवें।

राजा - यदभिरुचितं भवते। (इत्युपविशतः। राजा निःश्यस्य दुर्वार कुसुमशख्यथामित्यादि 2/8 पुनः पठति)।

राजा - जैसा आपको अच्छा लगे। (यह कहकर दोनों बैठ जाते हैं राजा गहरा सांस लेकर, 'दुष्परिहार काम-पीड़ा' इत्यादि 2/8 फिर दोहराता है)।

विदूषक -(पार्श्वतोऽवलोक्य) कलकं गृहीत्वा निरूप्य च सहर्षम्। भो वयस्य एतेनोद्घाटितद्वारेण तस्याः सारिकायाः पञ्जरेण भवितव्यम्। एषोऽपि स चित्र फलकः। यावदेनं गृह्णामि। भो वयस्य, दिष्ट्या वर्धसे।

विदूषक - (दोनों ओर देखकर) अरे ! यह खुले हुए द्वार वाला उस सारिका का पिंजरा होगा। और यह वह चित्रपट है। तो इसे लेता हूँ। (चित्रपट ले लेकर, ध्यान से देखकर हर्ष से) हे मित्र, तुम्हें बधाई !

राजा - (सकौतुकम्) वयस्य, किमेतत् ?

राजा - (कुतूहल से) मित्र, यह क्या है ?

विदूषक - भो एतत्तद्यन्मया भणितम्। त्वमेवात्राऽऽलिखितः। कोऽन्यः कुसुमचापव्यपदेशेन निह्नूयत इति।

विदूषक - अरे, यह वही है जो मैंने कहा था। इसमें तेरा ही चित्र बनाया है। कामदेव (पुष्प के धनुष वाले) के ब्याज से अन्य किसे छिपाया जा सकता है।

राजा - (सहर्ष हस्तौ प्रसार्य) सखे, दर्शय दर्शय।

राजा - (हर्ष से दोनों हाथ फैलाकर) मित्र, दिखलाओ, दिखलाओ।

विदूषकः - न ते दर्शयिष्यामि। सापि कन्यकात्रैवाऽऽलिखिता। तत् किं पारितोषिकेण विनेद्दशं कन्यारत्नं दर्श्यत।

विदूषक - तुम्हें नहीं दिखलाऊँगा। वह कन्या भी इसी में चित्रित की हुई है। तो क्या इनाम के बिना ऐसी उत्तम कन्या दिखाई जाती है।

राजा - (कटकमर्पयन्नेव बलाद् गृहीत्वा विलोक्य सविस्मयम्।

लीलावधूतपद्मा कथयन्ती पक्षपातमधिकं नः।
मानसमुपैति केयं चित्रगता राजहंसीव ।।9।।

अपि च

विधायापूर्वपूर्णेन्दुमस्या मुखमभूद् ध्रुवम्।
धाता निजासनाम्भोजविनिमीलनदुःस्थितः ।।10।।

(ततः प्रविशति सागरिका सुसङ्गता च)

राजा - (कड़ा देते हुए बलपूर्वक लेकर, देख कर विस्मय से)

क्रीड़ा से कमलों को कम्पित करने वाली, पंखों के फड़फड़ाने को प्रकट करती हुई, सुन्दर चाल वाली, राजहंसी जैसे मानसरोवर में (वैसे ही) विलास से लक्ष्मी को तिरस्कृत करने वाली, हमारे प्रति अनुराग प्रकट करने वाली, चित्र में लिखित यह कौन (हमारे) मन में प्रवेश कर रही है ।। 9।।

और भी -

इसके मुखरूपी अनुपम पूर्ण चन्द्र को बनाकर, निश्चय ही, विधाता अपने वासस्थान कमल के संकोचन से कठिनाई से बैठा होगा ।।10।।

(इसके बाद सागरिका और सुसङ्गता प्रवेश करती हैं)

सुसङ्गता-सखी न समासादितास्माभिः सारिका। तच्चित्रफलकमपि तावदेतस्मात्कदलीगृहाद् गृहीत्वा लघ्वागच्छावः।

सुसङ्गता - सखी, हमें सारिका (तो) नहीं मिली। तब अब इस कदली गृह से चित्रपट को ही लेकर जल्दी से आ जायें।

सागरिका - सखि एवं कुर्वः।

सागरिका - सखी, ऐसा करें।(उभे परिक्रामतः)(दोनों घूमती हैं)

विदूषकः - भो वयस्य, कस्मात्पुनरेपावनतमुख्यालिखिता।

विदूषक - हे मित्र, लेकिन इसे नीचा मुख की हुई क्यों चित्रित किया गया है ?

सुसङ्गता - (आकर्ण्य) सखि, यथा वसन्तको मन्त्रयते तथा तर्कयामि भर्त्राप्यत्रैव भवितव्यम्। तत्कदलीगुल्मान्तरिते भूत्वा प्रेक्षावहे।

सुसङ्गता - सखी, क्यों कि वसन्तक बोल रहा है, उससे अनुमान करती हूँ कि यहाँ स्वामी भी होंगे। तब केले के झुरमुट की ओर में होकर देखें तो।(इत्युभे पश्यतः)

राजा - वयस्य, पश्य पश्य। (विधायापूर्वपूर्णेन्दुमित्यादि पुनः पठति।)(दोनों देखती हैं)

राजा - मित्र, देखो, देखो। ('अनुपम पूर्ण चन्द्र बनाकर ....' इत्यादि कहता है)

सुसङ्गता - सखि, दिष्ट्य वर्धसे। एष ते हृदयवल्लभस्त्वामेव निर्वर्णयंस्तिष्ठति।)

सुसङ्गता - सखी, बधाई है। यह तेरा प्रियतम तुझे ही देख रहा है।

साग0 - (सलज्जम्) सखि, कस्मात्परिहासशीलतयेमं जनं लघुं करोषि।

सागरिका - (लज्जा से) क्यों उपहास करके इस जन का तिरस्कार कर रहे हो।

विदूषकः - (राजानं चालयित्वा) ननु भणामि-कस्मादेषावनतमुख्यालिखितेति।

विदूषक - (राजा को हिलाकर) अरे, मैं पूछता हूँ कि इसे नीचा मुख की हुई क्यों चित्रित किया गया है ?

राजा - वयस्य, सारिकयैव सकलमावेदितम्।

राजा - मित्र, यह तो सारिका ने ही सब बतला दिया।

सुसङ्ग0 - सखि, दर्शित खलु मेधाविन्याऽऽत्मनो मेधावित्वम्।

सुसङ्गता - सखी, मेधाविनी ने तो दिखला दी अपनी मेधाविता।

विदूषकः - भो वयस्य, अपि सुखयति ते लोचने ?

विदूषक - हे मित्र, क्या (यह) तुम्हारे नयनों को सुख देती है ?

साग0 - (ससाध्वसं स्वगतम्) किमेष भणिष्यतीति यत् सत्यं जीवितमरणयोरन्तरे वर्ते।

सागरिका - (आशङ्का से मन ही मन में) यह क्या कहेगा। इससे सचमुच मैं जीवन और मृत्यु के बीच में हूँ।

राजा - सुखयतीति किमुच्यते। पश्य-

कृच्छ्रादूरुयुगं व्यतीत्य सुचिरं भ्रान्त्वा नितम्बस्थल
मध्येऽस्यास्त्रिवलीतरङ्गविषमे निस्पन्दतामागता।
मद्दृष्टिस्तृषितेव संप्रति शनैरारुह्य तुङ्गौ स्तनौ
साकांक्षं मुहुरीक्षते जललवप्रस्यन्दिनी लोचने ।।11।।

राजा - सुख देती है, इसमें क्या कहना है। देखो -

मुश्किल से इसकी दोनों जाँघों को पार करके, चिरकाल तक कटि-प्रदेश में भ्रमण करके, उदर की तीनों रेखाओं (त्रिवली) की तरङ्गों से दुर्गम मध्य भाग में निश्चल हुई, मेरी दृष्टि, मानो, प्यासी-सी अब धीरे-धीरे उन्नत स्तनों पर चढ़कर बार बार चाह-से जल-कणों को बहाने वाले (इसके) दोनों नेत्रों को देख रही है।।11।।

सुसङ्गता - सखि श्रुतं त्वया।

सुसङ्गता - सखी, सुना तुमने ?

साग0 - (विहस्य) त्वमेव शृणु यस्या आलेख्यविज्ञानमेवं वर्ण्यते।

सागरिका - (हँसकर) तू ही सुन, जिसकी चित्र-कला का इस प्रकार वर्णन किया जा रहा है।

विदूषकः - भो वयस्य, यस्य पुनरीदृश्योऽप्येवं समागमं बहु मन्यन्ते तस्याप्यात्मन उपरि कः परिभवः। येनात्रैव तया लिखितमात्मानं न प्रेक्षसे।

विदूषक - लेकिन, हे मित्र, ऐसी (सुन्दरियाँ भी जिसके मिलन को इस प्रकार बहुत मानती हैं, उसका अपने प्रति यह कैसा उपेक्षाभाव है कि इस (चित्रफलक) में ही उसके द्वारा चित्रित किये गये स्वयं को नहीं देख रहे।

राजा - (निर्वर्ण्य) वयस्य, अनयाऽऽलिखितोऽहमिति यत्सत्यं ममात्मन्येव बहुमानः। तत्कथं न पश्यामि। पश्य -

भाति पतितो लिखन्त्यास्तस्या बाष्पाम्बुशीकरकणौघः।
स्वेदोद्गम इव करतलसंस्पर्शादेष मे वपुषि।।12।।
राजा - (ध्यान से देखकर) मित्र, इसने मेरा चित्र बनाया है, इससे सचमुच मुझे अपने पर भी बहुत मान हो गया (है), तब कैसे न देखूंगा ?
देखो -

अभ्यास प्रश्न -
निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए।

क- विधायापूर्वपूर्णेन्दुमस्या मुखमभूद् ध्रुवम्।
धाता निजासनाम्भोजविनिमीलनदुःस्थितः।

ख- लीलावधूतपद्मा कथयन्ती पक्षपातमधिकं नः।
मानसमुपैति केयं चित्रगता राजहंसीव।

चित्र बनाती हुई का मेरे शरीर पर गिरा हुआ यह अश्रु-बिन्दुओं के कणों का समूह उसके करतल के स्पर्श से (उत्पन्न) पसीना-सा प्रतीत होता है।।12।।
साग0 - (आत्मगतम्) हृदय, समाश्वसिहि समाश्वसिहि। मनोरथोऽपि ते एतावतीं भूमिं न गतः।
सागरिका - (मन में) हृदय, धैर्य रक्खो धैर्य रक्खो। यहाँ तक तो तेरा मनोरथ भी नहीं पहुँचा था।
सुसङ्गता - सखि, त्वमेवैका श्लाघनीया यया भर्ताप्येवं मन्त्र्यते।
सुसङ्गता - सखी, केवल तू ही प्रशंसनीय है, जो स्वामी से भी इस प्रकार कहला रही है।
विदूषकः - (पार्श्वतोऽवलोक्य) भो वयस्य, एतत्खलु सरसकमलिनीदलमृणालविरचितं तस्या मदनावस्थासूचकं शयनीयं लक्ष्यते।
विदूषक - (चारों ओर देखकर) हे मित्र, यह ताजे कमलिनी के पत्तों तथा नालों से बना हुआ, उसकी कामावस्था को सूचित करने वाला बिछावन दीख रहा है।
राजा - वयस्य, निपुणमुपलक्षितम्। तथा हि
परिम्लानं पीनस्तनजघनसंगादुभयत-
स्तनोर्मध्यस्यान्तः परिमिलनमप्राप्य हरितम्।
इदं व्यस्तन्यासं श्लथभुजलताक्षेपवलनैः

कृशाङ्ग्याः संतापं वदति नलिनीपत्रशयनम्।।13।।

अपि च

स्थितमुरसि विशालं पद्मिनीपत्रमेतत्

कथयति न तथान्तर्मन्मथोत्थामवस्थाम्।

अतिगुरुपरितापम्लापिताभ्यां यथास्याः

स्तनयुगपरिणाहं मण्डलाभ्यां ब्रवीति।।14।।

विदूषकः - (नाट्येन मृणालिकां गृहीत्वा) भो वयस्य, अयमपरस्तस्या एव पीनस्तनोष्माक्लिश्यमानकोमलमृणालहारः। तत्प्रेक्षतां भवान्।

विदूषक - (नाट्यपूर्वक मृणालिका लेकर) हे मित्र, यह उसका ही दूसरा स्थूल स्तनों के सन्ताप से मुरझाया हुआ कोमल नालों का हार है। इसे देखो।

राजा - (गृहीत्वोरसि विन्यस्य) अयि जडप्रकृते,

परिच्युतस्तत्कुचकुम्भमध्यात् किं शोषमायासि मृणालहार।

न सूक्ष्मतन्तोरपि तावकस्य तत्रावकाशो भवतः किमु स्यात्।।15।।

राजा - मित्र, ठीक जाना। क्योंकि -

स्थूल स्तन तथा जघन के सम्पर्क से दोनों ओर से मुरझाया हुआ, क्षीण मध्य भाग का सम्पर्क न पाकर बीच में हरा, और शिथिल लता-सदृश भुजाओं के (इधर-उधर) फेंकने तथा चलाने से अस्त-व्यस्त रचना वाला, यह कमलिनी के पत्तों का बिछावन कृशाङ्गी के सन्ताप को कह रहा है।।13।।

और भी

वक्षःस्थल पर स्थित यह विशाल कमलिनि-पत्र इसके हृदय की काम से उत्पन्न दशा को उतना नहीं कह रहा है, जितना अत्यधिक ताप से मुरझाये हुए गोल चिह्नों से इसके दोनों स्तनों की विशालता को कह रहा है।।14।।

राजा - (लेकर वक्ष पर रखकर) अरे मूर्ख

मृणालहार, उसके स्तनरूपी कलशों के मध्य से गिरा हुआ तू क्यों खिन्न हो रहा है ? यहाँ तेरे सूक्ष्म धागे के लिये भी स्थान नहीं है, तेरे लिए फिर कैसे हो सकता है।।15।।

सुसङ्गता - (आत्मगतम्) (प्रकाशम्) हा धिक्, हा धिक्। गुर्वनुरागोत्क्षिप्तहृदयो भर्ताऽसंबद्धमपि मन्त्रयितुं प्रवृत्तः। तदतः परं पुनर्न युक्तमुपेक्षितुम्। भवतु। एवं तावत्। सखि, यस्य कृते त्वमागता सोऽयं पुरतस्तिष्ठति।

सुसङ्गता - (स्वगत) आह ! धिक्कार ! अत्यधिक अनुराग से व्याकुल हृदय वाले स्वामी ने (अब) असम्बद्ध भी कहना प्रारम्भ कर दिया। अब इससे आगे उपेक्षा करना ठीक नहीं। अच्छा, तब ऐसा (करूं)। (प्रगट में) सखी, जिसके लिये यहाँ आई थी, वह यह सामने है।

सागरिका - (सासूयम्) सुसंगते, कस्य कृतेऽहमत्राऽऽगता।

सागरिका - (चिढ़ कर) सुसङ्गता, मैं यहाँ किसके लिये आयी थी !

सुसङ्गता - (विहस्य) अयि अन्यशङ्किते, ननु चित्रफलकस्य। तद् गृहाणैनम्।

सुसङ्गता - (हँस कर) अरी,कुछ अन्य समझने वाली, चित्रपट के लिये। तो इसे ले ले।

सागरिका - (सरोषम्) इति गन्तुमिच्छति। अकुशलाऽस्मि तवेदृशानामालापानाम्। तदन्यतो गमिष्यामि।

सागरिका - (क्रोध से) मैं तेरी ऐसी बातों को नहीं समझ सकती। तो मैं अन्यत्र चली जाऊँगी। (यह कहकर जाना चाहती है)।

सुसङ्गता - (सागरिका हस्ते गृहीत्वा) अयि असहने, इह तावन्मुहूर्तं तिष्ठ यावदस्मात्कदलीगृहाच्चित्रफलकं गृहीत्वागच्छामि।

सुसङ्गता - (सागरिका का हाथ पकड़ कर) अरी कोप करने वाली, मुहुर्त्त भर तो यहाँ ठहर, जब तक मैं कदली-गृह से चित्रपट लेकर आऊँ।

सागरिका - सखि, एव कुरु।(सुसंगता कदलीगृहाभिमुखं परिक्रामति)

सागरिका - सखी, ऐसा (ही) कर। (सुसङ्गता कदलीगृह की ओर घूमती है)

विदूषकः - (सुसंगतां दृष्टवा ससंभ्रमम्) भो वयस्य, प्रच्छादयैतं चित्रफलकम्। एषा खलु देव्याः परिचारिका सुसंगताऽऽगता। (राजा पटान्तेन फलकमाच्छादयति)

विदूषक - (सुसङ्गता को देखकर घबराहट से) ऐ मित्र, इस चित्रपट को छिपा लो। यह महारानी की सेविका सुसङ्गता आ रही है।(राजा आंचल से फलक को ढकता है)

सुसङ्गता - (उपसृत्य) जयतु जयतु भर्ता।

सुसङ्गता - (समीप जाकर) स्वामी की जय हो।

राजा - सुसंगते, स्वागतम्। इहोपविश्यताम्। (सुसंगतोपविशति)

राजा - सुसङ्गता, (तेरा) स्वागत। यहाँ बैठो। (सुसङ्गता बैठती है)

सुसङ्गता - (विहस्य) इति गन्तुमिच्छति।

राजा - सुसंगते, कथमिहस्थोऽहं भवत्या ज्ञातः।

राजा - सुसङ्गता, यहाँ स्थित हमें तुमने कैसे जान लिया ?

सुसङ्गता- भर्तः, न केवलं त्वम्, अयमपि चित्रफलकेन सह सर्वो वृत्तान्तो मया विज्ञातः। तद्दैव्यै गत्वा निवेदयामि।

सुसङ्गता - (हँस कर) स्वामिन्, केवल तुम्हें ही नहीं, बल्कि चित्रपट सहित यह सारी बात भी मैंने जान ली है। तो अब जाकर महारानी से कह दूँगी।

विदूषकः - (अपवार्य सभयम्) भो वयस्य, सर्वं संभाव्यते। मुखरा खल्वेषा गर्भदासी। तत्पारितोषिकेण संप्रीणयैनाम्।

विदूषक - (एक ओर को होकर, भय से) ऐ मित्र, यह सब सम्भव है। यह गर्भ की दासी बड़ी वाचाल है। इसलिये इनाम से इसे प्रसन्न करो।

राजा - युक्तमुक्तं भवता। (सुसङ्गता हस्ते गृहीत्वा) सुसंगते, क्रीडामात्रमेवैतत्। अकारणे त्वया देवी न खेदयितव्या। इदं ते पारितोषिकम्। (इति कर्णाभरणं प्रयच्छति)।

राजा - आपने ठीक कहा है। (सुसङ्गता का हाथ पकड़ कर) सुसंगता, यह तो खेल-भर था। तुम्हें व्यर्थ देवी को दुःखी नहीं करना चाहिये। लो, यह तुम्हारा इनाम है। (कर्णाभूषण देता है)

सुसङ्गता - (प्रणम्य सस्मितम्) भर्तः, अलं शंकया। भयाऽपि भर्तुः प्रसादेन क्रीडितमेव। तत्विकं कर्णाभरणेन। एष एव मे गुरुः प्रसादो यत् कस्मात् त्वयाऽहमत्र चित्रफलक आलिखितेति कुपिता में प्रियसखी सागरिका। तद् गत्वा प्रसादयत्वेनां भर्ता।

सुसंगता - (प्रणाम करके मुस्कराते हुये) स्वामी, डरिये नहीं। मैंने भी स्वामी के प्रसाद से खेल ही किया है। इसलिये कर्णाभूषण से क्या ? मुझ पर स्वामी का यही महान् प्रसाद है कि-तूने इस चित्रपट में मेरा चित्र क्यों बनाया, इस कारण मेरी सखी सागरिका कुपित हो गई है, स्वामी चलकर उसे प्रसन्न कर दें।

राजा - (ससंभ्रममुत्थाय) क्कासौ क्कासौ।

राजा - (जल्दी से उठकर) वह कहाँ है ? कहाँ है ?

सुसङ्गता - इत इतो भर्ता।

सुसंगता - स्वामी इधर (चलिये), इधर।

विदूषकः - भोः गृह्याम्येतं चित्रफलकम्। कदापि पुनरप्येतेन कार्यं भविष्यति।

(सर्वे कदलीगृहान्निष्क्रान्ताः)

विदूषक - अरे, इस चित्रपट को लिये लेता हूँ। कभी फिर भी इससे काम पड़ेगा।

(सब कदलीगृह से बाहर निकलते हैं)

सागरिका - (राजानं दृष्टवा सहर्षं ससाध्वसं सकम्पं च स्वगतम्) हा धिक्, हा धिक्! एवं प्रेक्ष्यातिसाध्वसेन न शक्नोमि पदात् पदमपि चलितुम्। तत्किमिदानीमत्र करिष्यामि।

सागरिका - (राजा को देखकर हर्ष, भय तथा कम्पन सहित) हाय ! धिक् ! इसे देखकर अत्यधिक घबराहट के कारण मैं एक पग भी नहीं चल पा रही। तो अब इस दशा में क्या करूं ?

विदूषकः - (सागरिकां दृष्टवा) ही ही भोः, आश्चर्यमाश्चर्यम्। ईदृशं रूपं मनुष्यलोके नपुनर्दृश्यते। ततर्कयामि प्रजापतेरपीदं निर्माय विस्मयः समुत्पन्न इति।

विदूषक - (सागरिका को देखकर) अरे! रे! आश्चर्य है! ऐसा रूप मनुष्यलोक में तो अन्यत्र देखा नहीं। इससे मैं सोचता हूँ कि इसे बनाकर प्रजापति को भी विस्मय हो गया होगा।

राजा - वयस्य, ममाप्येवं मनसि वर्तते।

दृशः पृथुतरीकृता जितनिजाब्जपत्रत्विष-
श्रुतुर्भिरपि साधु साध्विति मुखैः समं व्याहृतम्।
शिरांसि चलितानि विस्मयवशाद् ध्रुवं वेधसा
विधाय ललनां जगत्त्रयललामभूताभिमाम् ।।16।।

राजा - मित्र, मेरे भी मन में ऐसा ही आ रहा है।

निश्चय ही ब्रह्मा ने तीनों लोकों की भूषण स्वरूप इस ललना को बनाकर विस्मय-वश अपने (वासस्थान) पù के पत्रों की कान्ति को जीतने वाले नेत्र विस्फारित किये होंगे, चारों मुखों से एक साथ 'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा' यह कहा होगा और (उसके) सिर हिल उठे होंगे।।16।।

सागरिका- (सासूयं सुसंगतामालोक्य) (इति गच्छति)। सखि, ईदृशश्चित्रफलकस्त्वयाऽऽनीतः।

सागरिका - (चिढ़कर सुसङ्गता को देखकर) सखी, ऐसा चित्रपट लाई है तू। (यह कहकर चली जाती है)

राजा –

दृष्टिं रुषा क्षिपसि भामिनि यद्यपीमां
स्निग्धेयमेष्यति तथापि न रूक्षभावम्।
त्यक्त्वा त्वरां व्रज पदस्खलितैरयं ते
खेदं करिष्यति गुरुर्नितरां नितम्बः ।।17।।

राजा - हे सुन्दरी, यद्यपि तू रोष से यह दृष्टि डाल रही है, फिर भी स्नेह-भरी यह रूखी नहीं होगी। तू झटपटी छोड़कर चल। (अन्यथा) पैर के फिसल जाने से यह तेरा भारी नितम्ब तुझे अत्यधिक कष्ट देगा ।।17।।

सुसंगता - भर्तः, अतिकोपना खल्वेषा। तद्धस्ते गृहीत्वा प्रसादयैनाम्।

सुसंगता - स्वामी, यह बड़ी कोपशील है। इसलिए इसे हाथ पकड़ कर मनाओ।

राजा - (सानन्दम्) सागरिकां हस्ते गृहीत्वा स्पर्शसुखं नाटयति।

राजा - (आनन्द से) जैसा आप कहें। (सागरिका को हाथ से पकड़ कर स्पर्श के सुख का अभिनय करता है)

विदूषकः - भोः, एषा खलु त्वयाऽपूर्वा श्रीः समासादिता।

विदूषक - अरे, तूने निश्चय ही यह अनुपम श्री पा ली है।

राजा - वयस्य सत्यम्।

श्रीरेषा पाणिरप्यस्याः पारिजातस्य पल्लवः।
कुतोऽन्यथा स्रवत्येष स्वेदच्छद्मामृतद्रवतः।।18।।

राजा - मित्र, सचमुच,

यह श्री है, और इसका हाथ पारिजात का किसलय है। नहीं तो, यह स्वेद के व्याज से अमृत-रस कहाँ से बह रहा है।।18।।

सुसंगता - सखि, अतिनिष्ठुरेदानीमसि त्वं यैवं भर्त्रा हस्तेऽवलम्बितापि कोपं न मु´्चसि।

सुसंगता - सखी, तू अब बड़ी कठोर है, जो इस प्रकार स्वामी द्वारा हाथ में धारण की गई भी कोप नहीं छोड़ रही।

सागरिका - (सभ्रूभङ्गम्) अयि सुसंगते, अद्यापि न विरमसि।

सागरिका - (भौं टेढ़ी करके) अरी सुसंगता, तू अभी भी नहीं रुकेगी।

राजा - अयि प्रसीद। न खलु सखीजने युक्त एवं कोपानुबन्धः।

राजा - अयि, प्रसन्न हो। सखियों पर इस प्रकार लगातार कोप ठीक नहीं है।
विदूषकः - एषा खलु अपरा देवी वासवदत्ता।
(राजा सचकितं सागरिकाया हस्तं मुञ्चति)
विदूषक - यह तो दूसरी महारानी वासवदत्ता है।
(राजा चौंक कर सागरिका का हाथ छोड़ देता है)
सागरिका - (ससंभ्रमम्) सुसंगते, किमिदानीमत्र करिष्ये।
सागरिका - (घबराकर) सुसंगता, अब इस अवस्था में क्या करूँ ?
सुसंगता - सखि, एतां तमालवीथिकामन्तरयित्वा निष्क्रामावः।
(इति निष्क्रान्ते)
सुसंगता - सखी, इस तमाल वृक्षों की पङ्क्ति की ओट लेकर निकल चलें।
(दोनों निकल गई)
राजा - (पार्श्वतोऽवलोक्य) वयस्य क्व सा देवी वासवदत्ता ?
राजा - (चारों ओर देखकर) मित्र, महारानी वासवदत्ता कहाँ है ?
विदूषकः - भोः, न जानामि क्व सा। मयैषा खल्वपरा देवी वावसदत्ताऽतिदीर्घरोषतयेति भणितम्।
विदूषक - अरे, मैं नहीं जानता कि वह कहां है। मैंने तो (इसके) अतिदीर्घ कोप वाली होने के कारण कहा था कि यह दूसरी महारानी वासवदत्ता है।
राजा - धिक़ मूर्ख,

प्राप्ता कथमपि दैवात्कण्ठमनीतैव सा प्रकटरागा।
रत्नावलीव कान्ता मम हस्ताद् भ्रंशिता भवता।।19।।

राजा - छिः ! मूर्ख,
किसी प्रकार भाग्य से प्राप्त हुई, व्यक्त अनुराग वाली, वह कान्ता, स्फुट कान्ति वाली रत्नावली के समान, कण्ठ में बिना धारण की गई ही आपने मेरे हाथ से गंवा दी।।19।।
(ततः प्रविशति वासवदत्ता काञ्चनमाला च)
वासवदत्ता - हञ्जे काञ्चनमाले, अथ कियद्दूर इदानीं साऽऽर्यपुत्रेण परिगृहीता नवमालिका
(तत्पश्चात् वासवदत्ता और काञ्चनमाला प्रवेश करती हैं)
वासव0 - सखी काञ्चनमाला, आर्यपुत्र द्वारा अपनाई हुई वह नवमालिका अब कितनी दूर है ?
काञ्च- भर्त्रि, एतत्कदलीगृहमतिक्रम्य दृश्यत एव।
काञ्चनमाला - स्वामिनी, इस कदलीगृह को पार करके दीख ही रही है।
वासवदत्ता - तदादेशय मार्गम्।
वासव0 - तो मार्ग बतलाओ।
काञ्चन0 - एत्वेतु भर्त्री।
काञ्चनमाला - स्वामिनी, चलिये, चलिये।
राजा - वयत्व, क्वेदानीं प्रियतमा द्रष्टव्या।

राजा - मित्र, अब प्रिया को कहाँ देखा जाय ?

काञ्चन0 - भर्त्रि, यथा समीपे भर्ता मन्त्रयति तथा तर्कयामि भर्त्रीमेव प्रतिपालयंस्तिष्ठति। तदुपसर्पतु भर्त्री।

काञ्चनमाला - स्वामिनी, जैसे कि स्वामी समीप बोल रहे हैं, उससे समझती हूँ कि वह स्वामिनी की ही प्रतीक्षा कर रहे हैं। इसलिये स्वामिनी समीप जायें।

वासवदत्ता - (उपसृत्य) जयतु जयत्वार्यपुत्रः।

वासव0 - (समीप जाकर) आर्यपुत्र की जय हो, जय हो।

राजा - (अपवार्य) विदूषकः कक्षायां फलकं निक्षिप्योत्तरीयेण प्रच्छादयति।

राजा - (एक ओर को होकर) मित्र, चित्रपट को ढक लो।(विदूषक चित्रपट को बगल में रखकर चादर से ढंकता है)

वासवदत्ता - आर्यपुत्र, अथ कुसुमिता नवमालिका।

वासव0 - आर्यपुत्र, क्या नवमालिका पर फूल आ गये ?

राजा - देवि, प्रथममिहागतैरप्यस्माभिस्त्वं चिरयसीति नैव दृष्टा। तदेहि। समेतावेव तां पश्यावः।

राजा - देवी, हमने यहाँ पहले आकर भी इसलिये नहीं देखी, क्योंकि तुम्हें देर थी। तब आओ। दोनों साथ ही देखें।

वासवदत्ता - (निर्वर्ण्य) आर्यपुत्र, मुखरागादेव मया ज्ञातं यथा कुसुमिता नवमालिकेति! तन्न गमिष्यामि।

वासव0 - (ध्यान से देखकर) आर्यपुत्र, (आपके) मुख की कान्ति से ही मैंने जान लिया कि नवमालिका पर कुसुम आ गये हैं। इसलिये मैं नहीं जाऊँगी।

विदूषकः - इति बाहु प्रसार्य नृत्यति। नृत्यतः कक्षान्तरात् फलकः पतति। ही ही भोः, जित्रं जितमस्माभिः।(राजापवार्याङ्गुल्या विदूषकं तर्जयति)

विदूषक - आ ! हा ! हा ! अरे, हम जीत गये, जीत गये। (दोनों भुजायें फैलाकर नाचता है। नाचते हुये की बगल से फलक गिर पड़ता है)।

(राजा एक ओर को होकर विदूषक को अंगूली के संकेत से सचेत करता है)

विदूषकः - (अपवार्य) भो मा कुप्य। तूष्णीकस्तिष्ठ। अहमेवात्र ज्ञास्यामि।

विदूषक - (मुँह फेर कर) अरे, कोप न करो। चुप रहो। इस विषय में मैं स्वयं जान लूँगा।

काञ्चन0 - (फलकं गृहीत्वा निरूप्यापवार्य) भर्त्रि, प्रेक्षस्व तावत् किमत्र चित्रफलक आलिखितम् ?

काञ्चननमाला - (फलक लेकर, ध्यान से देखकर, मुख दूसरी ओर करके) स्वामिनी, देखों तो इस चित्रपट में क्या लिखा है ?

वासवदत्ता - (निरूप्यापवार्य) काञ्चनमाले, अयमार्यपुत्रः। इय पुनः सागरिका किंन्वेतत् ?

वासव0 - (ध्यान से देखकर, एक ओर को) काञ्चनमाला, यह आर्यपुत्र है, और यह सागरिका है। यह क्या है ?

काञ्चन0 - भर्त्रि, अहमप्येतदेव चिन्तयामि।

काञ्चनमाला - स्वामिनी, मैं भी यही समझती हूँ।

वासव0 - (सकोपहासम्) आर्यपुत्र, केनेदमालिखितम् ?

वासव0 - (कोप और हास के साथ) आर्यपुत्र, यह किसने बनाया है ?

राजा - (सवैलक्ष्यस्मितमपवार्य) वयस्य, किं ब्रवीमि।

राजा - (लज्जा और मुस्कराहट के साथ, मुँह फेर कर) मित्र क्या कहूँ ?

विदू0 - (अपवार्य) (प्रकाशं वासवदत्तां प्रति) भोः मा चिन्तय। अहमुत्तरं दास्यामि। भवति, मान्यथा संभावय। आत्मा किल दुःखमालिख्यत इति मम वचनं श्रुत्वा प्रियवयस्येनैतदालेख्यविज्ञानं दर्शितम्।

विदूषक - (एक ओर को) अरे, चिन्ता न करो। मैं उत्तर दूंगा। (प्रकट में, वासवदत्ता को लक्ष्य करके) माननीय, अन्य कुछ न समझिये। 'अपना चित्र कठिनता से बनाया जा सकता है' मेरे इस वचन को सुनकर प्रिय मित्र ने यह चित्र-कला की प्रवीणता प्रदर्शित की है।

राजा - यथाह वसन्तकस्तथैवैतत्।

राजा - वसन्तक जैसा कह रहा है, यह बिल्कुल वैसा ही है।

वासव0 - (फलकं निर्दिश्य) आर्यपुत्र, एषाऽपि यापरा तब समीप आलिखिता तत्किमार्यवसन्तकस्य विज्ञानम्।

वासव0 - (चित्रफलक की ओर संकेत करके) आर्यपुत्र, यह जो दूसरी तुम्हारे पास अङ्कित की गई है, वह क्या आर्य वसन्तक की कला है ?

राजा - (सवैलक्ष्यस्मितम्) देवि, अलमन्यथा शङ्कया। इयं हि कापिकन्यका स्वचेतसैव परिकल्पयाऽऽलिखिता। न तु दृष्टपूर्वा।

राजा - (लज्जा के साथ मुस्करा कर) महारानी, और कोई संदेह न कीजिये। यह किसी कन्या का अपने मन से ही कल्पना करके चित्र बना दिया है। लेकिन (यह) पहले (कभी) देखी नहीं है।

विदूषकः - भवति, सत्यं सत्यम्। शपे ब्रह्मसूत्रेण यदि कदाप्यस्माभिरीदृशी दृष्टपूर्वा।

विदूषक - माननीय, (यह बिल्कुल) सत्य है। मैं यज्ञोपवीत की शपथ लेता हूँ जो ऐसी हमने कभी देखी हो।

काञ्चन0 - (अपवार्य) भर्त्रि, घुणाक्षरमपि कदापि संभवत्येव।

काञ्चनमाला - (एक ओर को) स्वामिनी, कभी संयोगवश भी हो सकता है।

वासव0 - (अपवार्य) (प्रकाशम्)(प्रतिस्था)। अयि ऋजुके, वसन्तकः खल्वेषः। त्वमेतस्य वक्रभणितानि न जानासि। आर्यपुत्र, मम पुनरिदं चित्रफलकं प्रेक्ष्य शीर्षवेदना समुत्पन्ना। तद् गमिष्याम्यहम्।

वासव0 - (एक ओर को) अरी भोली, यह वसन्तक है। तू इसकी टेढ़ी बातों को नहीं समझती। (प्रकट में) आर्यपुत्र, मेरे तो इस चित्र को देखते हुए सिर में पीड़ा हो गई है। मैं जा रही हूँ। (प्रस्थान करती है)।

राजा - (पटान्तेन गृहीत्वा) देवि,

प्रसीदेति ब्रूयामिदमसति कोपे न घटते
करिष्याम्येवं नो पुनरिति भवेदभ्युपगमः।

न मे दोषोऽस्तीति त्वमिदमपि च ज्ञास्यसि मृषा
किमेतस्मिन्वक्तुं क्षममिति न वेद्मि प्रियतमे।।20।।

राजा - (आँचल पकड़ कर) देवी,

यदि 'प्रसन्न होओ' यह कहूँ तो यह कोप न होने पर ठीक नहीं बैठता; यदि 'फिर ऐसा नहीं करूँगा' यह कहूँ तो (दोष की) स्वीकृति हो जायेगी; यदि 'मेरा दोष नहीं है' यह कहूँ तो तुम इसे भी झूठ समझोगी, प्रियतमे, इस परिस्थिति में क्या कहना उचित है, मैं यह नहीं समझ पा रहा ।।20।।

वासव0 - (सविनयं पटान्तमाकर्षन्ती) आर्यपुत्र, मान्यथा सम्भावय। सत्यमेव मां शीर्षवेदना बाधते। तद्गमिष्यामि।

(उभे निष्क्रान्ते)

वासव0 - (विनयपूर्वक आँचल को खींचते हुये) आर्यपुत्र, और कुछ न समझिये। सचमुच मुझे सिर की पीड़ा सता रही है। इसलिये जा रही हूँ।

(दोनों चली जाती हैं)

विदूषकः - (पार्श्वण्यवलोक्य) भोः, दिष्ट्या वर्धसे। क्षेमेणास्माकमतिक्रान्ताऽकालवातावली।

विदूषक - (चारों ओर देखकर) अरे, तुम्हारा बड़ा सौभाग्य है। यह अकाल की आँधी हमारे क्षेमपूर्वक बीत गई।

राजा - धिङ् मूर्ख, कृतं परितोषेण। यान्त्याऽऽभिजान्यान्निगूढो न लक्षितस्त्वया देव्याः कोपानुबन्धः।

भ्रूभङ्गे सहसोद्गतेऽपि वदनं नीतं परां नम्रता-
मीषन्मां प्रति भेदकारि हसितं नोक्तं वचो निष्ठुरम्।
अन्तर्बाष्पजडीकृतं प्रभुतया चक्षुर्न विस्फारितं
कोपश्च प्रकटीकृतो दयितया मुक्तश्च न प्रश्रयः।।21।।

राजा - छिः ! मूर्ख, सन्तोष से बस करो। जाती हुई देवी के भद्रता से छिपाये गये कोप के प्रवाह को तूने देखा नहीं।

अकस्मात् भ्रूकुटि चढ़ जाने पर भी मुख बहुत नीचा कर लिया; मेरे प्रति कुछ भेद-भरा मन्द हास किया; कोई निष्ठुर वचन नहीं कहा; आत्मवशिता के कारण अन्दर भरे आँसुओं से जड़ की हुई आँखें (मेरी ओर) नहीं निकालीं। प्रिया ने अपना कोप तो प्रकट कर दिया, लेकिन विनय नहीं छोड़ा।।21।।

तदेहि। देवीमेव प्रसादयितुं गच्छावः।(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)इति कदलीगृहो नाम द्वितीयोऽङ्कः।

5.4 सारांश

सागरिका के मदनावस्था के प्रधान वर्णन से सम्बन्धित इस द्वितीय अंक के अध्ययन से आपने जाना कि राजा के प्रति अनुरक्त सागरिका अपनी उत्कण्ठा मिटाने के लिये कदली गृह में बैठकर उसका चित्र बनाती है और सखी सुसंगता के पूछने पर रहस्य छिपाती है । परन्तु सुसंगता रहस्य को ताड लेती है और उस चित्र फलक में सागरिका का चित्र बनादेती है । इस पर सागरिका सुसंगता से कुपित हो जाती है, लेकिन सुसंगता के आग्रहपूर्वक पूछने पर अपनी सब व्यथा बतला देती है । पिंजरें में बन्द सारिका उनके इस वार्तालाप को सुन लेती है । इसी बीच अश्वशाला से बन्धन तुडा कर छूटा

हुआ वानर अन्तःपुर में भगदड मचा देता है। वानर को कदलीगृह की ओर आता देखकर सागरिका और सुसंगता घबराहट में सारिका के पिजरे ओर चित्रफलक को कदलीगृह में छोड कर तमाल वीथि में छिप जाती है। वानर पिंजरे का द्वार खोल देता है और सारिका उडकर बकुल के वृक्ष पर बैठकर सागरिका और सुसंगता के मध्य हुये विश्रब्ध आलाप को दुहराने लगती है। श्रीखण्डदास धार्मिक से सीखे हुये दोहद के प्रभाव से अकाल पुश्पित नवमालिका को देखने केलिये मकरन्द उद्यान में जातेहुये राजा और विदूशक सारिका के अलाप को सुन लेते है और सारिका के पीछे पीछे कदलीगृह में पहुच जाते है औरवहॉ सागरिका की काम दशा को सूचित करने वाले कमलिनी पत्रों के शयन, मृणाल हार और चित्रपट को देखता है।

5.5 शब्दावली

1. प्रसीदेति . प्रसन्नता हो
2. भ्रूभङ्गे-आखें टेढी करने पर
3. प्रभुतया - विश्वास पूर्वक

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क - उत्तर इकाई में ही देखें।

ख - उत्तर इकाई में ही देखें।

5.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

1. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. रत्नावली हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. रत्नावली के द्वितीय अंक का सारांश अपने शब्दों में लिखिए
2. रत्नावली के द्वितीय अंक का साहित्यिक वैशिष्टय अपने शब्दों में लिखिए